जीवन रहस्य एक आत्म कथा

बेपरवाह घायल परिन्दा

मनोज

विषय सुचि

भुमिका

ओ३म् बण्महाँ२अ्असि सूर्य बड़ा दित्य महाँ२अ्असि| महस्ते सतो महिमा पनस्यतेअ्द्धा देव महाँ२अ्असि||

परमेश्वर जो आप महान सर्वशक्तिमान सूर्य चरा-चर जगत के प्रकाश पुन्ज अन्तर्यामी ईश्वर! जिस कारण आप महान सत्य विराट महत्त्वादि गुण युक्त अविनाशीस्वरुप है, जिससे अनन्त ज्ञान विज्ञान ब्रह्मज्ञान युक्त सबसे बड़े पुज्य हो, सत्य स्वरुप महान अजेय सर्वज्ञ मान कर आपकी महिमा का जो लोगों के द्वारा स्तुती किये जाते हो, हे दिव्य गुण कर्म स्वभाव युक्त परम प्रतापी परमेश्वर जिससे आप सर्वाधिक प्रसिद्ध महान सर्वव्यापक हैं इसलिये आप ही हमारे लिये उपासना के परम योग्य है||

ओ३म् ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्| तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्|| ओ३म् कुर्वन्नेवेह कर्माणि जीजिविषेच्छतँ समाः| एवं त्वयि नान्यथेतोअ्स्ति न कर्म लिप्यते नरे||

जीवन रहस्य एक आत्म कथा यह एक ऐसे व्यक्ति कि आत्म कथा है जो ना पूर्ण रुपेण जीन्दा ही है ना हि पूर्ण रूपेण मरा ही है अर्थात एक ऐसा व्यक्त जो बिमार है या अस्वस्थ है| उसकी बिमारी उसे ज्ञात नही है वह अन्जाने में ही जीवन को जी रहा है कुछ समय के उपरान्त उसे अपने असाध्य रोग का भी ज्ञान होता है| जैसे जिवन में अगले पल क्या होगा? कुछ निश्चित नहीं है| कब मृत्यु का बुलावा आ जाये कब जीवन में कौन सा? महान ऐश्वर्य मिल जाये यह कौन जानता है? यह दम घोट जीन्दगी को जीने वाला ऐसा मानव है, जिसको कुछ भी ज्ञात नहीं है| उसका जीवन साक्षात मृत्यु का जीवन है, अर्थात जो मृत्यु को जी रहा है लोग जीवन को जीते है वह मृत्यु को जीता है|

सर्वेषामेव दानानां ब्रह्मदानं विशिष्यते।

वार्यन्नगोमहीवासस्तिलकाञ्चनसर्पिषाम्।। मनु०।।

संसार में जितने दान हैं अर्थात् जल, अन्न, गौ, पृथिवी, वस्त्र, तिल, सुवर्ण और घृतादि इन सब दानों से वेदविद्या का दान अतिश्रेष्ठ है। इसलिये जितना बन सके उतना प्रयत्न तन, मन, धन से विद्या की वृद्धि में किया करें। जिस देश में यथायोग्य ब्रह्मचर्य विद्या और वेदोक्त धर्म का प्रचार होता है वही देश सौभाग्यवान् होता है।

जीवन एक ख्वाब दर्द का, एकान्त नरबस टिस सिसकियों से भरा मार्मिक बेदना का स्पन्दन, अथाह समन्दर और यातनाओ का सुन्दर स्वप्न महल, घुटन का अनचाहा अहसास बेवसी का ताण्डव करता भुखा दानव मानव रुप भेड़यों में, मनुष्य असहाय क्योंकि मनुष्य के पास जो भी है वह कम ही है उसके अन्दर सिर्फ जीने की ख्वाइस का सागर ही नही है, यद्पी मरने के लिये विशाल अंतरिक्ष भी है। यह जीवन अद्भुत रहस्य का आकाश जैसा है। भोग विलास के लिये सभी कालिप्निक रेत का महल और सड़ने गलने कि हाड़ मान्स कि कंकाल रुपी शरीर जिस में हर तरफ भयंकर बिमारियों का अंकुरण हो रहा है । यह सब देख कर सिवाय आश्चर्य और अलौकिक अनुभुतियों के अभुतपुर्व अनुकरणिय आनन्द की अनुकम्पा के धन्यवाद की लालसा सायद वह इस को स्विकार करें इसमें भी स्वयं को संका है क्योकि वह महान न्याय कर्ता दयालु अजर अमर निर्भय सर्वशक्तिमान सर्वज्ञ है।

ओ३म् यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः ।

ब्रह्मराजन्याभ्या शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय ।।

परमेश्वर कहता है कि (यथा) जैसे मैं (जनेभ्यः) सब मनुष्यों के लिये (इमाम्) इस (कल्याणीम्) कल्याण अर्थात् संसार और मुक्ति के सुख देनेहारी (वाचम्) ऋग्वेदादि चारों वेदों की वाणी का (आ वदानि) उपदेश करता हूं वैसे तुम भी किया करो।

जीवन रहस्य वास्तव में रहस्य ही है| यह जीवन का सितारा कहीं दूर आकाश के अंतिम छोर से आता है यदि वह किसी काल्पनिक या यथार्थ का लोक है तो वहां से आ रहा है| इस पृथ्वी पर जो थोड़ा समय उसे मिला और जीवन को बनाए रखने के लिए जो शरीर और आत्मा के साथ संघर्ष हुआ उसी संघर्ष की दर्द भरी रूह की बेबूझ पहेली की दास्ता है| जिसे व्यक्त करने का प्रयास इसमें किया गया है | वर्णित रूह की दास्ता अभिव्यक्ति और कल्पना की अलौकिक आकांक्षा से बाहर रहस्य की महिमा की तरफ संकेत एक छोटा सा इसारा मात्र है| जैसे किसी ने चाँद की तरफ देखकर

इसारे के लिए अपनी उंग्ली उठा दि हो, जैसे किसी ने सूर्य के प्रकाश को समझाने के लिए एक छोटा सा दिपक जला दिया हो, या फिर जैसे किसी कवी ने किसी की आखों को सागर के समान उपमा दे दिया हो, या फिर जैसे किसी ने पत्थल में परमात्मा को देख लिया हो, ऐसा ही कुछ यहां पर किसी व्यक्ति के जीवन से प्रकट हो रहा है|

जिवन का कौन सा पल जीवन का आखिरी पल बन जाए जीवन का भरोषा नहीं है, मृत्यु पर अधिक भरोषा उसका बढ़ता जा रहा है| यह मै नही जीवन का अनुभव कहता है| जो जीवन ब्रह्माण्ड को लांघ कर समन्दर, रेगिस्तान, मरुस्थल, ग्रह, नक्षत्र , अन्तरिक्ष , आकाश , पृथ्वी , पर्वत, पठार सारे चिन्तन के रस को निचोण कर जो जीवन बना है| और अदृश्य रूप से सब में समा कर जो सब कि चेतना बन कर धड़क रहा हा है| जीवन आखिर क्या है? एक दर्द भरी दास्त ा एक अनचाही रूह की प्यास या गमगिन दारु की बोतल है या एक सुन्दर अप्सरा है| या यह केवल इन सब का मिला जुला रूप जैसे इन सब का मात्र संमोहन एक खतरनाक आकर्षण एक दुःख भरा स्वप्न है | जिसे जितना ही पिता या जिता गया उतना ही इसका नसा आकर्षण खत्म होता गया, और वह घड़ी आ गई जब जीवन का संमोहन छुट गया | बचा जीव पुनः उसी आकाश में विलिन हो गया जहां से आया था | एक स्वप्न जिसमें यथार्थ का श्रम जिस घटना ने नायक के सम्पूर्ण जीवन को एक नई दिशा दे दिया या युं कहें जो मृत्यु में डुब ही चुका था वह जीवन रस का स्वाद चखने को मजबुर कर दिया गया यह उसकी विवशता नहीं है| यद्यपि इसे वह अलौकिक आनन्द की अनुकम्पा कहता है| एक आदमी के जीवन कि कुछ ऐसी घटनाएँ घटती हैं जो कभि एक खतरनाक डकैत रहता है| आगे चल कर वह एक महान कवी बनता है और दुनिया को जीने के लिए एक नए मार्ग को देता है| जो परम भक्ती के मार्ग के रूप में जाना जाता है|उन्हें कौन नही जानता? इस मृत्यु लोक में महान कवी बाल्मिकी की बात यहाँ कि जा रही है, या कर रहा हुं| जिन्होंने रामायण जैसे संस्कृत के महा काव्य को रच कर संसार को एक अद्वितिय अद्भुत ज्ञान का कोश दिया है| जिसके लिये यह संसार हमेसा उनका यश गाता रहेगा| ऐसा हि कुछ हमारे नायक के साथ होता है| वह एक श्रेष्ठ कवी तो नहीं बनता है| लेकिन वह एक मानव बनने का प्रयास करता है | तो इस तरह से यह कहानी या आत्म कथा एक मानव बनने की कथा है| यह कह सकते है| एक साधारण सा व्यक्ति एक महामानव कैसे बनता है? यह मानव पशु से मनुष्य बनने की यात्रा का नाम है| जैसे समय और परिस्थिती को झेलते हुये जब मनुष्य टुट जाता है| बेसहारा होकर असहाय इस खतरनाक जानवरों से भरे संसार में और तब उसमें एक नया जुनुन, जीने के लिए एक नई आशा की किरण का एक नया सबेरा जीवन के एक नये अद्भुत अतुलनिय ऐश्वर्य के प्रकाश के साथ अद्वितिय नव मार्ग का आर्भिभाव होता है| जो घटनाए छोटी- छोटी कड़ियों के रुप में आकर एक महान जीवन संग्रह का रूप ले कर नायक की जीवन रेखा बन जाती है| यह मार्ग बहुत सचेत सावधान होकर चलने के लिए बाध्य करता है|

जिसके लिये चुनौतीयों को पूर्ण रूपेड़ स्विकार कर के आगे एक- एक कदम बढ़ते हुए चलना है फुक- फुक कर पैर रखना है| जिस प्रकार से एक योद्धा संग्राम युद्ध में विरता और साहस भर कर खड़ा होता है| लड़ने के लिये , ठिक उसी प्रकार से, लेकिन जो हमारा नायक है| वह बिना किसी तैयारी के जीवन युद्ध के संग्राम में लड़ने के लिये उपस्थित होता है| क्योकि यह एक वास्तविक जिवन कि साक्षात तस्बिर है| यह किसी फिल्मी जीवन की तरह नहीं है| यह जीवन का नग्न सत्य है| क्योंकि जिवन किसी को तैयार होने का मौका नहीं देता है, यदि कहें की जीवन तैयार होने का मौका देता है तो फिर आज भी लोग इस संसार में मरते हुए क्यों दिखाई देते है? इसका मतलब यहीं है कि सारी तैयारी मरने के लिये कि जाती है कि हम सब आराम से मरे, इसलिये हम सब तैयारी किसी विषय का अध्यन करते है क्योंकि जीने के लिये किसी तैयारी कि आवश्यक्ता नहीं है| जिस मार्ग पर थोड़ा सी आसावधानी या लापरवाही जीवन को हमेंसा के लिये समाप्त करने के लिये पर्याप्त है| जीवन जीने वाले दो प्रकार के होते है | एक तो वह जो सभी सुविधाओं से समपन्न हो कर जीवन को जीते है जो काफी सम्पन्न हैं| लेकिन जिनकी संख्या कम है लेकिन जो संसार के अधिकांस भागों पर अधिकार करते है जिन्हे हम सब सबसे श्रेष्ठ कहते है| जो सबसे अधिक भोग विलास का उपयोग करते हैं| दूसरे वह है जो अभी पूर्ण सुख सुबिधा सम्पन्न नहीं है जो अभी स्वयं को सुख सुविधा सम्पन्न करने के लिये संघर्ष रत है| जिनकी संख्या सर्वाधिक है| यह सारे दास के समान है यह दोनो दो प्रकार के मनुष्य है एक तिसरे प्रकार के मनुष्य होते है जिसमें हमारा नायक आता है क्योकि उसको अपने जन्म के साथ ही अपनो के द्वारा संघर्ष करना पड़ता है| अपने जीने के लिए इसलिये मै कहता हुं कि हमारा नायक किसी प्रकार के बिना तैयारी के जीवन संग्राम में उपस्थित होता है|

ओ३म् उत त्वः पश्यन्न ददर्श वाचमुत त्वः शृण्वन्न शृणोत्येनाम् ।

उतो त्वस्मै तन्वं१ वि सस्रे जायेव पत्य उशती सुवासाः ।।

– ऋ मं० १०। सू० ७१। मं० ४।।

जो अविद्वान् हैं वे सुनते हुए नहीं सुनते, देखते हुए नहीं देखते, बोलते हुए नहीं बोलते । अर्थात् अविद्वान् लोग इस विद्या वाणी के रहस्य को नहीं जान सकते किन्तु जो शब्द अर्थ और सम्बन्ध का जानने वाला है उस के लिये विद्या-जैसे सुन्दर वस्त्र आभूषण धारण करती अपने पति की कामना करती हुई स्त्री अपना शरीर और स्वरूप का प्रकाश पति के सामने करती है वैसे विद्या विद्वान् के लिये अपने स्वरूप का प्रकाश करती है, अविद्वानों के लिये नहीं।

यह आत्म कथा वास्तव में एक यात्रा वृतान्त भी है क्योंकि नायक एक जगह रह कर जीवन

व्यतित नहीं कर पाता है समय और परिस्थिती के साथ उसे निरन्तर सफर पर रखती है| जिसमें वह जो अच्छा बुरा अनुभव करता है उस सब का संकलन भी है| नायक किसी एक समाज विषेस या जाती विषेस नहीं है यह हर तरह के व्यक्तियों के साथ रहा है| कुछ तो बहुत गरिब है कुछ बहुत अमिर है कुछ इन दोनों के मध्य है| जिसकी यह आत्म कथा है वह भी एक मध्य श्रेणी के मनुष्यों के मध्य से आता है| लेकिन इसे हर तरह के व्यक्तियों के साथ कुछ समय बिताने का समय मिलता है| इसमें पारिवारिक सामाजिक सांसारिक और आत्मिक, शारिरीक सभी प्रकार के जीवन का संग्रह है| इसमें जीवन के एक ऐसे पक्ष पर ध्यान को आकर्षित किया गया है जो प्रायः देखने में नही आते है | ऐसे व्यक्तियों के जीवन पर प्रकश डाला गया जो हमेशा इस संसार में हासियें पर रहते है| जैसे वह लड़का जो समय से पहले घर से बाहर रहने के लिए विवस रहता जबकी प्रायः उस उम्र के लड़के घर पर रह कर शिक्षा को ग्रहण करते हैं और माँ बाप के साथ रह कर उनके लाड़ प्यार का उपभोग करते है| जैसा कि मंत्र कहता है।

ओ३म् जातवेदसे सुनवाम सोम मरातीयतो नि दहाति वेदः।

स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यन्गिः।।

ऋगवेद. 1।7।7।1।।

व्याख्यान- (जात वेदः) परब्रह्मन् ! आप जात वेद हो = उत्पन्नमात्र सब जगत् को जानने वाले हो । वह जानता है कि यह जीवन क्या है? जब मानव जन्म लेता है तो अत्यन्त पिड़ा और दुःखों को प्राप्त करता है और जब मृत्यु को प्राप्त होता है तो उससे भी अधीक पिड़ा को प्राप्त करता है जीवन चारों तरफ से दुःखों से बुरी तरह से घीरा है इसलिए वह कभी जन्म नहीं लेता है ना ही वह मृत्यु को ही प्राप्त होता है फिर भी वह सर्वत्र प्राप्त हो। जो विद्वानों से ज्ञात, सबमें विद्यमान, जात अर्थात् प्रादुर्भूत अनन्त धनवान् वा अनन्त ज्ञानवान हो, इससे आपका नाम जातवेद है। उन आपके लिए (वयं सोमं सुनवास) जितने सोम प्रिय गुण विशिष्टादि हमारे पदार्थ हैं, वे सब आपके लिए ही हैं। सो आप हे कृपालो ! (अरातियतः) दुष्ट शत्रु, जो हम धर्मात्माओं का बिरोधी, उसके (वेदः) धनऐश्वर को (नि दहाति) नित्य दहन करो। जिससे वह दुष्टता को छोड़ कर श्रेष्ठता को स्विकार करें । सो (नः) आप हे हमको (दुर्गाणि विश्वा) सम्पूर्ण दुस्सह दुःखों से (पर्षदति) पार करके आप आप नित्य सुख को प्राप्त करो। (नावेव, सिन्धुम्) जैसे अति कठुन नदी वा समुद्र से पार होने के लिए नौका होती है, (दुरितात्यग्निः) वैसे ही हमको सब पापजनित अत्यन्त पीड़ाओं से पृथक् (= भीन्न) करके संसार में और मुक्ति में परमसुख को शीघ्र प्राप्त करो।

ओ३म् स वज्र भृद्दस्युहा भीम उग्रः सहस्रचेताः शतनिथ ऋभ्वा ।

चम्रीषो न शवसा पाञ्चजन्यो मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती।।

ऋ.1।7।10।2।।

हे दुष्ट नाशक परमात्मन् ! आप (वज्रभुत्) अच्छेद्य दुष्टों के छेदक सामर्थ्य से सर्वशिष्ट हितकारक दुष्टविनाशक जो न्याय, उसको धारण कर रहे हो, "प्राणो वा वज्रः" इत्यादि शतपथादि का प्रमाण है। अत एव (दस्युहा) दुष्ट पापी लोगों का हनन करने वाले हो। (भिमः) आपकी न्याय - आज्ञा को छोड़ने वालों पर भयंकर भय देने वाले हों। (सहस्रचेताः) सहस्रो विज्ञानादि गुणवाले आप ही हो। (शतनीथः) सैकड़ो असंख्यात पदार्थों की प्राप्ति कराने वाले हो। (ऋभ्वा) अत्यन्त विज्ञानादि प्रकाशवाले हो, और सबके प्रकाशक हो तथा महान और महान् बलवाले हो। (न चम्रीषः) किसी की चमू=सेना में वश को प्राप्त नहीं होते हो। (शवसा) स्वबल से आप (पाञ्चजन्यः) पांच प्राणों के जनक हो। (मरुत्वान्) सब प्रकार के वायुओं के आधार तथा चालक हो। सो आप (इन्द्रः) इन्द्र हमारी रक्षा के लिए प्रवृत हो, जिससे हमारा कि काम ना बिगड़े।

मनुष्य इस जीवन में दुःखों से बचने लिए क्या नहीं करता अर्थात वह सब कुछ करता है जो भी यहां पृथ्वी पर स्वयं को बचाए रखने के लिए संभव होता है अर्थात सभी प्रकार के भौतिक सामग्रीयों का संग्रह औषधियों का संग्रह और जब वह सब कुछ करके हार जाता है तो अन्त में परमात्मा के शरण में जाता है परमात्मा का भी संग्रह करता है लेकिन यह कहा संभव है इस नश्वर संसार में इसलिए मनुस्य बहाने बनाता है समय बिताने के लिए बहुत सारें रास्ते निकाल लेता है जिससे झुठ का जन्म होता है, और झुठ ही मृत्यु है जीवन सिर्फ दृष्य मय नहीं है वह अदृश्य भी है जब मनुष्य रगण-रगण कर मृत्यु को उपलब्ध होता है अर्थात जब जीवन के मोह में अत्यधीक लिप्त रहता है और जब मोह से मुक्त रहता है और हस – हस कर मृत्यु को ग्रहण करता है तो मरता नहीं है यद्यापि वह मुक्त मोक्ष को उपलब्ध होता है। लेकिन जब मनुष्य दुखों को झेलते – झेलते बुरी तरह से थक कर परास्थ हो कर बेबस हो कर मृत्यु को बेहोसी में वरण करता है तो उसे पुःन जन्म लेता है और जब होस में रह कर शरिर का त्याग करता है तो उसके साथ जीवन का भयानक और दुःख मय ज्ञान रुप अनुभव साथ रहता है जिससे पुनः शरिर धारण नहीं करता है जब बहुत अधीक समय में धिरें-धिरें भुल जाता है तो फिर आता है अनुभव रुपी ज्ञान को प्राप्त करने के लिए।

ओ३म् सा मा सत्योक्तिः परि पातु विश्वतो द्यावा च यत्र ततनन्नहानि च। विशवमन्यन्नि विशते यदेजति विश्वाहापो विशवाहोदेति सूर्यः।

ऋ.7।8।12।2।।

हे सर्वभिरक्षकेश्वर! (सा मा सत्योक्तिः) आपकि सत्य आज्ञा, जिसका हमने अनुष्ठान किया है, वह

(विश्वत:परि पातु) हमको सब संसार से सर्वथा पालन, और सब दुष्ट कामों से सदा पृथक् रक्खे, कि कभी हमको अधर्म करने की इच्छा भी न हो।(द्यावा च) और दिव्य सुख से सदा युक्त करके यथावत् हमारी रक्षा करें (यत्र) जिस दिव्य सृष्टि में (अहानि) सूर्यादि कों को दिवस आदि के निमित्त (ततनक्) आपने ही विस्तारे हैं। वहां भी हमारा सब उपद्रवों से रक्षण करो। (विश्वमन्यत्) आपसे अन्य= भिन्न विश्व अर्थात् सब जगत् जिस समय आपके सामर्थ्य से प्रलय में (निविशते) प्रवेश करता है= कार्य सब कारणात्मक होता है, उस समय में भी आप हमारी रक्षा करो। (यदेजति) जिस समय यह जगत् आपके सामर्थ्य से चलित होके उत्पन्न होता है, उस समय भी आप हमारी रक्षा करें। (विश्वाहापो विश्वाहा.) जो – जो विश्व का हन्ता = दु:ख देने वाला, उसको आप नष्ट कर देओ। क्योकि आपके सामर्थ्य से सब जगत् का उत्पत्ति, स्थित और प्रलय होता है। पके सामने कोई राक्षस=दुष्टजन क्या कर सकता है? क्योंकि आप सब जगत् में उदित = प्रकाशमान हो रहे हो। सूर्यवत् हमारे हृदय में कृपा करके प्रकाशित होओ। जिससे हमारी अविद्यान्धाकारता सब नष्ट हो।

ओ३म् देवो देवानामसि मित्रो अद्भुतो वसूनामसि चारुरध्वरे।

शर्मन्त्याम तव सप्रथस्तमेऽग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव।।

ऋ.1।6।32।3

व्याख्यान- हे मनुष्यो ! वह परमात्मा कैसा है कि हम उसकी स्तुति करें ? हे (अग्ने) परमेश्वर ! आप (देवो देवानामसि) देवों=परमविद्वानों के भी देव=परमविद्वान् हो तथा उनको परमआनन्द देने वाले हो, तथा (मित्रः अद्भुत परम) अत्यन्त आश्चर्यरुप मित्र सर्वसुखकारक सबके सखा हो। (वसुर्वसूनामसि) पृथिव्यादि वसुओं के भी वास कराने वाले तथा (अध्वरे) ज्ञानादि यज्ञ में (चारु:) अत्यन्त शोभायमान और ज्ञानादि ऐश्वर शोभा को देने वाले हो । हे परमात्मान् ! (सप्रथस्तमे सख्ये शर्मणि तव) आपके अतिविस्तीर्ण, आनन्दस्वरुप, सखाओं के कर्म में दु:ख न प्राप्त हो, और आपके अनुग्रह से हम लोगो परस्पर अप्रीतियुक्त कभी न हों।

ओ३म् मानो वधीरिन्द्र मा परा दा मा नः प्रिया भोजनानि प्र मोषीः।

आण्डा मा नो मघवञ्छक्र निर्भेन् मा नः पात्रा भेत्सहजानुषाणि।।

ऋ. 1।7।19।3।।

व्याख्यान- हे (इन्द्र) परमैश्वर्युक्तेश्वर ! (मा नो वधी:) हमारा वध मत कर अर्थात् अपने से अलग आप कभी मत गीरावै। (मा परा दा:) हमसे अलग आप कभी मत हो। (मा नः प्रिया भोजनानि प्रमोषी:) हमारे प्रिय भोगो को मत चोर, और मत चोरवावै। (आण्डा मा नः) हमारे गर्भो का विदारण

मत कर। हे (मघवन्) सर्वशक्तिमान् (शक्र) समर्थ ! हमारे पुत्रों का विदारण मत कर । (मा नः पात्रा) हमारे भोजनाद्यर्थ सुवर्णादि पात्रों को हमसे अलग मत कर।(सहजानुषाणि) जो-जो हमारे सहज अनुषक्त = स्वभाव स् अनुकूल मित्र है, उनको आप नष्ट मत करो। अर्थात् कृपा करके पूर्वोक्त सब पदार्थों की यथावत् रक्षा करो।

मनुष्य कैसा है उसको व्यक्त करने के लिये यह कहानी काफी मदद् करेगी किस प्रकार एक विशाल जानवर एक बहुत कमजोर तागे की रस्सी से आजीवन बंधा रहता है|

एक आदमी कहीं से गुजर रहा था, तभी उसने सड़क के किनारे बंधे हाथियों को देखा, और अचानक रुक गया. उसने देखा कि हाथियों के अगले पैर में एक रस्सी बंधी हुई है, उसे इस बात का बड़ा अचरज हुआ की हाथी जैसे विशालकाय जीव लोहे की जंजीरों की जगह बस एक छोटी सी रस्सी से बंधे हुए हैं!!! ये स्पष्ठ था कि हाथी जब चाहते तब अपने बंधन तोड़ कर कहीं भी जा सकते थे, पर किसी वजह से वो ऐसा नहीं कर रहे थे| उसने पास खड़े महावत से पूछा कि भला ये हाथी किस प्रकार इतनी शांति से खड़े हैं और भागने का प्रयास नही कर रहे हैं ? तब महावत ने कहा, ” इन हाथियों को छोटे पर से ही इन रस्सियों से बाँधा जाता है, उस समय इनके पास इतनी शक्ति नहीं होती की इस बंधन को तोड़ सकें| बार-बार प्रयास करने पर भी रस्सी ना तोड़ पाने के कारण उन्हें धीरे-धीरे यकीन होता जाता है कि वो इन रस्सियों नहीं तोड़ सकते, और बड़े होने पर भी उनका ये यकीन बना रहता है, इसलिए वो कभी इसे तोड़ने का प्रयास ही नहीं करते है। आदमी आश्चर्य में पड़ गया कि ये ताकतवर जानवर सिर्फ इसलिए अपना बंधन नहीं तोड़ सकते क्योंकि वो इस बात में यकीन करते हैं!!

इन हाथियों की तरह ही हममें से कितने लोग सिर्फ पहले मिली असफलता के कारण ये मान बैठते हैं कि अब हमसे ये काम हो ही नहीं सकता और अपनी ही बनायीं हुई मानसिक जंजीरों में जकड़े-जकड़े पूरा जीवन गुजार देते हैं। याद रखिये असफलता जीवन का एक हिस्सा है ,और निरंतर प्रयास करने से ही सफलता मिलती है. यदि आप भी ऐसे किसी बंधन में बंधें हैं जो आपको अपने सपने सच करने से रोक रहा है तो उसे तोड़ डालिए….. आप हाथी नहीं इंसान हैं।

संस्कार ही वह बंधन है कुछ कुरूप कूछ अच्छे होते है दोनों बन्धन ही है| अग्नि तेज का प्रतीक है, अग्नि एश्वर्य का प्रतिक है, अग्नि जीवन्तता का प्रतिक है | अग्नि मैं ही जीवन है , अग्नि ही सब सुखों का आधार है | अग्नि की सहायता से हम उदय होते सूर्य की भांति खिल जाते हैं , प्रसन्नचित रहते हैं | जीवन को धन एश्वर्य व प्रेम व्यवहार लाने के लिए अग्नि ऐसा करे | इस तथ्य को ऋग्वेद के ६-५२-५ मन्त्र में इस प्रकार स्पष्ट किया गया है : –

ओ३म् विश्वदानीं सुमनस: स्याम पश्येम नु सुर्यमुच्चरनतम | तथा करद वसुपतिर्वसुना देवां ओहानो

$वसागमिष्ठ: || ऋग.६-५२-५ ||

शब्दार्थ : – (विश्वदानीम) सदा (सुमनस:) सुंदर व पवित्र ह्रदय वाले प्रसन्नचित (स्याम) होवें (न) निश्चय से (उच्चरंतम) उदय होते हुए (सूर्यम) सूर्य को (पश्येम) देखें (वसूनाम) घनों का (वसुपति:) धनपति , अग्नि (देवां) देवों को (ओहान:) यहाँ लाता हुआ (अवसा) संरक्षण के साथ (आगमिष्ठा:) प्रेमपूर्वक आने वाला (तथा) वैसा (करत) करें |

भावार्थ :- हम सदा प्रसन्नचित रहते हए उदय होते सूर्य को देखें | जो धनादि का महास्वामी है, जो देवों को लाने वाला है तथा जो प्रेम पूर्वक आने वाला है , वह अग्नि हमारे लिए ऐसा करे | यह मन्त्र मानव कल्याण के लिए मानव के हित के लिए परमपिता परमात्मा से दो प्रार्थनाएं करने के लिए प्रेरित करता है : –

१. हम प्रसन्नचित हों

२. हम दीर्घायु हों

मन्त्र कहता है की हम उदारचित ,प्रसन्नचित , पवित्र ह्रदय वाले तथा सुन्दर मन वाले हों | मन की सर्वोतम स्थिति हार्दिक प्रसन्नता को पाना ही माना गया है | यह मन्त्र इस प्रसन्नता को प्राप्त करने के लिए ही हमें प्रेरित करता है | मन की प्रसन्नता से ही मानव की सर्व इन्द्रियों में स्फूर्ति, शक्ति व ऊर्जा आती है |

मन प्रसन्न है तो वह किसी की भी सहायता के लिए प्रेरित करता है | मन प्रसन्न है तो हम अत्यंत उत्साहित हो कर इसे असाध्य कार्य को भी संपन्न करने के लिए जुट सकते है, जो हम साधारण अवस्था में करने का सोच भी नहीं सकते | हम दुरूह कार्यों को सम्पन्न करने के लिए भी अपना हाथ बढ़ा देते हैं | यह मन के प्रसन्नचित होने का ही परिणाम होता है | असाध्य कार्य को करने की भी शक्ति हमारे हाथ में आ जाती है | अत्यंत स्फूर्ति हमारे में आती है | यह स्फूर्ति ही हमारे में नयी ऊर्जा को पैदा करती है | इस ऊर्जा को पा कर हम स्वयं को धन्य मानते हुये साहस से भरपूर मन से ऐसे असाध्य कार्य भी संपन्न कर देते हैं , जिन्हें हम ने कभी अपने जीवन में कर पाने की क्षमता भी अपने अंदर अनुभव नहीं की थी |

मन को कभी भी अप्रसन्नता की स्थिति में नहीं आने देना चाहिए | मन की अप्रसन्नता से मानव में निराशा की अवस्था आ जाती है | वह हताश हो जाता है | यह निराशा व हताशा ही पराजय की सूचक होती है | यही कारण है की निराश व हताश व्यक्ति जिस कार्य को भी अपने हाथ में लेता है, उसे संपन्न नहीं कर पाता | जब बार बार असफल हो जाता है तो अनेक बार ऐसी

अवस्था आती है कि वह स्वयं अपने प्राणांत तक भी करने को तत्पर हो जाता है | अत: हमें ऐसे कार्य करने चाहिए, ऐसे प्रयास करने चाहिए, ऐसा पुरुषार्थ करना चाहिए व ऐसा उपाय करना चाहिए , जिससे मन की प्रसन्नता में निरंतर अभिवृद्धि होती रहे |

मन की पवित्रता के लिए कुछ उपाय हमारे ऋषियों ने बताये हैं , जो इस प्रकार हैं : –

१.हृदय शुद्ध हो : –

हम अपने ह्रदय को सदा शुद्ध रखें | शुद्ध हृदय ही मन को प्रसन्नता की ओर ला सकता है | जब हम किसी प्रकार का छल , कपट दुराचार ,आदि का व्यवहार नहीं करेंगे तो हमें किसी से भी कोई भय नहीं होगा | कटु सत्य को भी किसी के सामने रखने में भय नहीं अनुभव करेंगे तो निश्चय ही हमारी प्रसन्नता में वृद्धि होगी |

२. पवित्र विचारों से भरपूर मन : –

जब हम छल कपट से दूर रहते हैं तो हमारा मन पवित्र हो जाता है | पवित्र मन में सदा पवित्र विचार ही आते है | अपवित्रता के लिए तो इस में स्थान ही नहीं होता | पवित्रता हमें किसी से भय को भी नहीं आने देती | बस यह ही प्रसन्नता का रहस्य है | अत: चित की प्रसन्नता के लिए पवित्र विचारों से युक्त होना भी आवश्यक है |

३. सद्भावना से भरपूर मन : – हमारे मन में सद्भावना भी भरपूर होनी चाहिए | जब हम किसी के कष्ट में उसकी सहायता करते है , सहयोग करते हैं अथवा विचारों से सद्भाव प्रकट करते हैं तो उसके कष्टों में कुछ कमीं आती है | जिसके कष्ट हमारे दो शब्दों से दूर हो जावेंगे तो वह निश्चित ही हमें शुभ आशीष देगा | वह हमारे गुणों की चर्चा भी अनेक लोगों के पास करेगा | लोग हमें सत्कार देने लगेंगे | इससे भी हमारी चित की प्रसन्नता अपार हो जाती है | अत: चित की प्रसन्नता के लिए सद्भावना भी एक आवश्यक तत्व है | इस प्रकार जब हम अपने मन में पवित्र विचारों को स्थान देंगे , सद्भावना पैदा करेंगे तथा हृदय को शुद्ध रखेंगे तो हम विश्वदानिम अर्थात प्रत्येक अवस्था में प्रसन्नचित रहने वाले बन जावेंगे | हमारे प्राय: सब धर्म ग्रन्थ इस तथ्य का ही तो गुणगान करते है |

गीता के अध्याय २ श्लोक संख्या ६४ व ६५ में भी इस तथ्य पर ही चर्चा करते हुए प्रश्न किया है कि मनुष्य प्रसन्नचित कब रहता है ?

इस प्रश्न का गीता ने ही उतर दिया है कि मनुष्य प्रसन्नचित तब रहता है जब उसका मन राग , द्वेष रहित हो कर इन्द्रिय संयम कर लेता है | फिर प्रश्न किया गया है कि प्रसन्नचित होने के लाभ क्या हैं ?

इसका भी उतर गीता ने दिया है कि प्रसन्नचित होने से सब दु:खों का विनाश हो कर बुद्धि स्थिर हो जाती है | अत: जो व्यक्ति प्रसन्नचित है उसके सारे दु:ख व सारे क्लेश दूर हो जाते हैं | जब किसी प्रकार का कष्ट ही नहीं है तो बुद्धि तो स्वयमेव ही स्थिरता को प्राप्त कराती है |

जब मन प्रसन्नचित हो गया तो मन्त्र की जो दूसरी बात पर भी विचार करना सरल हो जाता है | मन्त्र में जो दूसरी प्रार्थना प्रभु से की गयी है , वह है दीर्घायु | इस प्रार्थना के अंतर्गत परमपिता से हम मांग रहे हैं कि हे प्रभु ! हम दीर्घायु हों, हमारी इन्द्रियाँ हृष्ट – पुष्ट हों ताकि हम आजीवन सूर्योदय की अवस्था को देख सकें | सूर्योदय की अवस्था उतम अवस्था का प्रतीक है | उगता सूर्य अंत:करण को उमंगों से भर देता है | सांसारिक सुख की प्राप्ति की अभिलाषा उगता सूर्य ही पैदा करता है | यदि हम स्वस्थ हैं तो सब प्रकार के सुखों के हम स्वामी हैं | जीव को सुखमय बनाने के लिए प्रन्नचित होना तथा स्वस्थ होना आवश्यक है | अत: हम एसा पुरुषार्थ करें कि हमें उत्तम स्वास्थ्य व प्रसन्नचित जीवन मिले | जिसके लिये पूरुषार्थ की परम आवश्यक्ता पड़ती है| जब हर क्षण जागरुकता की एक ऐसी धारदार तलवार एक पतले तागे से उस व्यक्ति के जिवन पर लटक रही है यह कब किस पल गिर जाये एक हवा के हल्के से झोके से वह टकरा कर गिर सकती है उसके वस में कहां है? कि वह हवा के झोके को रोक पाए हां यह जरुर है कि उस तलवार तक हवा को पहुचने से रोक सके, लेकिन यह कैसे संभव है? कि कोई मनुष्य इस पृथ्वी पर बिना हवा के जी सके| एक तरफ तलवार का भय दुसरा हवा का भय तिसरा हवा के बिना जीवन कि कल्पना करना असंभव है| यह एक ऐसे मानव जीवन की कथा है जो हर समय भयंकर संकट और मुसिबत परेसानियों से घिरा रहता है फिर भी वह सब को मात दे कर जीवन को जीता है और अमृत जैसे रस का पान करता है| यह वह जानता कहां है? कि उसका अगला पल उसके लिये कौन सि? महान परेशानी भयानक रूप संकट लेकर आयेगा, और ऐसी संभावना में जीवन का निर्वाह करना कितना कठिन और अनोखा रोमांचित करने वाला होगा इसकी कल्पना करना भी संभव नही है| क्योंकि कल्पना हम उसकी कर सकते है| जिसको हमने अपने जीवन में कभी अनुभव किया हो, जिसका हम सबने कभी अपने जीवन में अनुभव नही किया है उसकी कल्पना भी नहीं कर सकते है| मान लिजिये आप समन्दर के अन्दर बिना हवा के जिन्दा रह सकते है, मनुष्य के लिये यह संभव नहीं है मछलिया फिर भी पानीवमें जीवीत रहती हैं| जिस तरह बिना पनी के मछलियों का जीवन होता है उसी प्रकार का जीवन हमारे नायक का है|

देश के प्रसिद्द उद्योगपति , कर्मयोगी एवं देशभक्त स्वर्गीय घनश्यामदास बिड़ला ने अत्यंत मार्मिक पत्र अपने पुत्र श्री वसंतकुमार बिड़ला को अब से ७८ वर्ष पूर्व लिखा था जो आज भी प्रासंगिक हैं और देश के बड़े बड़े उद्योगपतियों एवं नौकरशाहों के लिए प्रेरणास्रोत्र हैं|

यह जो लिखता हूँ उसे बड़े होकर और बूढ़े होकर भी पढना. अपने अनुभव की बात करता हूँ. संसार में मनुष्य जन्म दुर्लभ हैं, यह सच बात हैं| और मनुष्य जन्म पाकर जिसने शारीर का दुरुपयोग किया, वह पशु हैं| तुम्हारे पास धन हैं, तंदरुस्ती हैं, अच्छे साधन हैं| उनका सेवा के लिए उपयोग किया तब तो साधन सफल हैं| अन्यथा वे शैतान के औजार हैं| तुम इतनी बातों का ध्यान रखना कि

धन का मौज- शौक में कभी उपयोग न करना| धन सदा रहेगा भी नहीं, इसलिए जितने दिन पास में हैं, उसका उपयोग सेवा के लिए करो| अपने ऊपर कम से कम खर्च करो, बाकि दुखियों का दुःख दूर करने में व्यय करो| धन शक्ति हैं, इस शक्ति के नशे में किसी के साथ अन्याय हो जाना संभव हैं, इसका ध्यान रखो| अपनी संतान के लिए यही उपदेश छोड़कर जाओ| यदि बच्चे ऐश- आराम वाले होंगे तो पाप करेंगे और हमारे व्यापार को चौपट करेंगे| ऐसे नालायकों को धन कभी न देना| उनके हाथ में जाये इससे पहले ही गरीबों में बात देना| तुम यही समझना की तुम इस धन के ट्रस्टी हो| तुम्हारा धन जनता की धरोहर हैं| तुम उसे अपने स्वार्थ के लिए उपयोग नहीं कर सकते| भगवान को कभी न भूलना वह अच्छी बुद्धि देता हैं| इन्द्रियों पर काबू रखना, वर्ना ये तुम्हें डूबा देंगी| नित्य नियम से व्यायाम करना| भोजन को दवा समझकर खाना, इसे स्वाद के वश होकर मत खाते रहना| यह जिवन कि शिक्षा एक बाप अपने अमिर बेटे को देता है| और अमिर व्यक्ती कैसा हो?

ओ३म् भूरिदा भूरि देहिनो, मा दभ्रं भूर्या भर। भूरि घेदिन्द्र दित्ससि। ओ३म् भूरिदा त्यसि श्रुतः पुरूत्रा शूर वृत्रहन्। आ नो भजस्व राधसि।।´

ऋग्वेद (4/32/20-21) हे लक्ष्मीपते ! आप दानी हैं, साधारण दानदाता ही नहीं बहुत बड़े दानी हैं।

आप्तजनों से सुना है कि संसार भर से निराश होकर जो याचक आपसे प्रार्थना करता है, उसकी पुकार सुनकर उसे आप आर्थिक कष्टों से मुक्त कर देते है। उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।। क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गं पथस्तत्कवयो वदन्ति।।14।। -कठोपनिषद् (कृष्ण यजुर्वेद)

अर्थ : (हे मनुष्यों) उठो, जागो (सचेत हो जाओ)। श्रेष्ठ (ज्ञानी) पुरुषों को प्राप्त (उनके पास जा) करके ज्ञानप्राप्त करो। त्रिकालदर्शी (ज्ञानी पुरुष) उस पथ (तत्वज्ञान के मार्ग) को छुरे की तीक्ष्ण (लांघने में कठिन) धारा के (के सदृश) दुर्गम (घोर कठिन) कहते हैं।

प्रथमेनार्जिता विद्या द्वितीयेनार्जितं धनं। तृतीयेनार्जितः कीर्तिः चतुर्थे किं करिष्यति।।

अर्थ : जिसने प्रथम अर्थात ब्रह्मचर्य आश्रम में विद्या अर्जित नहीं की, द्वितीय अर्थात गृहस्थ आश्रम में धन अर्जित नहीं किया, तृतीय अर्थात वानप्रस्थ आश्रम में कीर्ति अर्जित नहीं की, वह चतुर्थ अर्थात संन्यास आश्रम में क्या करेगा?

।।विद्या मित्रं प्रवासेषु भार्या मित्रं गृहेषु च।रुग्णस्य चौषधं मित्रं धर्मो मित्रं मृतस्य च।।

अर्थात : प्रवास की मित्र विद्या, घर की मित्र पत्नी, मरीजों की मित्र औषधि और मृत्योपरांत मित्र धर्म ही होता है।

असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय। मृत्योर्मामृतं गमय।।

अर्थात : हे ईश्वर (हमको) असत्य से सत्य की ओर ले चलो। अंधकार से प्रकाश की ओर ले चलो। मृत्यु से अमरता की ओर ले चलो। उक्त प्रार्थना करते रहने से व्यक्ति के जीवन से अंधकार मिट जाता है। अर्थात नकारात्मक विचार हटकर सकारात्मक विचारों का जन्म होता है

सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै।।19।। (कठोपनिषद -कृष्ण यजुर्वेद)

अर्थात : परमेश्वर हम शिष्य और आचार्य दोनों की साथ-साथ रक्षा करें, हम दोनों को साथ-साथ विद्या के फल का भोग कराए, हम दोनों एकसाथ मिलकर विद्या प्राप्ति का सामर्थ्य प्राप्त करें, हम दोनों का पढ़ा हुआ तेजस्वी हो, हम दोनों परस्पर द्वेष न करें। उक्त तरह की भावना रखने वाले का मन निर्मल रहता है। निर्मल मन से निर्मल भविष्य का उदय होता है।

ओ३म मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्, मा स्वसारमुत स्वसा। सम्यञ्च: सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया।।2।। (अथर्ववेद 3.30.3)

अर्थात : भाई, भाई से द्वेष न करें, बहन, बहन से द्वेष न करें, समान गति से एक-दूसरे का आदर-सम्मान करते हुए परस्पर मिल-जुलकर कर्मों को करने वाले होकर अथवा एकमत से प्रत्येक कार्य करने वाले होकर भद्रभाव से परिपूर्ण होकर संभाषण करें। उक्त तरह की भावना रखने से कभी गृहकलय नहीं होता और संयुक्त परिवार में रहकर व्यक्ति शांतिमय जीवन जी कर सर्वांगिण उन्नती करता रहता।

ओ३म यथा द्यौश्च पृथिवी च न बिभीतो न रिष्यतः। एवा मे प्राण मा विभेः।।1।।- अथर्ववेद

अर्थ : जिस प्रकार आकाश एवं पृथ्वी न भयग्रस्त होते हैं और न इनका नाश होता है, उसी प्रकार हे मेरे प्राण! तुम भी भयमुक्त रहो। अर्थात व्यक्ति को कभी किसी भी प्रकार का भय नहीं पालना चाहिए। भय से जहां शारीरिक रोग उत्पन्न होते हैं वहीं मानसिक रोग भी जन्मते हैं। डरे हुए व्यक्ति का कभी किसी भी प्रकार का विकास नहीं होता। संयम के साथ निर्भिकता होना जरूरी है। डर सिर्फ ईश्वर का रखें।

अलसस्य कुतः विद्या अविद्यस्य कुतः धनम्। अधनस्य कुतः मित्रम् अमित्रस्य कुतः सुखम्।।

अर्थ : आलसी को विद्या कहां, अनपढ़ या मूर्ख को धन कहां, निर्धन को मित्र कहां और अमित्र को सुख कहां।

आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महान् रिपु:। नास्त्युद्यमसमो बन्धु: कृत्वा यं नावसीदति।।

अर्थात् : मनुष्यों के शरीर में रहने वाला आलस्य ही (उनका) सबसे बड़ा शत्रु होता है। परिश्रम जैसा दूसरा (हमारा) कोई अन्य मित्र नहीं होता,क्योंकि परिश्रम करने वाला कभी दुखी नहीं होता।

: ।।शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्।। -उपनिषद्

अर्थ : शरीर ही सभी धर्मों (कर्तव्यों) को पूरा करने का साधन है।

अर्थात : शरीर को सेहतमंद बनाए रखना जरूरी है। इसी के होने से सभी का होना है अत: शरीर की रक्षा और उसे निरोगी रखना मनुष्य का सर्वप्रथम कर्तव्य है। पहला सुख निरोगी काया।

ओ३म ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत। (सामवेद 11.5.19)

अर्थ : ब्रह्मचर्य के तप से देवों ने मृत्यु पर विजय प्राप्त की।

अर्थात : मानसिक और शारीरिक शक्ति का संचय करके रखना जरूरी है। इस शक्ति के बल पर ही मनुष्य मृत्यु पर विजय प्राप्त कर सकता है। शक्तिहिन मनुष्य तो किसी भी कारण से मुत्यु को प्राप्त कर जाता है। ब्रह्मचर्य का अर्थ और इसके महत्व को समझना जरूरी है।

गुणानामन्तरं प्रायस्तज्ञो वेत्ति न चापरम्। मालतीमल्लिकाऽऽमोदं घ्राणं वेत्ति न लोचनम्।।

अर्थ : गुणों, विशेषताओं में अंतर प्रायः विशेषज्ञों, ज्ञानीजनों द्वारा ही जाना जाता है, दूसरों के द्वारा कदापि नहीं। जिस प्रकार चमेली की गंध नाक से ही जानी जा सकती है, आंख द्वारा कभी नहीं।

येषां न विद्या न तपो न दानं, ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः । ते मृत्युलोके भुवि भारभूता, मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति।।

अर्थ : जिसके पास विद्या, तप, ज्ञान, शील, गुण और धर्म में से कुछ नहीं वह मनुष्य ऐसा जीवन व्यतीत करते हैं जैसे एक मृग।

अर्थात : जिस मनुष्य ने किसी भी प्रकार से विद्या अध्ययन नहीं किया, न ही उसने व्रत और तप किया, थोड़ा बहुत अन्न-वस्त्र-धन या विद्या दान नहीं दिया, न उसमें किसी भी प्राकार का ज्ञान

है, न शील है, न गुण है और न धर्म है। ऐसे मनुष्य इस धरती पर भार होते हैं। मनुष्य रूप में होते हुए भी पशु के समान जीवन व्यतीत करते हैं।

सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम्। वृणते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव संपदः।।

अर्थ : अचानक (आवेश में आकर बिना सोचे-समझे) कोई कार्य नहीं करना चाहिए, कयोंकि विवेक शून्यता सबसे बड़ी विपत्तियों का घर होती है। (इसके विपरीत) जो व्यक्ति सोच-समझकर कार्य करता है, गुणों से आकृष्ट होने वाली मां लक्ष्मी स्वयं ही उसका चुनाव कर लेती है।

ओ३म् भुमिका समाप्त

१ जीवन और उसकी जुस्तजू

ओ३म् विश्वेषामदितिर्यज्ञियानां विश्वेषामतिथिर्मानुषाणाम्|
अग्निर्देवानामवअ्आवृणानाः सुमृडीको भवतु जातवेदाः||

हे सभा पते! आप सब पूजा सत्कार के योग्य विद्वानों के बिच में अखण्डित बुद्धि वाले सब मनुष्यों में पूजनिय रक्षा आदि को अच्छे प्रकार स्विकार करते हुये सुन्दर सुख देने वाली विद्या और योग के अभ्यास से प्रसिद्ध बुद्धि वाले तेजस्वी राजा के समान हूजिये||

यह उस समय कि बात है जब नायक तरुण था| तरुण अवस्था यौवन का आगमन कहेंगे जब दुनिया को बदलने का जोश अपने मन माफिक जीवन जीने के लिये दुनिया को अपने अनुकुल बनाने का अकल्पनिय जज्बा होता है| जो अभी ज्वान हो रहा है वह चाहता है कि सारी बिमारयों को समाज कुरीतियों को जो भयंकर नासुर बन कर समाज को अन्दर ही अन्दर बिमारयों की तरह से खोखला कर रही है| उनको समुल उनके जड़ समेत उनका निस्त नाबुत नष्ट कर दे और समाज को इनके प्रभाव से हमेशा के लिये मूक्त कर दे| ऐसा ही कुछ हमारा नायक अपने प्रारम्भ में करना चाहता था| जो एक छोटे से व्यापारी के घर में जन्म लिया था जिसका नाम बड़े प्रेम से उसे चाहने वालो ने आर्यन रखा |

आर्यन अर्थात जो आर्य से बना है जिसका मतलब एक श्रेष्ठ पुरुष आर्यन मतलब श्रेष्ठ व्यक्तियों का समुह, इस पृथ्वी की जो सबसे प्राचिन मानव जाती सबसे अधिक ज्ञान विज्ञान ब्रह्मज्ञान सम्पन्न थी उसे लोग आर्यन कहते है जो वेदों के कर्णधार कहे जाते है | जैसा कि यजुर्वेद का एक मंत्र तैतिस अध्याय का बयासी संख्या का है वह कुछ आर्यो के बारे में बोल रहा है|

ओ३म् यस्यायं विश्वअ्आर्यो दासः शेवधिपाअ्अरिः|

तिरश्चिदर्ये रुशमे पवीरवि तुभ्येत्सोअ्अज्यते रयिः||

अर्थातः- जिसके लिये यह समग्र भुमंडल विश्व ब्रह्माण्ड बनाया गया है| वह सब धर्म युक्त गुण कर्म स्वभाव वाले पुरुष आर्य के लिए है| और जो इसके सेवा कारी दास जिसको दस्यु कहते है अर्थात

जो आर्यो कि सेवा करने वाले लोग है उनके लिये है| यह सब आर्यन के समान एक मजबुत विशाल संगठन है, जो सभी प्रकार के धरोहर ज्ञान विज्ञान ब्रह्मज्ञान रूपी धनों का संरक्षक रूप है अर्थात् धर्मादि कार्यो में अथवा राज कर देने में व्यय करने वाले लोग है, और जो इसके विपरित कर्म करने वाले इनके शत्रु है, जो इनसे छुप कर निश्चित रूप से भयंकर और दन्डनिय कार्य करते है उनको जो नियन्त्रित रखने के लिय् पुरुषार्थ करते है| वह जो आर्यों के साथ दुष्ट स्वभाव के साथ हिन्सक व्यवहार का प्रयोग करते है उनके साथ जो श्रेष्ठ आर्य पुरुष है वह अपने धन मान सम्मान कि रक्षा के लिये शस्त्रों को प्राप्त करके अपने शत्रु पर उसका प्रयोग करके अपने लिए और अपनो के लिये पुरुषार्थ करता है उसको हर प्रकार का ज्ञान विज्ञान ब्रह्मज्ञान रूपी त्रीगुणात्मक धन और ऐश्वर्य प्राप्त होता है|

आर्यन एक महान नाम है जैसा कि वेद का मंत्र कहता है इनका जन्म एक जमिदार परिवार में हुआ, जिनके पास कई सौ एकड़ जमिन कि पुरानी परम्परा थी| पिता सूर्य के समान बहुत उग्र स्वभाव का जिसने अपने लिये एक नया व्यवसाय बनाता है परिवार की पुरानी परम्परा से हट कर अपना नया कारोबर प्रारम्भ करता है लिक से हट कर चलना जिसका स्वभाव है| माँ एक विशाल हृदय कि मालकिन पृथ्वी के समान धिर गम्भिर सब कुछ सहन बर्दास्त करके भी अपनी धुरी पर निरन्तर चलते रहना जिनका स्वभाव श्यामा है| पिता यशवन्त लम्बा तगड़ा डिल डौल वाला भुरी आखों का मालिक जो आखों से आग उगलने में माहिर है हिस्ट पुष्ट शरीर वाला , पढ़ा लिखा अग्रेजी संस्कृत का जान कार फुट डालो और राज्य करो जिनकी राजनिती है| मध्यवर्गिय समाज में जिसकी काफी अच्छी प्रतिष्ठा मान सम्मान है लोग सम्मान की दृष्टी से देखते है पुरानी इज्जत आज भी कुछ हद तक बरकरार है| यशवंत जो स्वाभिमानी , निर्भिक , और निर्द्वन्द दूसरों पर अपनी शेषी बघारना और अपना रोब जमाना बुद्धिमानी का लोहा मनवाना जिसे खुब आता है| जिस प्रकार जहां पेड़ ना रुख वहां पर रेण महापुरुष मान लिया जाता है| जिस प्रकार अन्धों में काना राजा बन जाता है उसी प्रकार से यशवन्त है|

श्यामा एक सभ्य घर कि है ज्यादा पढ़ी लिखी नही है जिसका यशवन्त नाजायज फायदा उठाता है और उसका आजिवन अपने मतलब के लिये उपयोग एक सामान कि तरह करता है| श्यामा इन सब से बेखबर उसे अपना भगवान मानती है| श्यामा और यशवंत की शादी पुराने वुजुर्गो ने अपनी पुरानी रिस्तेदारी को नया रूप देने के लिये किया उसमें एक और विशाल कारण था |

उस कारण को समझने से पहले हमें पहले उस गांव के इतिहास पर थोड़ी नजर डालनी पड़ेगी यह एक छोटा सा गांव है| जहां पर जिमदारों का बोल-बाला था| पहले जब भारत में मुसलमान राज्य करते थे| उस समय वाराणसी के नजदिक उसके दक्षिण में विन्ध्य पर्वत की घाटीयों से

आच्छादित जहां पर कभी मिरजाफर नाम का मुस्लिम शासक राज्य करता था| जिसके नाम पर ही उस अस्थान का नाम मिर्जापुर पड़ा था| जो कभी जंगलो से आच्छादित जंगली जातियों का जहां पर अत्यधिक बोल-बाला था| बाद में वहां पर वहां के निवासी राजा के अधिकार में आया जहां पर जमिन काफी मात्रा में थी जिसको साफ करके उपजाऊ बनाय स्थानी लोगो को साथ में लेकर जो कास्त कार बने जिनके पास जितनी अधिक जमिन थी वह उतना ही बड़ा कास्तकार या खेतिहर माना जाता था| पहले सबसे बड़ी सम्पत्ती जमिन हि माना जाता था| यह सब राजा के साथ मिल कर सभी काम करते थे| और इसका हिसाब राजा को कर स्वरूप देते थे| समय बदला भारत में अंग्रेजो का आगमन हुआ और उन्होने पूरे भारत देश पर अपना अधिकार किया और अपनि राजनितियों को लागु करके सभी राजाओं को नष्ट करके उनकी सभी जमिन का मालिक कास्तकारों को जंमिदार बना दिया और उनसे सिधा अंग्रेज अपना कर वसुलने लगे| मिर्जापुर के जिस इलाके का रहने वाला आर्यन है| वहां पर कभी जिमेदारी हुकुमत अंग्रेजो के इसारे से चलति थी और खुब खुन खराबा जमिन पर कब्जा लेने के लिये होता था| जिसमें अग्रेजो का बहुत बड़ा हाथ होता था क्योंकि इससे जमिन पर अपरोक्ष रूप से अधिकार उनका हो जाता था और उस पर अंग्रेज अपने किसी चापलुस प्यादे को बैठा कर उस सारी हजारों लाखो एकड़ जमिन पर अपना अधिकार कर लेते थे और उसका अपने मन माफिक उपयोग करते थे| ऐसे हि एक बहुत बड़े खेत के मैदान पर जो करिब दो लाख एकड़ के करिब था| जिस पर काफि मसक्त के बाद भी अंग्रेज अपना अधिकार नहीं कर पायें थे| उसके पिछे कुछ महत्त्वपूर्ण कारण थे| जिसमें से पहला कारण था कि जमिन का आधा हिस्सा अर्थात करिब एक लाख एकड़ जमिन पर्वत से सट कर विन्ध्य पर्वत की घाटी में थी जो जंगली थी काफी खतरनाक स्थान था जहां पर जाना दिन में भी अत्यधिक दुस्कर था रात में तो जाना और बच कर आना असंभव थ। ऐसे स्थान पर अंग्रेजो और उनके चमचो के लिये जाना और वहां से बच कर निकलना बहुत कठीन कार्य था कयोंकि वह इलाका दलदली था उसमें से निकलने का मार्ग बहुत दुर्गम था वहां उस समय बहुत थोड़ी सी आबादी थी जो वहा के लोकल आदिवासी और वहां का जमिदार जिसका प्रभाव अपने आदमियों पर भगवान के समान था| जिसने अपने प्रभाव और उस जमिन का उपयोग कर के जब अंग्रेजो का हमला उस इलाके पर होता, वहां के क्षेत्रिय निवासी के साथ अंग्रेजो और उनके सिपाही हवलदार चमचो को चकमा दे कर पर्वत की घाटी में जंगली इलाके में जा कर छुप जाते थे| जिस कारण अंग्रेज और उनके सैनिक कई बार उनसे मात खा चुके थे| और कितने सैनिक उस दलदली इलाके में धस कर भुखे प्यासे रहकर दम तोड़ देते थे| जिसकी वजह से वह क्षेत्र अंग्रेजो के लिये अजेय बन गया था| अंग्रेज उस इलाके पर अपना प्रभुत्त्व जमाने के लिये हर प्रकार का सड़यन्त्र निरन्तर नया - नया रचते ही रहते थे| और जिन जमिदार परिवार का उन जमिनो पर एक क्षत्र अधिकार था उनके परिवार के सदस्यों को एक-एक

कर वहां के क्षेत्रिय लोगों को जमिन का लालच दे कर निरन्तर हत्या कराते रहते जो भी उस जमिदार परिवार का नया पुरुष उभरता था उसका कुछ समय में हि किसी तरह से हत्या हो जाती थी | वह क्षेत्र जो जमिन का दूसरा हिस्सा एक लाख एकड़ का था | वह उत्तर कि तरफ से गंगा नदि के किनारे से हो कर विन्ध्य पर्वत तक फैला था जो पुरब कि तरफ से पहाड़ और नदी बिलकुल सकरा था जब नदी में बाढ़ आता था तो उस क्षेत्र में आने के सभी मार बन्द हो जाता था उस समय साधन के नाम पर बैल गाड़ी और घोड़ा गाड़ी के अतिरिक्त और तिसरा साधन नाव नदी में चलती थी| बारिष के समय नाव नदी में बहाव के कारण डुबने का खतरा था जिससे बाढ़ के समय नदी में नाव नहीं चलती थी| जमिन का जो दो लाख एकड़ का मैदान है| उसके दक्षिण किनारे से पर्वतो से होकर पतली सड़क दक्षिण से हो कर पश्चिम हिस्से मैदान को एक गोल घेरे में घेरते हुये उत्तर से गंगा नदी के किनारे से होते हुए पुनः पुरब से दक्षिण पर्वत से हो कर मिर्जापुर सहर में प्रवेश करती है| जो आगे चल कर पर्वत से होकर किनारे से वाराणसि से आगे, और दुसरी तरफ लालगंज से होकर जंगली इलाके पर्वत के चढ़ाई के साथ सके रास्ते से उत्तरप्रदेश के छोड़कर मध्यप्रदेश के लिये निकल जाती है| मिर्जापुर सहर विन्ध्य पर्वत के उपर वशा है| वहां से इलहाबाद के लिये निचे मैदान के दक्षिणी सिरे से हो कर गुजरती है|

नदि को पार कर के नदी से करिब चार किलोमिटर की दूरी पर जिटी रोड है जो दिल्ली से कल्कटा को जोडंती है| जब रेलवे लाइन का जाल भारत में नहीं बिछा था यह उस समय कि बात है| क्योंकि जो इलहाबाद और वाराणसी के मध्य रेल्वे स्टेशन बनाया गया ज्ञान पुर और इलहाबाद मुगल सराय के मध्य गैपूरा रेल्वे स्टेशन यह दोनो रेल्वे स्टेशन उस दो लाख एकड़ भुमि के दो किनारे पर एक दक्षिणी तरफ दूसरा उत्तर में नदी पार कर के बनाया गया है जिसे अंग्रेजो ने जबरजस्ती अपने अत्याचार के दम पर बनाया थ| इसमें आर्यन के पुर्वजो कि बलि चढ़ाया गया है|

इस दो लाख एकड़ भुमि को ब्रह्म पूरा के नाम से जाना जाता है अब इसका नाम करण आर्यन ने ही किया है वह यहां पर एक बिशाल भुमिगत वैदिक विश्वविद्यालय बनाना चाहता है| जो लगभग विस वर्ग किलोमिटर में फैले मैदान में अपनी जमीन पाता है| यह एक बहुत महत्त्वपूर्ण मुद्दा उसके जिवन का है | यह दो लाख एकड़ का मैदान बहुत ही आश्चर्य और कौतुहल से भरा है| अंग्रेजो के बाद जब भारत आजाद हुआ तो उस जमिन को सब में बाट दिया जो जहां जो व्यक्ती जितने जमिन पर खेती करता था, उसके नाम पर उस विशेष व्यक्ती के कव्जे मे जमिन चली गई| लेकिन लड़ाइया और हत्यायों का सिल-सीलाल आज भी चलता है जिनके पास अधिक जमिन है उनका दब-दबा आज भी उस क्षेत्र पर बरकरार है| काफी समय तक जमिन का आधा भाग जो दल- दल भरा स्थान था वहां पर अब खेती होने लगी एक ही फसल की पैदावार इतनी अधिक होती है, जो कि तिन

फसलों के बरा-बर है दुसरे खेत कि तूलना में है, नदी के पानी का कहर आज भी आता है अब लोग उसका उपयोग करना जान गये है| इस जमिन का एक बड़ा हिस्सा एक ऐसे व्यक्ति के कब्जे में है | जो आज भी लोगो की नजर में कांटा की तरह चुभता है| जिसे लोग बैजनाथ के नाम से जानते है उसके नौ पूत्र है सभी कि शादी हो गई है, सबकी पत्निया है और सब की संताने है| और इनका ब्यापार खेती के साथ बड़ी-बड़ी बागवानी का कारोबार पूस्तैनि सब एक साथ मिल कर देखते है | यह कहानी वर्तमान से करिब सौ से १५० साल पहले कि बात है| यह बैजनाथ ब्रह्म पूरा का एक बहुत बड़ा जिमिदार है अर्थात इसके पास आज भी कई हजार एकड़ भुमी है और इसके पास कई गाव कि मालकियत है जो इसके प्रतिद्वन्दियों के लिये बहुत बड़ा चिन्ता का विषय है| एक प्रकार से यह बैजनाथ और इसके पुत्रों का ब्रह्म पूरा के पूरे क्षेत्र में इसकी और इसके नौ बहादूर पहलवानो कि तुती बोलती है| इसका जीवन रहन सहन बिल्कुल राजा महाराज की तरह है| जिसके पास हजारों की संख्या में नौकर दाश दाशी बहुत सारे घोड़ा हाथी और अपनी रक्षा के लिये सेना कि व्यवस्था है| रहने के लिये बिशाल भुमिगत किला बना रखा है| एक प्रकार से राजाओं के बाद बैजनाथ ने ही इस क्षेत्र पर अपना प्रभुत्त्व जमा लिया है| जिस किले पर अंग्रेज अपना अधिकार नहीं कर सके उस पर भारत सरकार की नजर चढ़ गई है|

इसके सम्बन्ध में प्रकाण्ड विद्वान वेद और संस्कृति के महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में कुछ इस तरह से अपने विचार व्यक्त किये है कि किस प्रकार का आचरण माता और पिता को करना उचित है| और क्या अनुचित है| ईनके बिचारों को भी बिच-बिच में देखते रहेंगे जिससे जिवन का यथार्थ और जीवन को वास्तविक रुप से जिने का तरिका भी ज्ञात होता रहेगा|

ओ३म् भूर्भुवः स्व: । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ।

धियो यो नः प्रचोदयात् ।।

इस मन्त्र में जो प्रथम (ओ३म्) है उस का अर्थ प्रथमसमुल्लास में कर दिया है, वहीं से जान लेना। अब तीन महाव्याहृतियों के अर्थ संक्षेप से लिखते हैं-‘भूरिति वै प्राणः’ ‘यः प्राणयति चराऽचरं जगत् स भूः स्वयम्भूरीश्वरः’ जो सब जगत् के जीवन का आवमार, प्राण से भी प्रिय और स्वयम्भू है उस प्राण का वाचक होके ‘भूः’ परमेश्वर का नाम है। ‘भुवरित्यपानः’ ‘यः सर्वं दुःखमपानयति सोऽपानः’ जो सब दुःखों से रहित, जिस के संग से जीव सब दुःखों से छूट जाते हैं इसलिये उस परमेश्वर का नाम ‘भुवः’ है। ‘स्वरिति व्यानः’ ‘यो विविधं जगद् व्यानयति व्याप्नोति स व्यानः’ । जो नानाविध जगत् में व्यापक होके सब का धारण करता है इसलिये उस परमेश्वर का नाम ‘स्वः’ है। ये तीनों वचन तैत्तिरीय आरण्यक के हैं। (सवितुः) ‘यः सुनोत्युत्पादयति सर्वं जगत् स सविता तस्य’। जो सब जगत्

का उत्पादक और सब ऐश्वर्य का दाता है । (देवस्य) 'यो दीव्यति दीव्यते वा स देवः' । जो सर्वसुखों का देनेहारा और जिस की प्राप्ति की कामना सब करते हैं। उस परमात्मा का जो (वरेण्यम्) 'वर्त्तुमर्हम्' स्वीकार करने योग्य अतिश्रेष्ठ (भर्गः) 'शुद्धस्वरूपम्' शुद्धस्वरूप और पवित्र करने वाला चेतन ब्रह्म स्वरूप है (तत्) उसी परमात्मा के स्वरूप को हम लोग (धीमहि) 'धरेमहि' धारण करें। किस प्रयोजन के लिये कि (यः) 'जगदीश्वरः' जो सविता देव परमात्मा (नः) 'अस्माकम्' हमारी (धियः) 'बुद्धीः' बुद्धियों को (प्रचोदयात्) 'प्रेरयेत्' प्रेरणा करे अर्थात् बुरे कामों से छुड़ा कर अच्छे कामों में प्रवृत्त करे।

'हे परमेश्वर! हे सच्चिदानन्दस्वरूप! हे नित्यशुद्धबुद्धमुक्तस्वभाव! हे अज निरञ्जन निर्विकार! हे सर्वान्तर्यामिन्! हे सर्वाधार जगत्पते सकलजगदुत्पादक! हे अनादे! विश्वम्भर सर्वव्यापिन्! हे करुणामृतवारिधे! सवितुर्देवस्य तव यदों भूर्भुवः स्वर्वरेण्यं भर्गोऽस्ति तद्वयं धीमहि दधीमहि ध्यायेम वा कस्मै प्रयोजना– येत्यत्रह। हे भगवन् ! यः सविता देवः परमेश्वरो भवान्नस्माकं धियः प्रचोदयात् स एवास्माकं पूज्य उपासनीय इष्टदेवो भवतु नातोऽन्यं भवत्तुल्यं भवतोऽधिकं च कञ्चित् कदाचिन्मन्यामहे।

हे मनुष्यो! जो सब समर्थों में समर्थ सच्चिदानन्दानन्तस्वरूप, नित्य शुद्ध, नित्य बुद्ध, नित्य मुक्तस्वभाव वाला, कृपासागर, ठीक-ठीक न्याय का करनेहारा, जन्ममरणादि क्लेशरहित, आकाररहित, सब के घट-घट का जानने वाला, सब का धर्ता, पिता, उत्पादक, अन्नादि से विश्व का पोषण करनेहारा, सकल ऐश्वर्ययुक्त जगत् का निर्माता, शुद्धस्वरूप और जो प्राप्ति की कामना करने योग्य है उस परमात्मा का जो शुद्ध चेतनस्वरूप है उसी को हम धारण करें। इस प्रयोजन के लिये कि वह परमेश्वर हमारे आत्मा और बुद्धियों का अन्तर्यामीस्वरूप हम को दुष्टाचार अधर्म्मयुक्त मार्ग से हटा के श्रेष्ठाचार सत्य मार्ग में चलावें, उस को छोड़कर दूसरे किसी वस्तु का ध्यान हम लोग नहीं करें। क्योंकि न कोई उसके तुल्य और न अधिक है वही हमारा पिता राजा न्यायाधीश और सब सुखों का देनेहारा है। इस प्रकार गायत्री मन्त्र का उपदेश करके सन्ध्योपासन की जो स्नान,आचमन, प्राणायाम आदि क्रिया हैं सिखलावें। प्रथम स्नान इसलिए है कि जिस से शरीर के बाह्य अवयवों की शुद्धि और आरोग्य आदि होते हैं। इस में प्रमाण-

अद्भिर्गात्रणि शुध्यन्ति मनः सत्येन शुध्यति।

विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति।।

यह मनुस्मृति का श्लोक है।

जल से शरीर के बाहर के अवयव, सत्याचरण से मन, विद्या और तप अर्थात् सब प्रकार के कष्ट भी

सह के धर्म ही के अनुष्ठान करने से जीवात्मा, ज्ञान अर्थात् पृथिवी से लेके परमेश्वर पर्यन्त पदार्थों के विवेक से बुद्धि दृढ़-निश्चय पवित्र होता है। इस से स्नान भोजन के पूर्व अवश्य करना। दूसरा प्राणायाम, इसमें प्रमाण-

प्राणायामादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकख्यातेः।।

-यह योगशास्त्र का सूत्र है।

जब मनुष्य प्राणायाम करता है तब प्रतिक्षण उत्तरोत्तर काल में अशुद्धि का नाश और ज्ञान का प्रकाश होता जाता है। जब तक मुक्ति न हो तब तक उसके आत्मा का ज्ञान बराबर बढ़ता जाता है।

भारत सरकार ने बैजनाथ और उसके नौ पूत्रो को मारने के लिये एक बिशाल दमन चक्र चलाया और बैजनाथ के राज्य को नष्ट करके, उसको दूसरें जो सरकार के लिये जासुसी करते थे उनको देने के लिये बैजनाथ के शत्रुओं से मिल कर और सरकारी सेना को उनके साथ कर दिया और एक गोरिल्ला युद्ध करके सरे आम कत्ल करते हुए बैज नाथ कि सेना का सर कलम कर दिया और औरौ बैज नाथ के साथ उसके पुत्र और उनकी औरतो को कत्ल कर दिया| इसके बाद बैजनाथ के भुमिगत किले को नष्ट कर दिया| जब यह सब कुछ हो रह था| उस समय बैज नाथ कि अन्तिम बहु अपने मायके वाराणसी में थी| जब उसे यह समाचार मिला तब यहां मिर्जापुर नहीं आने का फैसला किया और वहीं रह कर जीवन बसर करने लगि|

दह्यन्ते ध्मायमानानां धातूनां च यथा मलाः।

तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते दोषाः प्राणस्य निग्रहात्।।

यह मनुस्मृति का श्लोक है।

जैसे अग्नि में तपाने से सुवर्णादि धातुओं का मल नष्ट होकर शुद्ध होते हैं वैसे प्राणायाम करके मन आदि इन्द्रियों के दोष क्षीण होकर निर्मल हो जाते हैं। प्राणायाम की विधि-

प्रच्छर्दनविधारणाभ्यां वा प्राणस्य। योगसूत्र।

जैसे अत्यन्त वेग से वमन होकर अन्न जल बाहर निकल जाता है वैसे प्राण को बल से बाहर पफ़ेंक के बाहर ही यथाशक्ति रोक देवे। जब बाहर निकालना चाहे तब मूलेन्द्रिय को ऊपर खींच के वायु को बाहर फ़ेंक दे। जब तक मूलेन्द्रिय को ऊपर खींच रक्खे तब तक प्राण बाहर रहता है। इसी प्रकार प्राण बाहर अधिक ठहर सकता है। जब गभराहट हो तब धीरे-धीरे भीतर वायु को ले के फिर भी वैसे ही करता जाय जितना सामर्थ्य और इच्छा हो और मन में (ओ३म्) इस का जप करता जाय इस

प्रकार करने से आत्मा और मन की पवित्रता और स्थिरता होती है।

एक ‘बाह्यविषय’ अर्थात् बाहर ही अधिक रोकना। दूसरा ‘आभ्यन्तर’ अर्थात् भीतर जितना प्राण रोका जाय उतना रोक के। तीसरा ‘स्तम्भवृत्ति’ अर्थात् एक ही वार जहां का तहां प्राण को यथाशक्ति रोक देना। चौथा ‘बाह्याभ्यन्तराक्षेपी’ अर्थात् जब प्राण भीतर से बाहर निकलने लगे तब उससे विरुद्ध उस को न निकलने देने के लिये बाहर से भीतर ले और जब बाहर से भीतर आने लगे तब भीतर से बाहर की ओर प्राण को धक्का देकर रोकता जाय। ऐसे एक दूसरे के विरुद्ध क्रिया करें त‌ो दोनों की गति रुक कर प्राण अपने वश में होने से मन और इन्द्रियाँ भी स्वाधीन होते हैं। बल पुरुषार्थ बढ़ कर बुद्धि तीव्र सूक्ष्मरूप हो जाती है कि जो बहुत कठिन और सूक्ष्म विषय को भी शीघ्र ग्रहण करती है। इस से मनुष्य शरीर में वीर्य्य वृद्धि को प्राप्त होकर स्थिर, बल, पराक्रम, जितेन्द्रियता, सब शास्त्रें को थोड़े ही काल में समझ कर उपस्थित कर लेगा। स्‌त्री भी इसी प्रकार योगाभ्यास करे। भोजन, छादन, बैठने, उठने, बोलने, चालने, बड़े छोटे से यथायोग्य व्यवहार करने का उपदेश करें। सन्ध्योपासन जिसको ब्रह्मयज्ञ भी कहते हैं। ‘आचमन’ उतने जल को हथेली में ले के उस के मूल और मध्यदेश में ओष्ठ लगा के करे कि वह जल कण्ठ के नीचे हृदय तक पहुंचे, न उससे अधिक न न्यून। उससे कण्ठस्थ कफ और पित्त की निवृत्ति थोड़ी सी होती है। पश्चात् ‘मार्जन’ अर्थात् मध्यमा और अनामिका अंगुली के अग्रभाग से नेत्रदि अंगों पर जल छिड़के, उस से आलस्य दूर होता है जो आलस्य और जल प्राप्त न हो तो न करे। पुनः समन्त्रक प्राणायाम,मनसापर‌िक्रमण, उपस्थान, पीछे परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना की रीति शिखलावे। पश्चात् ‘अघमर्षण’ अर्थात् पाप करने की इच्छा भी कभी न करे। यह सन्ध्योपासन एकान्त देश में एकाग्रचित‌्त से करे।

इधर बैजनाथ के जो शत्रु थे वह सब उसकी सम्पत्ती को जो पहले ललचाई नजरों से देखते थे| उनकी तो जैसे चानी हो गई उनके पास बहुत बड़ी मालकियत आ गई | लेकिन जब उन्हे यह ज्ञात हुआ की बैजनाथ कि आखिरी बहु जीन्दा है तो उनको लगा कि उनके किये धिये पर पानी फिरने वाला है| ब्रह्म पुरा में बैजनाथ का बड़ा शत्रु था वह उस क्षेत्र का मूखिया सरपंच जो सरकारी मुलाजिम था जिसके सहारे ही अंग्रजों कि भारतिय सरकार ने बैजनाथ के सामराज्य को बर्बाद किया था| उसके बाद सरकार ने बैजु कि कुल जमिन का ५० प्रतिशत अपने सैनिकों दे कर वही वशा दिया| और उस पुरे क्षेत्र को नक्सलाइट जंगली हिन्सा प्रभावित क्षेत्र घोसित कर दिया| जो जमिदारों के बिच लड़ाई झगड़ा को कम करने उसे रोकने के उद्देश से वहां पर रह कर सिहं जाती के नाम से प्रचलित हुय जो नक्सलाइट इलाके में रहकर सरकार का अपना अधिपत्य कराने में उन सब का उपयोग हमेंसा लिया जाता है, वह सब आज भी ब्रह पुरा के स्थाई निवासी बन कर रहते है , और

वह क्षेत्र आज भी नक्सल प्रभावित क्षेत्र माना जाता है| पहले लड़ाईया जमिनों के लिये आपस में बाहुबली जिमदारों की आमने सामने होती थी, लेकिन अब सब कुछ छुप कर रात्री के समय छल कपट गृह युद्ध छद्मवेष में रह किया जाता है|

अपां समीपे नियतो नैत्यकं विधिमास्थितः।

सावित्रीमप्यधीयीत गत्वारण्यं समाहितः।। यह मनुस्मृति का वचन है।

जंगल में अर्थात् एकान्त देश में जा सावधान हो के जल के समीप स्थित हो के नित्य कर्म को करता हुआ सावित्री अर्थात् गायत्री मन्त्र का उच्चारण अर्थज्ञान और उसके अनुसार अपने चाल चलन को करे परन्तु यह जन्म से करना उत्तम है। दूसरा देवयज्ञ-जो अग्निहोत्र और विद्वानों का संग सेवादिक से होता है। सन्ध्या और अग्निहोत्र सायं प्रातः दो ही काल में करे। दो ही रात दिन की सन्धिवेला हैं, अन्य नहीं। न्यून से न्यून एक घण्टा ध्यान अवश्य करे। जैसे समाधिस्थ होकर योगी लोग परमात्मा का ध्यान करते हैं वैसे ही सन्ध्योपासन भी किया करें। यथा सूर्योदय के पश्चात् और सूर्यास्त के पूर्व अग्निहोत्र करने का भी समय है। उसके लिए एक किसी धातु वा मिट्टी की ऊपर १२ वा १६ अंगुल चौकोर उतनी ही गहिरी और नीचे ३ वा ४ अंगुल परिमाण से वेदी इस प्रकार बनावे अर्थात् ऊपर जितनी चौड़ी हो उसकी चतुर्थांश नीचे चौड़ी रहे। उसमें चन्दन पलाश वा आम्रादि के श्रेष्ठ काष्ठ ों के टुकड़े उसी वेदी के परिमाण से बड़े छोटे करके उस में रक्खे, उसके मध्य में अग्नि रखके पुनः उस पर समिधा अर्थात् पूर्वोक्त इन्धन रख दे। एक प्रोक्षणीपात्र ऐसा और तीसरा प्रणीतापात्र इस प्रकार का और एक इस प्रकार की आज्यस्थाली अर्थात् घृत रखने का पात्र और चमसा ऐसा सोने, चांदी वा काष्ठ का बनवा के प्रणीता और प्रोक्षणी में जल तथा घृतपात्र में घृत रख के घृत को तपा लेवे। प्रणीता जल रखने और प्रोक्षणी इसलिये है कि उस से हाथ धोने को जल लेना सुगम है। पश्चात् उस घी को अच्छे प्रकार देख लेवे फिर मन्त्र से होम करें।

ओं भूरग्नये प्राणाय स्वाहा। भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा। स्वरादित्याय

व्यानाय स्वाहा। भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा।।

इत्यादि अग्निहोत्र के प्रत्येक मन्त्र को पढ़ कर एक-एक आहुति देवे और जो अधिक आहुति देना हो तो-

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासवु । यद्भद्रं तन्न आ सवु ।।

इस मन्त्र और पूर्वोक्त गायत्री मन्त्र से आहुति देवे। 'ओं' 'भूः' और 'प्राणः' आदि ये सब नाम परमेश्वर के हैं। इनके अर्थ कह चुके हैं। 'स्वाहा' शब्द का अर्थ यह है कि जैसा ज्ञान आत्मा में हो वैसा ही

जीभ से बोले, विपरीत नहीं। जैसे परमेश्वर ने सब प्राणियों के सुख के अर्थ इस सब जगत् के पदार्थ रचे हैं वैसे मनुष्यों को भी परोपकार करना चाहिये।

(प्रश्न) होम से क्या उपकार होता है?

(उत्तर) सब लोग जानते हैं कि दुर्गन्धयुक्त वायु और जल से रोग, रोग से प्राणियों को दुःख और सुगन्धित वायु तथा जल से आरोग्य और रोग के नष्ट होने से सुख प्राप्त होता है।

(प्रश्न) चन्दनादि घिस के किसी को लगावे वा घृतादि खाने को देवे तो बड़ा उपकार हो। अग्नि में डाल के व्यर्थ नष्ट करना बुद्धिमानों का काम नहीं।

(उत्तर) जो तुम पदार्थविद्या जानते तो कभी ऐसी बात न कहते। क्योंकि किसी द्रव्य का अभाव नहीं होता। देखो! जहां होम होता है वहां से दूर देश में स्थित पुरुष के नासिका से सुगन्ध का ग्रहण होता है वैसे दुर्गन्ध का भी। इतने ही से समझ लो कि अग्नि में डाला हुआ पदार्थ सूक्ष्म हो के फैल के वायु के साथ दूर देश में जाकर दुर्गन्ध की निवृत्ति करता है।

(प्रश्न) जब ऐसा ही है तो केशर, कस्तूरी, सुगन्धित पुष्प और अतर आदि के घर में रखने से सुगन्धित वायु होकर सुखकारक होगा।

(उत्तर) उस सुगन्ध का वह सामर्थ्य नहीं है कि गृहस्थ वायु को बाहर निकाल कर शुद्ध वायु को प्रवेश करा सके क्योंकि उस में भेदक शक्ति नहीं है और अग्नि ही का सामर्थ्य है कि उस वायु और दुर्गन्धयुक्त पदार्थों को छिन्न-भिन्न और हल्का करके बाहर निकाल कर पवित्र वायु को प्रवेश करा देता है।

(प्रश्न) तो मन्त्र पढ़ के होम करने का क्या प्रयोजन है?

(उत्तर) मन्त्रें में वह व्याख्यान है कि जिससे होम करने में लाभ विदित हो जायें और मन्त्रें की आवृत्ति होने से कण्ठस्थ रहें। वेदपुस्तकों का पठन-पाठन और रक्षा भी होवे।

(प्रश्न) क्या इस होम करने के विना पाप होता है?

(उत्तर) हां ! क्योंकि जिस मनुष्य के शरीर से जितना दुर्गन्ध उत्पन्न हो के वायु और जल को बिगाड़ कर रोगोत्पत्ति का निमित्त होने से प्राणियों को दुःख प्राप्त कराता है उतना ही पाप उस मनुष्य को होता है। इसलिये उस पाप के निवारणार्थ उतना सुगन्ध वा उससे अधिक वायु और जल में फैलाना चाहिये। और खिलाने पिलाने से उसी एक व्यक्ति को सुख विशेष होता है। जितना घृत और सुगन्धादि पदार्थ एक मनुष्य खाता है उतने द्रव्य के होम से लाखों मनुष्यों का उपकार होता है

परन्तु जो मनुष्य लोग घृतादि उत्तम पदार्थ न खावें तो उन के शरीर और आत्मा के बल की उन्नति न हो सके, इस से अच्छे पदार्थ खिलाना पिलाना भी चाहिये परन्तु उससे होम अधिक करना उचित है इसलिए होम का करना अत्यावश्यक है।

(प्रश्न) प्रत्येक मनुष्य कितनी आहुति करे और एक-एक आहुति का कितना परिमाण है?

(उत्तर) प्रत्येक मनुष्य को सोलह–सोलह आहुति और छः–छः माशे घृतादि एक–एक आहुति का परिमाण न्यून से न्यून चाहिये और जो इससे अधिक करे तो बहुत अच्छा है। इसीलिये आर्यवरशिरोमणि महाशय ऋषि, महर्षि, राजे, महाराजे लोग बहुत सा होम करते और कराते थे। जब तक इस होम करने का प्रचार रहा तब तक आर्यावर्त्त देश रोगों से रहित और सुखों से पूरित था, अब भी प्रचार हो तो वैसा ही हो जाय। ये दो यज्ञ अर्थात् ब्रह्मयज्ञ जो पढ़ना-पढ़ाना सन्ध्योपासन ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना करना, दूसरा देवयज्ञ जो अग्निहोत्र से ले के अश्वमेध पर्यन्त यज्ञ और विद्वानों की सेवा संग करना परन्तु ब्रह्मचर्य में केवल ब्रह्मयज्ञ और अग्निहोत्र का ही करना होता है।

ब्राह्मणस्त्रयाणां वर्णानामुपनयनं कर्तुमर्हति राजन्यो द्वयस्य वैश्यो

वैश्यस्यैवेति। शूद्रमपि कुलगुणसम्पन्नं मन्त्रवर्जमनुपनीतमध्यापयेदित्येके।

यह सुश्रुत के सूत्रस्थान के दूसरे अध्याय का वचन है। ब्राह्मण तीनों वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य, क्षत्रिय; क्षत्रिय और वैश्य तथा वैश्य एक वैश्य वर्ण को यज्ञोपवीत कराके पढ़ा सकता है और जो कुलीन शुभलक्षणयुक्त शूद्र हो तो उस को मन्त्रसंहिता छोड़ के सब शास्त्र पढ़ावे । शूद्र पढ़े परन्तु उस का उपनयन न करे यह मत अनेक आचार्यों का है। पश्चात् पांचवें वा आठवें वर्ष से लड़के लड़कों की पाठशाला में और लड़की लड़कियों की पाठशाला में जावें। और निम्नलिखिनियम-पूर्वक अध्ययन का आरम्भ करें|

मुखिया जिसका वास्तविक नाम सुखनन्दन था लोग उसे मुखिया बाद में कहने लगे सम्मान की दृष्टि से उसका कोई नाम नहीं लेता था लोग उसे मुखिया ही कहते थे |उस को भी कुछ जमिन मिली सरकार कि सहायता करने के लिये, लेकिन वह इससे प्रशन्न नहीं हुआ वह चाहता था कि उसे बैजु की और जमिने मिले जिसके लिये वह एक नया सड़यन्त्र रचता है| वह चाहता है बैजनाथ जो मरने के बाद बैजु नाम से प्रसिद्ध हुआ उसकी बहु जो मायके में है, उससे वह अपने दो लड़को मुरली धर और विद्या धर में से एक बड़े लड़के मुरली धर कि शादि करा दे जिसके लिये उसने अपने बड़े लड़के पर दबाव डालने लगा और उसे तरह- तरह कि यातनाये देने लगा| क्योंकि मुरली धर बैजु कि बहु से शादी नही करना चाहता था वह अपने पिता के निच कर्म और इस गन्दे कार्य में सहयोग नही देना चाहता था| और बैजु कि बहु को वह अच्छी तरह से जानता था कि वह उससे बहुत बड़ी

और काफी समझ दार है जो उसके मां तुल्य है| जिसके लिये वह अपने बाप के खिलाफ हो गया था| मुखिया उससे अन्दर ही अन्दर नफरत करता था| मुरलि धर एक बार मुखिया की बहु सुमित्रा के मायके में गया और उससे मिल कर अपना सारा दुखड़ और अपने बाप के कुकृत्यो का बखान करके सुमित्रा का हृदय जित लिया| सुमित्रा के पास कोई नहीं था जो उसके ससुराल की सम्पत्तीयों कि देख भाल कर सके जिसके लिये मुरलि धर काफी उपयुक्त था| लकिन वह भी मुरली धर से शादि के खिलाफ थी क्योंकि उसने मुरलि धर को जब वह छोटा था उसको अपने गोद में खिलाया था समय के साथ सब कुछ बदल गया था अब वह बिवाह नहीं करना चाहती थी| लेकिन उसने मुरली धर को अपना बेटा बना कर उसको गोद ले लिया और उसकी अपने परिचित के एक सज्जन कि लड़की से बिवाह कर कर अपनि सारी सम्पत्ती ब्रह्म पूरा की उसको देखभाल के लिये दे दिया| और वह स्वयं अपने भाई अयोद्धा प्रशाद के यहां रह कर अपना सारे करो बार पर नजर रखती थी|

षट्त्रिशदाब्दिकं चर्य्यं गुरौ त्रैवैदिकं व्रतम्।तदिर्धकं पादिकं वा ग्रहणान्तिकमेव वा।। मनु०।।अर्थ- आठवें वर्ष से आगे छत्तीसवें वर्ष पर्यन्त अर्थात् एक-एक वेद के सांगोपांग पढ़ने में बारह-बारह वर्ष मिल के छत्तीस और आठ मिल के चवालीस अथवा अठारह वर्षों का ब्रह्मचर्य और आठ पूर्व के मिल के छब्बीस वा नौ वर्ष तथा जब तक विद्या पूरी ग्रहण न कर लेवे तब तक ब्रह्मचर्य रक्खे।पुरुषो वाव यज्ञस्तस्य यानि चतुर्विं्शति वर्षाणि तत्प्रातःसवनं चतुर्विंश– त्यक्षरा गायत्री गायत्रं प्रातःसवनं तदस्य वसवोऽन्वायत्ताः प्राणा वाव वसव एते हीदँ् सर्वं वासयन्ति।।१।।

तञ्चेदेतस्मिन् वयसि किञ्चिदुपतपेत्स ब्रूयात्प्राणा वसव इदं मे प्रातः– सवनं माध्यन्दिनँ् सवनमनुसन्तनुतेति माहं प्राणानां वसूनां मध्ये यज्ञो विलोप्सी– येत्युद्धैव तत एत्यगदो ह भवति।।२।।

अथ यानि चतुश्चत्वारिँ्शद्वर्षाणि तन्माध्यन्दिनँ्सवनं चतुश्चत्वा– रिंशदक्षरा त्रिष्टुप् त्रैष्टुभं माध्यन्दिनँ्सवनं तदस्य रुद्रा अन्वायत्ताः प्राणा वाव रुद्रा एते हीदँ्सर्वं रोदयन्ति।।३।।

तं चेदेतस्मिन्वयसि किञ्चिदुपतपेत्स ब्रूयात्प्राणा रुद्रा इदं मे माध्यन्दिनँ्– सवनं तृतीयसवनमनुसन्तनुतेति माहं प्राणाना रुद्राणां मध्ये यज्ञो विलोप्सी– येत्युद्धैव तत एत्यगदो ह भवति।।४।।

अथ यान्यष्टाचत्वारिंशद्वर्षाणि तत्तृतीयसवनमष्टाचत्वारिँ्शदक्षरा जगती जागतं तृतीयसवनं तदस्यादित्या अन्वायत्ताः प्राणा वावादित्या एते हीदँ्सर्वमाददते।।५।।

तं चेदेतस्मिन् वयसि किञ्चिदुपतपेत्स ब्रूयात् प्राणा आदित्या इदं मे तृतीयसवनमायुरनुसन्तनुतेति माहं प्राणानामादित्यानां मध्ये यज्ञो विलोप्सी– येत्युद्धैव तत एत्यगदो हैव भवति।।६।। -यह छान्दोग्योपनिषत् का वचन है।

ब्रह्मचर्य तीन प्रकार का होता है कनिष्ठ-जो पुरुष अन्नरसमय देह और पुरि अर्थात् देह में शयन करने वाला जीवात्मा, यज्ञ अर्थात् अतीव शुभगुणों से संगत और सत्कर्त्तव्य है इस को अवश्य है कि २४ वर्ष पर्यन्त जितेन्द्रिय अर्थात् ब्रह्मचारी रह कर वेदादि विद्या और सुशिक्षा का ग्रहण करे और विवाह करके भी लम्पटता न करें तो उसके शरीर में प्राण बलवान् होकर सब शुभगुणों के वास कराने वाले होते हैं।।१।। इस प्रथम वय में जो उस को विद्याभ्यास में सन्तप्त करे और वह आचार्य वैसा ही उपदेश किया करे और ब्रह्मचारी ऐसा निश्चय रक्खे कि जो मैं प्रथम अवस्था में ठीक-ठीक ब्रह्मचर्य से रहूँगा तो मेरा शरीर और आत्मा आरोग्य बलवान् होके शुभगुणों को बसाने वाले मेरे प्राण होंगे। हे मनुष्यो तुम इस प्रकार से सुखों का विस्तार करो, जो मैं ब्रह्मचर्य का लोप न करूं।।२४ वर्ष के पश्चात् गृहाश्रम करूंगा तो प्रसिद्ध है कि रोगरहित रहूँगा और आयु भी मेरी ७० वा ८० वर्ष होगी।।२।।

मध्यम ब्रह्मचर्य-यह है जो मनुष्य ४४ वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचारी रह कर वेदाभ्यास करता है उसके प्राण, इन्द्रियाँ, अन्तःकरण और आत्मा बलयुक्त होके सब दुष्टों को रुलाने और श्रेष्ठों का पालन करनेहारे होते हैं।।३।। जो मैं इसी प्रथम वय में जैसा आप कहते हैं कुछ तपश्चर्या करूं तो मेरे ये रुद्ररूप प्राणयुक्त यह मध्यम ब्रह्मचर्य सिद्ध होगा। हे ब्रह्मचारी लोगो! तुम इस ब्रह्मचर्य को बढ़ाओ। जैसे मैं इस ब्रह्मचर्य का लोप न करके यज्ञस्वरूप होता हूँ और उसी आचार्यकुल से आता और रोगरहित होता हूँ जैसा कि यह ब्रह्मचारी अच्छा काम करता है वैसा तुम किया करो।।४।।

उत्तम ब्रह्मचर्य-जव वर्ष पर्यन्त का तीसरे प्रकार का होता है। जैसे ४८ अक्षर की जगती वैसे जो ४८ वर्ष पर्यन्त यथावत् ब्रह्मचर्य करता है उसके प्राण अनुकूल होकर सकल विद्याओं का ग्रहण करते हैं।।५।। आचार्य और माता पिता अपने सन्तानों को प्रथम वय में विद्या और गुणग्रहण के लिये तपस्वी कर और उसी का उपदेश करें और वे सन्तान आप ही आप अखण्डित ब्रह्मचर्य सेवन से तीसरे उत्तम ब्रह्मचर्य का सेवन करके पूर्ण अर्थात् चार सौ वर्ष पर्यन्त आयु को बढ़ावें वैसे तुम भी बढ़ाओ। क्योंकि जो मनुष्य इस ब्रह्मचर्य को प्राप्त होकर लोप नहीं करते वे सब प्रकार के रोगों से रहित होकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त होते हैं।।६।।

चतस्रोऽवस्थाः शरीरस्य वृद्धिर्यौवनं सम्पूर्णता किञ्चित्परिहाणिश्चेति।

आषोडशाद् वृद्धिः। आपञ्चविंशतेर्यौवनम्। आचत्वारिंशतः सम्पूर्णता। ततः किञ्चित्परिहाणिश्चेति।

पञ्चविंशे ततो वर्षे पुमान् नारी तु षोडशे।

समत्वागतवीर्यौ तौ जानीयात्कुशलो भिषक्।।

-यह सुश्रुत के शरीरस्थान का वचन है।

इस शरीर की चार अवस्था हैं। एक (वृद्धि) जो १६वें वर्ष से लेके २५वें वर्ष पर्यन्त सब धातुओं की बढ़ती होती है। दूसरा (यौवन) जो २५ वें वर्ष के अन्त और २६वें वर्ष के आदि में युवावस्था का आरम्भ होता है। तीसरी (सम्पूर्णता) जो पच्चीसवें वर्ष से लेके चालीसवें वर्ष पर्यन्त सब धातुओं की पुष्टि होती है। चौथी (किंि ञ्चत्परिहाणि) तब सब सांगोपांग शरीरस्थ सकल धातु पुष्ट होके पूर्णता को प्राप्त होते हैं। तदनन्तर जो धातु बढ़ता है वह शरीर में नहीं रहता, कि‍न्तु स्वप्न, प्रस्वेदादि द्वारा बाहर निकल जाता है वही ४० वां वर्ष उत्तम समय विवाह का है अर्थात् उत्तमोत्तम तो अड़तालीसवें वर्ष में विवाह करना।

मुखिया जो अब बैजु के बाद सबसे ताकत वर और क्षेत्र में सबसे प्रसिद्ध व्यक्ति के रूप में उभरा | उसके पास वह सब कुछ था जिसको एक बड़ा आदमी पुराने समय में मानते थे कई सो एकड़ भुमि नौकर चाकर हाथी घड़े इत्यादि फिर भी वह मुरलि का शत्रु बन गया था| जब उसे पता चला कि मुरली बैजु की समपत्ती की देख भाल करता है और उसमें से अपने भाई विद्या धर और अपने बाप को कुछ भी नहीं देता है| जबकि मुखिया उस पर अपना अधिकार चाहता था | मुखिया काफी ताकत वर था उसने ६० साल की उम्र में जब अपनी पत्नी और मुरलिधर, विद्या धर की मां को मुरलीधर के घर भेजा| क्योंकि मुरलिधर अब पुराने गांव की बैजु की हवेली जो वैजू ने अपनी बहु सुमित्रा को मुह दिखाई मे दिया था| सुमित्रा तो वहां रहती नहीं थी उसनें यह हवेलि मुरलिधर को दे दिया था| जब मुखिया ने अपने घर से बेदखल कर दिया था | क्योकि मुरलि ने उसके खिलाफ हो कर अपना बिवाह कर लिया था| अब मुरली अपनि पत्नी शर्मिला और चार बेटे माता शंकर, हरिशंकर, रमाशंकर, दयाशंकर, और एक बेटी करुणा के साथ उसमें रहता था| जहां पर समझाने के लिये उसकी मां गई और उसने कहा कि वह अपने भाई विद्या धर को भी जमिन पर कब्जा दे, और बैजु कि समपत्ती मे अपने भाई को भी समान हिस्सा में बटवारा करें | लेकिन वह अपनी मां को यह कह कर मुरलि धर ने वापिस लौटा दिया, कि अभी तो यह सारी जमिन सुमित्रा मां कि है उनके मर्जी के खिलाफ मै कुछ नहीं कर सकता मुझे माफ करो| यह सुन कर उसकी मां शकुन्तला अपने घर वापिस आ गई| और सब कुछ मुखिया से बताया जिससे मुखिया बहुत अधिक क्रोधित हो गया और आपे से बाहर हो कर बहुत अधिक मार दिया अपनी पत्नी शकुन्तला को रात्री का समय था कोई घर पर उस समय नही था| विद्या धर भी उस समय अनाज कि विक्री हुई थी उसके पैसै के लिये व्यापारी से पैसे लेने के लिये शहर गया था| जब वह शहर से वापिस आया और अपनी मां को दयनिय हालत में देख कर जो अब बिस्तर पर काफी बिमार थी| जिसके लिये उसने वैद्य को बुलाया लेकिन बिमारी गहरी होती गई, जिसके कारण कुछ महिने में वह इस नस्वर संसार से एक दिन सुबह वह प्रस्थान कर गई|

(प्रश्न) क्या यह ब्रह्मचर्य का नियम स्त्री वा पुरुष दोनों का तुल्य ही है।

(उत्तर) नहीं, जो २५ वर्ष पर्यन्त पुरुष ब्रह्मचर्य करें तो १६ वर्ष पर्यन्त कन्या। जो पुरुष तीस वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचारी रहै तो स्त्री १७ वर्ष, जो पुरुष छत्तीस वर्ष तक रहै तो स्त्री १८ वर्ष, जो पुरुष ४० वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य करे तो स्त्री २० वर्ष, जो पुरुष ४४ वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य करे तो स्त्री २२ वर्ष, जो पुरुष ४८ वर्ष ब्रह्मचर्य करे तो स्त्री २४ चौबीस वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य सेवन रक्खें अर्थात् ४८ वें वर्ष से आगे पुरुष और २४ वें वर्ष से आगे स्त्री को ब्रह्मचर्य न रखना चाहिये परन्तु यह नियम विवाह करने वाले पुरुष और स्त्रियों का है जो विवाह करना ही न चाहैं वे मरणपर्यन्त ब्रह्मचारी रह सकते हों तो भले ही रहैं परन्तु यह काम पूर्ण विद्या वाले जितेन्द्रिय और निर्दोष योगी स्त्री और पुरुष का है। यह बड़ा कठिन काम है कि जो काम के वेग को थाम के इन्द्रियों को अपने वश में रखना।

ऋतं च स्वाध्यायप्रवचने च। सत्यं च स्वाध्यायप्रवचने च। तपश्च

स्वाध्यायप्रवचने च। दमश्च स्वाध्यायप्रवचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवचने च।

अग्नयश्च स्वाध्यायप्रवचने च। अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवचने च। अतिथयश्च

स्वाध्यायप्रवचने च। मानुषं च स्वाध्यायप्रवचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवचने

च। प्रजनश्च स्वाध्यायप्रवचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवचने च।

-यह तैत्तिरीयोपनिषत् का वचन है।

ये पढ़ने पढ़ाने वालों के नियम हैं। (ऋतं०) यथार्थ आचरण से पढ़ें और पढ़ावें, (सत्यं०) सत्याचार से सत्यविद्याओं को पढ़ें वा पढ़ावें, (तपः०) तपस्वी अर्थात् धर्मानुष्ठान करते हुए वेदादि शास्त्रें को पढ़ें और पढ़ावें, (दमः०) बाह्य इन्द्रियों को बुरे आचरणों से रोक के पढ़ें और पढ़ाते जायें, (शमः०) अर्थात् मन की वृत्ति को सब प्रकार के दोषों से हटा के पढ़ते पढ़ाते जायें, (अग्नयः०)

आहवनीयादि अग्नि और विद्युत् आदि को जान के पढ़ते पढ़ाते जायें, और (अग्निहोत्रं०) अग्निहोत्र करते हुए पठन और पाठन करें करावें, (अतिथयः०)

अतिथियों की सेवा करते हुए पढ़ें और पढ़ावें, (मानुषं०) मनुष्यसम्बन्धी व्यवहारों को यथायोग्य करते हुए पढ़ते पढ़ाते रहैं, (प्रजा०) अर्थात् सन्तान और राज्य का पालन करते हुए पढ़ते पढ़ाते जायें, (प्रजन०) वीर्य की रक्षा और वृद्धि करते हुए पढ़ते पढ़ाते जायें, (प्रजातिः०) अर्थात् अपने सन्तान और शिष्य का पालन करते हुए पढ़ते पढ़ाते जायें।

यमान् सेवेत सततं न नियमान् केवलान् बुधः।

यमान्पतत्यकुर्वाणो नियमान् केवलान् भजन्।। मनु०।।

यम पांच प्रकार के होते हैं-

तत्रहिसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः।। योगसूत्र।।

अर्थात् (अहिसा) वैरत्याग, (सत्य) सत्य मानना, सत्य बोलना और सत्य ही करना, (अस्तेय) अर्थात् मन वचन कर्म से चोरीत्याग, (ब्रह्मचर्य) अर्थात् उपस्थेन्द्रिय का संयम, (अपरिग्रह) अत्यन्त लोलुपता स्वत्वाभिमानरहित होना, इन पांच यमों का सेवन सदा करें । केवल नियमों का सेवन अर्थात्-

शौचसन्तोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः।। योगसूत्र।।

(शौच) अर्थात् स्नानादि से पवित्रता (सन्तोष) सम्यक् प्रसन्न होकर निरुद्यम रहना सन्तोष नहीं किन्तु पुरुषार्थ जितना हो सके उतना करना, हानि लाभ में हर्ष वा शोक न करना (तप) अर्थात् कष्टसेवन से भी धर्मयुक्त कर्मों का अनुष्ठान (स्वाध्याय) पढ़ना पढ़ाना (ईश्वरप्रणिधान) ईश्वर की भक्तिविशेष में आत्मा को अर्पित रखना, ये पांच नियम कहाते हैं। यमों के विना केवल इन नियमों का सेवन न करे किन्तु इन दोनों का सेवन किया करे। जो यमों का सेवन छोड़ के केवल नियमों का सेवन करता है वह उन्नति को नहीं प्राप्त होता किन्तु अधोगति अर्थात् संसार में गिरा रहता है।

कामात्मता न प्रशस्ता न चैवेहस्त्यकामता।

काम्यो हि वेदाधिगमः कर्मयोगश्च वैदिकः।। मनु०।।

अर्थ-अत्यन्त कामातुरता और निष्कामता किसी के लिये भी श्रेष्ठ नहीं, क्योंकि जो कामना न करे तो वेदों का ज्ञान और वेदविहित कर्मादि उत्तम कर्म किसी से न हो सकें। इसलिये-

स्वाध्यायेन व्रतैर्होमैस्त्रैविद्येनेज्यया सुतैः।

महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः।। मनु०।।

अर्थ-(स्वाध्याय) सकल विद्या पढ़ते-पढ़ाते (व्रत) ब्रह्मचर्य्य सत्यभाषणादि नियम पालने (होम) अग्निहोत्रदि होम, सत्य का ग्रहण असत्य का त्याग और सत्य विद्याओं का दान देने (त्रैविद्येन) वेदस्थ कर्मोपासना ज्ञान विद्या के ग्रहण (इज्यया) पक्षेष्ट्यादि करने (सुतैः) सुसन्तानोत्पत्ति (महायज्ञैः) ब्रह्म, देव, पितृ, वैश्वदेव और अतिथियों के सेवनरूप पञ्चमहायज्ञ और (यज्ञैः) अग्निष्टोमादि तथा शिल्पविद्याविज्ञानादि यज्ञों के सेवन से इस शरीर को ब्राह्मी अर्थात् वेद और परमेश्वर की भक्ति का

आधाररूप ब्राह्मण का शरीर बनता है। इतने साधनों के विना ब्राह्मणशरीर नहीं बन सकता।

मुखिया ने थोड़े समय जब रिस्ते विद्याधर के विवाह के आने लगे, जिससे वह उसकी शादी कर दि और कुछ साल में विद्या धर के भी चार पुत्र हुये एक पुत्र सुबेदार, पहली पत्नी से उसके बाद दुसरी पत्नी से और केशव, बुटी, हीरा लाल और दो पुत्रीयां हो गई जिससे विद्या धर ने भी ने अपने पिता मुखिया से दर किनारा कर लिया उस पर ज्यादा ध्यान नहीं दैता था वह अपने परिवार में हि खोया रहता था| यह बात मुखिया को पसन्द नहीं आती थी, इसलिये उसने भी अपनी दूसरी शादी ६५ साल कि अवस्था में कि जिससे उसने बहुत बहादुर ताकत वर चार पुत्र और दो पुत्रियों को पैदा किया| और विद्या धर को अपनी जमीन का कुछ हिस्सा दे कर अपने से अलग कर दिया| और सड़यन्त्र करा कर के मात्र ३५ साल की उम्र में मुरली धर की हत्या करा दिया| तब तक मुरली के चार लड़के छोटे थे वह सब कुछ देख भाल नहीं कर सकते सारी बैजु की सम्पत्ती की इसलिये मुखिया उन सब की देखभाल परोक्ष रूप से करने वाला बन कर एक बार पुनः ब्रह्म पूरा में हाबी हो गयां अपने आताताई चार पुत्रों की सहयाता से जिसके साथ चार पुत्र मुरली के भी हो गये और चार विद्या धर के इस तरह से बारह युवा थे सब एक से बढ़ कर एक शुरमा और योद्धा किस्म के पुरुष थे| जिसमें मुखिया चार पुत्र और आठ उसके दो पुत्रो के पुत्र थे| इस तरह से एक बार पुरा ब्रह्म पूरा क्षेत्र पर मुखिया का एक क्षत्र प्रभुत्त्व हो गया जैसा कि मुखिया चाहता था लेकिन अभी बैजु कि जमिन पर नाम उसकी बहु सुमित्रा का ही बोलता था|

इन्द्रियाणां विचरतां विषयेष्वपहारिषु ।

संयमे यत्नमातिष्ठेद्विद्वान् यन्तेव वाजिनाम्।। मनु॰।।

अर्थ-जैसे विद्वान् सारथि घोड़ों को नियम में रखता है वैसे मन और आत्मा को खोटे कामों में खैंचने वाले विषयों में विचरती हुई इन्द्रियों के निग्रह में प्रयत्न सब प्रकार से करें। क्योंकि-

इन्द्रियाणां प्रसंगेन दोषम् ऋच्छत्यसंशयम् ।

सन्नियम्य तु तान्येव ततः सिद्धि नियच्छति।। मनु०।।

अर्थ-जीवात्मा इन्द्रियों के वश होके निश्चित बड़े-बड़े दोषों को प्राप्त होता है और जब इन्द्रियों को

अपने वश में करता है तभी सिद्धि को प्राप्त होता है।

वेदास्त्यागश्च यज्ञाश्च नियमाश्च तपांसि च।

न विप्रदुष्टभावस्य सिद्धिं गच्छन्ति कर्हिचित्।। मनु०।।

जो दुष्टाचारी-अजितेन्द्रिय पुरुष हैं उसके वेद, त्याग, यज्ञ, नियम और तप तथा अन्य अच्छे काम कभी सिद्धि को नहीं प्राप्त होते।

वेदोपकरणे चैव स्वाध्याये चैव नैत्यके।

नानुरोधोऽस्त्यनध्याये होममन्त्रेषु चैव हि।।१।। मनु०।।

नैत्यके नास्त्यनध्यायो ब्रह्मसत्रं हि तत्स्मृतम्।

ब्रह्माहुतिहुतं पुण्यम् अनध्यायवषट्कृतम्।।२।। मनु०।।

वेद के पढ़ने-पढ़ाने, सन्ध्योपासनादि पञ्चमहायज्ञों के करने और होममन्त्रें में अनध्यायविषयक अनुरोध (आग्रह) नहीं है क्योंकि।।१।। नित्यकर्म में अनध्याय नहीं होता। जैसे श्वासप्रश्वास सदा लिये जाते हैं बन्ध नहीं किये जाते वैसे नित्यकर्म प्रतिदिन करना चाहिये; न किसी दिन छोड़ना क्योंकि अनध्याय में भी अग्निहोत्रदि उत्तम कर्म किया हुआ पुण्यरूप होता है। जैसे झूठ बोलने में सदा पाप और सत्य बोलने में सदा पुण्य होता है। वैसे ही बुरे कर्म करने में सदा अनध्याय और अच्छे कर्म करने में सदा स्वाध्याय ही होता है।।२।।

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।

चत्वारि तस्य वर्द्धन्त आयुर्विद्या यशो बलम्।। मनु०।।

जो सदा नम्र सुशील विद्वान् और वृद्धों की सेवा करता है, उसका आयु, विद्या, कीर्ति और बल ये चार

सदा बढ़ते हैं और जो ऐसा नहीं करते उनके आयु आदि चार नहीं बढ़ते।

अहिसयैव भूतानां कार्यं श्रेयोऽनुशासनम्।

वाक् चैव मधुरा श्लक्ष्णा प्रयोज्या धर्ममिच्छता।।१।।

यस्य वाङ्मनसे शुद्धे सम्यग्गुप्ते च सर्वदा।

स वै सर्वमवाप्नोति वेदान्तोपगतं फलम्।।२।। मनु०।।

विद्वान् और विद्यार्थियों को योग्य है कि वैरबुद्धि छोड़ के सब मनुष्यों के कल्याण के मार्ग का उपदेश करें और उपदेष्टा सदा मधुर सुशीलतायुक्त वाणी बोले। जो धर्म की उन्नति चाहै वह सदा सत्य में चले और सत्य ही का उपदेश करे।।१।। जिस मनुष्य के वाणी और मन शुद्ध तथा सुरक्षित सदा रहते हैं, वही सदा वेदान्त अर्थात् सब वेदों के सिद्धान्तरूप फल को प्राप्त होता है।।२।।

सम्मानाद् ब्राह्मणो नित्यमुद्विजेत विषादिव।

अमृतस्येव चाकाङ्क्षेदवमानस्य सर्वदा।। मनु०।।

वही ब्राह्मण समग्र वेद और परमेश्वर को जानता है जो प्रतिष्ठा से विष के तुल्य सदा डरता है और अपमान की इच्छा अमृत के समान किया करता है।

बैजुनाथ कि आखिरी बहु सुमित्रा अब भि वह अपने मायके अपने भाई के साथ रहति थी| जब उसे यह पत चला कि मुरलिधर कि मृत्यु कर दी गई है उस समय तक वह भी बृद्ध हो चुकी थी| उनका छोटा भाई अयोद्धा प्रशाद जिसके साथ वह रहती थी| मुरली धर के चार पुत्रों ने अब बैजु कि सम्पत्ती को सम्हालने का कार्य करते सबकी शादी हो चुकी है| जिसमें से रमाशंकर का पुत्र चार पुत्र में दुसरा पुत्र यशवंत है| जिसकी शादी सुमित्रा अपने भाई अयोद्धा प्रशाद की आखीर पुत्री से करा देती है जिसका नाम श्यामा है| जो आर्यन की मां है, जैसा कि मैने पिछे थोड़ा परिचय करया था| इस तरह से बैजु कि सारी सम्पत्ती और जमिन मुरली के चार पुत्रों में हमेशा के लिये आ गई| जिसके कुछ समय बाद सुमित्रा की मृत्यु हो गई, उससे कुछ पहले जब यशवन्त की बारात शादि कर

के वापिस आये ठीक उसी दिन मुखिया का बड़ा लड़का जो बहुत बड़ा योद्धा था उसको कुछ उसके शत्रु मिल कर पुरानी दुश्मनी का बदला लेने के लिये घेर लिया जब वह बाजार में डाढ़ी एक नाई की दुकान पर बैठ कर बनवा रहें थे| और वहा पर उनको गोली मार दिया वहां से तत्काल उनको बनारस ले जाया गया जहां पर शत्रुओं चिकित्शक को पैसा दे कर और उसे धमका कर बचाने के अस्थान पर जहर की सुई लगा दिया जिससे उनकी कुछ समय में मृत्यु हो गई| उनके बाद कोई उतना बड़ा महान शुरमा पुरूष व्यक्ति उस परिवार में जन्म नही लिया | उनकी तलवार आज भी है जिसको कोई चलाने वाला नहीं है| इस सब का दोसी पुरा मुखिया परिवार श्यामा को मानता है उसके साथ जानवर जैसा व्यवहार करते है जिसमें सबसे प्रथम यशवन्त अग्रणी है वह सब परिवार के लोगो को खुस करने के लिये तरह- तरह की यातना और अपमान देना सबका पेशा बन गया और श्यामा कि नियत बन गई जो सभी सम्पत्ती कि मालकिन बन कर आई थी उसको दाशी बना कर रखा जाने लगा| और जो दाश थे वह सब यशवन्त को आगे कर के मालिक बन गये| मुखिया से भी अब सारा कारो बार नहीं सम्हाला गया वह भी बिमार हो गया और उसको किड़े उशके शरिर में पड़ गया और वह भी तड़प-तड़प कर एक दिन चार पाई पर दम तोड़ दिया|

अनेन क्रमयोगेन संस्कृतात्मा द्विजः शनैः।

गुरौ वसन् सञ्चिनुयाद् ब्रह्माधिगमिकं तपः।। मनु०।।

इसी प्रकार से कृतोपनयन द्विज ब्रह्मचारी कुमार और ब्रह्मचारिणी कन्या धीरे-धीरे वेदार्थ के ज्ञानरूप उत्तम तप को बढ़ाते चले जायें।

योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम्।

स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः।। मनु०।।

जो वेद को न पढ़ के अन्यत्र श्रम किया करता है वह अपने पुत्र पौत्र सहित शूद्रभाव को शीघ्र ही प्राप्त हो जाता है।

वर्जयेन्मधुमांसञ्च गन्धं माल्यं रसान् स्त्रियः।

शुक्तानि यानि सर्वाणि प्राणिनां चैव हिसनम्।।१।।

अभ्यंगमञ्जनं चाक्ष्णोरुपानच्छत्रधारणम्।

कामं त्रफ़ोधं च लोभं च नर्त्तनं गीतवादनम्।।२।।

द्यूतं च जनवादं च परिवादं तथानृतम्।

स्त्रीणां च प्रेक्षणालम्भमुपघातं परस्य च।।३।।

एकः शयीत सर्वत्र न रेतः स्कन्दयेत्क्वचित्।

कामाद्धि स्कन्दयन् रेतो हिनस्ति व्रतमात्मनः।।४।।

ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणी मद्य, मांस, गन्ध, माला, रस, स्त्री और पुरुष का संग, सब खटाई, प्राणियों की हिसा।।१।।

अंगों का मर्दन, विना निमित्त उपस्थेन्द्रिय का स्पर्श, आंखों में अञ्जन, जूते और छत्र का धारण, काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, शोक, ईर्ष्या, द्वेष और नाच गान, बाजा बजाना।।२।।

द्यूत, जिस किसी की कथा, निन्दा, मिथ्याभाषण, स्त्रियों का दर्शन, आश्रय, दूसरे की हानि आदि कुकर्मों को सदा छोड़ देवें।।३।।

सर्वत्र एकाकी सोवे, वीर्य्य स्खलित कभी न करें, जो कामना से वीर्यस्खलित कर दे तो जानो कि अपने ब्रह्मचर्य्यव्रत का नाश कर दिया।।४।।

वेदमनूच्याचार्योऽन्तेवासिनमनुशास्ति। सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायान्मा प्रमदः। आचार्य्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः। सत्यान्न प्रमदितव्यम्। धर्मान्न प्रमदितव्यम्। कुशलान्न प्रमदितव्यम्। स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्। देवपितृकार्य्याभ्यां न प्रमदितव्यम्।।१।।

मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्य्यदेवो भव। अतिथिदेवो भव। यान्यनवद्यानि कर्माणि तानि सेवितव्यानि नो इतराणि। यान्यस्माकँ् सुचरितानि तानि त्वयोपास्यानि नो इतराणि।।२।।

ये के चास्मच्छ्रेयांसो ब्राह्मणास्तेषां त्वयासनेन प्रश्वसितव्यम्। श्रद्धया देयम्। अश्रद्धया देयम्। श्रिया देयम्। ह्रिया देयम्। भिया देयम्। संविदा देयम्।।३।।

अथ यदि ते कर्मविचिकित्सा वा वृत्तविचिकित्सा वा स्यात् ये तत्र ब्राह्मणाः समदर्शिनो युक्ता अयुक्ता अलूक्षा धर्मकामाः स्युर्यथा ते तत्र वर्त्तेरन्। तथा तत्र वर्त्तेथाः।।४।।

एष आदेश एष उपदेश एषा वेदोपनिषत्। एतदनुशासनम्। एवमुपासितव्यम्। एवमु चैतदुपास्यम्।।५।। तैत्तिरीय०।।

आचार्य्य अन्तेवासी अर्थात् अपने शिष्य और शिष्याओं को इस प्रकार उपदेश करे कि तू सदा सत्य

बोल, धर्माचार कर, प्रमादरहित होके पढ़ पढ़ा, पूर्ण ब्रह्मचर्य्य से समस्त विद्याओं को ग्रहण कर और आचार्य्य के लिये प्रिय धन देकर विवाह करके सन्तानोत्पत्ति कर । प्रमाद से सत्य को कभी मत छोड़, प्रमाद से धर्म का त्याग मत कर, प्रमाद से आरोग्य और चतुराई को मत छोड़, प्‌रमाद से पढ़ने और पढ़ाने को कभी मत छोड़। देव विद्वान् और माता पितादि की सेवा में प्रमाद मत कर। जैसे विद्वान् का सत्कार करे उसी प्रकार माता, पिता, आचार्य्य और अतिथि की सेवा सदा किया कर। जो अनिन्दित धर्मयुक्त कर्म हैं उन सत्यभाषणादि को किया कर, उन से भिन्न मिथ्याभाषणादि कभी मत कर। जो हमारे सुचरित्र अर्थात् धर्मयुक्त कर्म हों उनको ग्रहण कर और जो हमारे पापाचारण हों उन को कभी मत कर। जो कोई हमारे मध्य में उत्तम विद्वान् धर्मात्मा ब्राह्मण हैं उन्हीं के समीप बैठ और उन्हीं का विश्वास किया कर, श्रद्धा से देना, अश्रद्धा से देना, शोभा से देना, लज्जा से देना, भय से देना और प्रतिज्ञा से भी देना चाहिए। जब कभी तुझ को कर्म वा शील तथा उपासना ज्ञान में किसी प्रकार का संशय उत्पन्न हो तो जो वे समदर्शी पक्षपातरहित योगी अयोगी आर्द्रचित्त धर्म की कामना करने वाले धर्मात्मा जन हों जैसे वे धर्ममार्ग में वर्तें वैसे तू भी उसमें वर्त्ता कर। यही आदेश आज्ञा, यही उपदेश, यही वेद की उपनिषत् और यही शिक्षा है। इसी प्रकार वर्त्तना और अपना चाल चलन सुधारना चाहिए।

अकामस्य क्रिया काचिद् दृश्यते नेह कर्हिचित्।

यद्यद्धि कुरुते किञ्चित् तत्तत्कामस्य चेष्टितम्।। मनु०।।

मनुष्यों को निश्चय करना चाहिए कि निष्काम पुरुष में नेत्र का संकोच विकास का होना भी सर्वथा असम्भव है । इस से यह सिद्ध होता है कि जो-जो कुछ भी करता है वह-वह चेष्टा कामना के विना नहीं है।

आचारः परमो धर्मः श्रुत्युक्तः स्मार्त्त एव च।

तस्मादस्मिन्सदा युक्तो नित्यं स्यादात्मवान् द्विजः।।१।।

आचाराद्विच्युतो विप्रो न वेदफलमश्नुते।

आचारेण तु संयुक्तः सम्पूर्णफलभाग्भवेत्।।२।। मनु०।।

कहने, सुनने, सुनाने, पढ़ने, पढ़ाने का फल यही है कि जो वेद और वेदानुकूल स्मृतियों में प्रतिपादित धर्म का आचरण करना, इसलिये धर्माचार में सदा युक्त रहे।।१।। क्योंकि जो धर्माचरण से रहित है वह वेदप्रतिपादित धर्मजन्य सुखरूप फल को प्राप्त नहीं हो सकता और जो विद्या पढ़ के धर्माचरण करता है वही सम्पूर्ण सुख को प्राप्त होता है।।२।।

योऽवमन्येत ते मूले हेतुशास्त्रश्रयाद् द्विजः।

स साधुभिर्बहिष्कार्यो नास्तिको वेदनिन्दकः।।१।। मनु०।।

जो वेद और वेदानुकूल आप्त पुरुषों के किये शास्त्रें का अपमान करता है उस वेदनिन्दक नास्तिक को जाति, पङ् क्ति और देश से बाह्य कर देना चाहिये। क्योंकि-

श्रुतिः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः।

एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम्।। मनु०।।

श्रुति वेद, स्मृति वेदानुकूल आप्तोक्त मनुस्मृत्यादि शास्त्र, सत्पुरुषों का आचार जो सनातन अर्थात् वेदद्वारा परमेश्वरप्रतिपादित कर्म्म और अपने आत्मा में प्रिय अर्थात् जिस को आत्मा चाहता है जैसे कि सत्यभाषण ये चार धर्म के लक्षण अर्थात् इन्हीं में धर्माधर्म का निश्चय होता है। जो पक्षपातरहित न्याय, सत्य का ग्रहण, असत्य का सर्वथा परित्यागरूप आचार है उसी का नाम धर्म और इस से विपरीत जो पक्षपात सहित अन्यायाचरण सत्य का त्याग और असत्य का ग्रहण रूप कर्म है उसी को अधर्म कहते हैं।

अर्थकामेष्वसक्तानां धर्मज्ञानं विधीयते।

धर्मं जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः।। मनु०।।

जो पुरुष (अर्थ) सुवर्णादि रत्न और (काम) स्त्रीसेवनादि में नहीं फंसते हैं उन्हीं को धर्म का ज्ञान प्राप्त होता है जो धर्म के ज्ञान की इच्छा करें वे वेद द्वारा धर्म का निश्चय करें क्योंकि धर्माऽधर्म का निश्चय विना वेद के ठीक-ठीक नहीं होता। इस प्रकार आचार्य्य अपने शिष्य को उपदेश करे और विशेषकर राजा इतर क्षत्रिय, वैश्य और उत्तम शूद्र जनों को भी विद्या का अभ्यास अवश्य करावें, क्योंकि जो ब्राह्मण हैं वे ही केवल विद्याभ्यास करें और क्षत्रियादि न करें तो विद्या, धर्म, राज्य और धनादि की वृद्धि कभी नहीं हो सकती। क्योंकि ब्राह्मण तो केवल पढ़ने पढ़ाने और क्षत्रियादि से जीविका को प्राप्त होके जीवन धारण कर सकते हैं। जीविका के आधीन और क्षत्रियादि के आज्ञादाता और यथावत् परीक्षक दण्डदाता न होने से ब्राह्मणादि सब वर्ण पाखण्ड ही में फंस जाते हैं और जब क्षत्रियादि विद्वान् होते हैं तब ब्राह्मण भी अधिक विद्याभ्यास और धर्मपथ में चलते हैं और उन क्षत्रियादि विद्वानों के सामने पाखण्ड, झूठा व्यवहार भी नहीं कर सकते और जब क्षत्रियादि अविद्वान् होते हैं तो वे जैसा अपने मन में आता है वैसा ही करते कराते हैं। इसलिये ब्राह्मण भी

अपना कल्याण चाहैं तो क्षत्रियादि को वेदादि सत्यशास्त्र का अभ्यास अधिक प्रयत्न से करावें। क्योंकि क्षत्रियादि ही विद्या, धर्म, राज्य और लक्ष्मी की वृद्धि करने हारे हैं, वे कभी भिक्षावृत्ति नहीं करते, इसलिए वे विद्या व्यवहार में पक्षपाती भी नहीं हो सकते। और जब सब वर्णों में विद्या सुशिक्षा होती है तब कोई भी पाखण्डरूप अधर्मयुक्त मिथ्या व्यवहार को नहीं चला सकता। इससे क्या सिद्ध हुआ कि क्षत्रियादि को नियम में चलाने वाले ब्राह्मण और संन्यासी तथा ब्राह्मण और संन्यासी को सुनियम में चलाने वाले क्षत्रियादि होते हैं। इसलिये सब वर्णों के स्त्री पुरुषों में विद्या और धर्म का प्रचार अवश्य होना चाहिये।

इस तरह से उस ब्रह्म पुरा क्षेत्र का स्वामित्व मुरली के बड़े लड़के माता शंकर के उपर आगई और यहां इन सब का भयंकर पतन होना शुरु हो गया क्योंकि यह सब अब स्वेच्छाचारी व्यभीचारी और बहुत सारे दुर्गुणो के शिकार हो गये थे| सबकी आपस में फुट पड़ गई और कुछ ही सालो में सभी भाई अलग हो गये और सबने जमिनों मे बटवारा कर लिया| इसके बाद वहां पर सरकारी जो सिहं जाती के लोग आकर बशे थे वह सब हाबी हो गये|

आर्यन के जीवन को समझने के लिये लिये उसके कुछ पिछले पुर्वजो को समझना जरुरी है क्योंकि जो भि पिछे हुआ है उसका परिणाम आर्यन के जीवन पर पड़ने वाला है| जब तक हम पिछली घटनाये वह जो मुख्य कारण है उसको नहीं समझते तो पुरी तरह से उसे समझ नही सकते है| अब हम वर्तमान युग में आते है| और आर्यन के के जीवन को समझते है आगे इन घटनाओं का तारतम्य आर्यन से होगा समय आने उससे भि परिचय कराया जायेगा|

जैसा कि हमने परिचय कराया पहले कि श्यामा यशवन्त कि पत्नी और आर्यन कि मां जिसको यशवन्त बराबर ताने मारता और उसे हमेशा बुरा भला कहता है| उसके माता पिता भी उसका सहयोग करते थे क्योंकि उस समय यशवन्त अपने माता पिता और अपने भाई बहनो के साथ संयुक्त परिवार में रहता था| सभी लोग मिल श्यामा को सभी तरह के यातना देते थे| और वह यशवन्त को अपना पति परमेश्वर होता है ऐसा उसको समझाया गया वह अब भी ऐसा ही समझती है| वह भोली-भालि, सरल चित्त निर्दोष स्वभाव की औरत है| जैसा कि कहा गया है सिधा सरल वृक्ष जंगल का सबसे पहले काटा जाता है ऐसा ही कुछ श्यामा के साथ होता रहा था| वह दूसरों के कड़वे जहर के घुट पिकर हमेंशा सबके क्रुर वर्ताव को बर्दास्त करती थी इसके शिवाय उसके पास कोई और चारा भी तो नहीं था | क्योंकि जब रक्षक हि भक्षक बन जाये तो कोई चाह कर भी क्या करें? और उसके पिता अयोद्धा प्रशाद जी जब मजबुत थे उस समय उनके प्रभाव और पुरानी रिस्तेदारी कि वजह से बिवाह हो गया था| जैसा कि पहले बतया गया लेकिन अब समय बदल गया है उस समय श्यामा के पिता ने अच्छा खासा दहेज भी दिया था लेकिन समय कि मार ने सब कुछ गुण

गोबर एक कर के उसके सामने रख दिया| जब श्यामा के परिवार वाले कमजोर हो गये, तो यशवन्त का रोब अत्यधिक बढ़ने लगा| वह अपने बाप का बिल्कुल सुनता नहीं था और अपनि मां का दुलारा था जिससे उसका पारा सातवें आसमान पर ही रहता था| वह यही समझता है कि वह जो भी कर रहा है वह अच्छा ही है| उसकी मां हमेशा यशवन्त का ही साथ देती थी| बात- बात पर श्यामा को ताने मारना कलुटी -- तु पागल है, अनपढ़ है,गन्दे स्वभाव की बेहया है इत्यादि अपशब्द अशोभनिय भासा का उपयोग करना उन सब कि दिन चर्या बन चुकी थी| खाने में कमि निकलना उसके प्रासः सभी काम में यशवन्त और उसकी मां को कमी नजर आती थी| जिसका बहाना बना कर उसे प्रताणित करते प्रायः मारते पिटते इत्यादि कुकर्मो को निरन्तर करते थे| वास्तव में यशवन्त एक बहुत निकृष्ट घटिया स्वभाव का मनचला स्वच्छन्द, आवारा, बदचलन, बदमिजाज अत्यन्त दुष्ट प्रकृत का हिन्सक स्वभाव का पुरुष स्वयं था| अपने सामने किसी की ना सुनने और मानने वाला स्वयं को सर्वे सर्वा सर्वस्व समझने वाला अपने शिवाय सभी को मुर्ख समझता था| या युं कहे तो गलत नहीं होगा कि वह सामन्जस्य तालमेल बनाने कि कला से बिल्कुल अन्भिज्ञ व्यक्ती था| जिसका सबसे अधिक प्रभाव उसके भावी जीवन के व्यक्तिगत परिवार पर पड़ता है| मुह में राम,बगल में छूरी वाली, बात उस पर खुब जचती है| वह श्यामा कि सिधाई और सरलता का फायदा आये दिन आजिवन उठाता रहा, क्योंकि श्यामा का कोई सहयोग करने वाला नहीं था| उसके तिन भाई थे वह तिनों बहुत कम पढ़ लिखे मन्द बुद्धि के व्यक्ति और बहुत अधिक सज्जन उसके जैसे ही स्वभाव के पूरुष थे| जो किसी प्रकार से श्यामा कि सहायता करने में समर्थ नहीं थे| इसलिये श्यामा भगवान भरोशे ही रहती थी क्योंकि लोगों से उसने सुन रखा था कि जिसका कोई नहीं होता है, उसका भगवान होता है| इसमें कितना सत्य है, वह यह नहीं जानती थी| लेकिन वह यह अवश्य मानती थी कि कोई शक्ति है जिसने इस जगत का सृजन किया है वही सब को उसके अच्छे बुरे कर्मो की सजा और पुरष्कार देता है| और उसी अदृश्य शक्ति पर भरोशा करके उन सब की सारी दुस्वारियों और असहनिय शारिरीक मानशिक आत्मिक क्लेशों को सह कर जिवन का निर्वाह करती रहती है| उसी प्रकार से करती जैसे एक भयंकर अपराध कि सजा याप्त कैदी जिस प्रकार जेल में अपनी सजा को काटता है| इसमें फर्क सिर्फ इतना है कि जेल का कैदी अपनी सजा कुछ दिन साल या महिनों के दीन पुरा होने पर जेल से मुक्त हो जाता है| और यहां पर श्यामा को इस सजा याप्त जीवन से मुक्त केवल उसकी मौत कर सकती है लेकिन अभी मौत कहां आरही है अभी तो उसको बहुत कुछ लिखना जिवन के इतिहास में जो अभी शेष भविष्य कि अन्धेरी गर्त में विद्यमान है | इसी प्रकार से यशवन्त के साथ उसकी जीवन नैया संसार सागर में हिलकोरे खाती हूई चलती रही| कभी मझंदार के भंवर में तो कभि साहिल किनारें की तरफ, परिन्दे के समान कभी भाउक हो कर कल्पना के आकाश में बिचरण करती थी| समय ने करवट लि और श्यामा कि कोख से आर्यन जैसा कुन्दन

बहुमूल्य पारसमणि उसके सहयोग उसको उसके दु:ख सागर से उत्पन्न करने के लिये अवतरित हुआ| क्योंकि कहा गया है पुत्र अर्थात जो पु नरक दु:ख है उससे त्राण त्र तारने पार करने वाला है वही वास्त्व में पुत्र है| जिस प्रकार कृष्ण अपने मां बाप को दु:खो से मुक्त करने के अपनी मां देवकी गर्भ से उत्पन्न होते है उसी प्रकार से आर्यन का उद्भव होता है| यहां पर आधुनिक बासुदेव है और आधुनिक देवकी है| बासुदेव के समान यशवन्त भी है वह समाज और परिवार के दबाव के कारण अपना सारा क्रोध और शक्ति का प्रयोग श्यामा पर करता है बाद में आगे चल कर आर्यन पर भी वहीं प्रक्रिया दोहराता है| लेकिन वहां से स्विकारोक्ति नही हैं प्रतिकार होता है जो आगे प्रस्तुत किया जायेगा अभी तो उसके जन्म की उत्सव का समय है| जिस प्रकार से कृष्ण के जन्म के समय भयंकर आंधी का आना और बारिष का निरन्तर कई दिनों तक पानी का बरसना नदी में भयंकर बाढ़ का आना सब कुछ वैसा ही था| लेकिन समय का अन्तर वह समय आर्यन के जन्म से ५१५० साल पहले का था| लेकिन प्रकृत वहीं साक्षी थी उसने कृष्ण के जन्म का भी खुब उत्सव मनाया था ऐसा ही कुछ आर्यन के जन्म पर भी किया यह सब संयोग कि बात ही है| कहां योगेश्वर कृष्ण कहां आर्यन दोनों में जमिन आसमान का फर्क है इसका निर्णय हम नहीं समय स्वयं करेगा| क्योंकि मानव बहुत बेबस और लाचार है वह सब कुछ नहीं जानत ना हि सब कुछ समझता ही है| कुछ प्रश्नों का उत्तर मानव के पास नहीं है| जिसका उत्तर वह स्वयं नहीं दे सकता है उसको या तो समय स्वयं उसका उत्तर देता है या फिर कोई योगी रहस्यदर्शि ही दे सकता है| आर्यन काफी सुन्दर बच्चा था | लोग बहुत खुस थे यद्यपि यशवन्त उससे कोई खास प्रशन्न नहीं था वह उसे एक नई मुसिबत के रुप में समझता था| क्योंकि यशवन्त अपने चार भाई और एक बहन में दूसरे नम्बर पर था, वह परिवार के और सदस्यें के साथ कृषि के कार्यों में हाथ नही बटाता था उसे अपना पुस्तैनि कार्य बहुत घटिया और निम्न कोटि का दिखाई देता था वह मौज मस्ती और जीवन की रंगिनीयों का आनन्द भोगना चाहता था जबकि परिवार के बड़े बुजुर्ग उससे चाहते थे, कि वह घर कि जिम्मेदारियों में उनका कुछ सहयोग करें ,क्योंकि परिवार काफी बड़ा था उसकी अपनी कुछ मान मर्यादा मान सम्मान समाज में वह उसे बरकरार रखना चाहते थे जो अब धिरे धिरे गिरने लगा था | क्योंकि प्राय: लोग काम से भागने लगे सब आराम पसन्द हो गये थोड़ी किसी वस्तु कमी और घर में भाईयों अथवा और सदस्यो से वह बवाल झगड़ा फसाद पर उतारु हो जाता था जो सभी के लिये चिन्ता विषय बन गया था| यशवन्त से बड़ा एक भाई था वह भी अभी बेकार था, जिसका अपना भि बड़ा परिवार हो गया था| यशवन्त और श्यामा के मध्य उनकी दुसरी समतान एक लड़की पैदा हुई, उसके बाद उसके दो लड़के और हुये, इस तरह से आर्यन अपने तिन भाई और एक बहन में सबसे बड़ा पुत्र है| श्यामा के लिए अब और मुसिबत बढ़ गई, उसे अपने चार बच्चो कि देख भाल के अतरिक्त और बहुत अधिक कार्य जो पहले नौकर करते थ अब वह सारा कार्य ईर्श्या और द्वेश के कीरण कराया जाता है| खुद

घर के सभी सदस्यों के लिये अकेल खाना पकाना जो २०-२५ लोगों का बड़ा संयुक्त परिवार था उन सब लोगों के लिये, और उसके लिये पुराने समय में पत्थल की चक्कि हुआ करती जिसमें आटा पिसना और इसके अतिरिक्त घर के बहुत सारे कार्य जो श्यामा को नियमित करने पड़ते थे| जो श्यामा के लिये बहुत अधिक पड़ते थे| चार छोटे बच्चों को पालना उनके लिये आवश्यक बस्तुओं को एकत्रित करना, जिसके लिये पहले यातना सहना , मार खाना फिर किसी वस्तु को प्राप्त करना, जो उसके लिये आशिर्वाद बन गया था| इस पर भी श्यामा यशवन्त को गन्दी और भद्दी दिखाई देती थी वह चाहता था वह हमेंशा सजी और सवरीं उसे दिखाई दे, उसे अपने बच्चे पसंद नहीं आते थे उसको फुटि आंख नही सुहाता था| अपना परिवार इस लिये वह बच्चों को भी खुस नहीं देखना चाहता था| उसे हमेंशा रोते -बिलखते और गन्दे कपड़ों मे रखना बच्चों को अच्छा नहीं लगता था| वह जब भि घर पर रहता तो उसकी मँ प्रायः उससे शिकायत कर के उसको भड़काती कि उसकी पत्नी क्या गल्तियां कि है, जिसके लिये वह कहती इसने खाना अच्छा नही बनायी उसमें नमक अधिक डाल दिया मिर्च मशाला का इसको अंदाज नहीं है| मैने इसको साबुन दिया लेकिन शुवर ने कपड़ा साफ नहीं किया इत्यादि इत्यादि, जिसको सुन कर अपनी माँ को प्रशन्न करने के लिये यशवन्त जैसे इन्तजार ही करता था| कि उसे कोई शिकायत या मौका मिले बच्चों और श्यामा को प्रताड़ित दण्डित करने का वह झुठा रोब दिखाता और चाहता कि सब कुछ उसके इच्छा नुसार हो| साफ- सुथरा रहन- सहन और जैसा फिल्मों दिखाया जाता है सब कुछ ठीक वैसा ही हो, उस तरह का सब कुछ आधुनिक परिवार हो| यह तो श्यामा के लिये अत्यन्त मुस्किल और दुसाध्य कार्य था क्योंकि वह बहुत यथार्थ वादि महिला के साथ सरल प्रकृति की थी ज्यादा झुठा दिखावा करना उसे नहीं आता था, जबकि यशवन्त इसमें काफी माहिर किस्म का काल्पनिक व्यक्ति था| फिर भी श्यामा शवन्त के मन माफिक बनने के लि दिन रात जी तोड़ परिश्रम करती कि जिससे वह और उसकी माँ उस पर अपनी दया दृष्टि बनाये रखें और खुश रहें| लेकिन वह सायद ही कभी अपने इस प्रयाश में वह सफल होती प्रायः उन सब का उसको लेकर रुग्ण दृष्टिकोण वाला स्वभाव बन गया था|क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति संसार को अपने अपने दृष्टि कोण या अपने नजरिये से देखता है|जैसा कि चारवाक इस संसार को भोग विलाश का आश्रय मानता है और कहता है कि कर्ज लेकर घी पीयो और जब तक जियों आनन्द से जीयो जिसका पक्षधर यशवन्त है| और दूसरी तरफ भारतिय दार्शनिक कहते है कि संसार दुःख है सर्वे विविकिनः संसार दुःख जिसका अनुभव श्यामा करती है दोनो एक साथ एक ही स्थान पर रहते है लेकिन दोनो कि अनुभूतिया बिल्कुल एक दूसरे से भिन्न है| इसीलिये कुछ लोग संसार को माया और कुछ लोग यथार्थ भी कहते है| संसार में दोनो वस्तुये है जो ज्यादा बुद्धिमान है वह श्यामा के प्रकृत के है और जो थोड़े कम बुद्धिमान है वह चारवाक के प्रकृति के हैं| कुछ ऐसे भी है जो इन दोनो से विरक्त और निस्पक्ष रहते है जैसे किचड़ में कमल रहता है लेकिन

वह किचड़ और पानी से निर्लिप्त रहता है|

अब जो-जो पढ़ना-पढ़ाना हो वह-वह अच्छी प्रकार परीक्षा करके होना योग्य है। परीक्षा पांच प्रकार से होती है-

एक-जो-जो ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव और वेदों से अनुकूल हो वह-वह सत्य और उससे विरुद्ध असत्य है।

दूसरी-जो-जो सृष्टिक्रम से अनुकूल वह-वह सत्य और जो-जो सृष्टिक्रम से विरुद्ध है वह सब असत्य है। जैसे-कोई कहै 'विना माता पिता के योग से लड़का उत्पन्न हुआ' ऐसा कथन सृष्टिक्रम से विरुद्ध होने से सर्वथा असत्य है।

तीसरी-'आप्त' अर्थात् जो धार्मिक विद्वान्, सत्यवादी, निष्कपटियों का संग उपदेश के अनुकूल है वह-वह ग्राह्य और जो-जो विरुद्ध वह-वह अग्राह्य है।

चौथी-अपने आत्मा की पवित्रता विद्या के अनुकूल अर्थात् जैसा अपने को सुख प्रिय और दुःख अप्रिय है वैसे ही सर्वत्र समझ लेना कि मैं भी किसी को दुःख वा सुख दूँगा तो वह भी अप्रसन्न और प्रसन्न होगा।

और पांचवीं-आठों प्रमाण अर्थात् प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, ऐतिह्य, अर्थापत्ति, सम्भवऔर अभाव इनमें से प्रत्यक्ष के लक्षणादि के जो-जो सूत्र नीचे लिखेंगे वे-वे सब न्यायशास्त्र के प्रथम और द्वितीय अध्याय के जानो।

इन्द्रियार्थसन्निकर्षोत्पन्नं ज्ञानमव्यपदेश्यमव्यभिचारिव्यवसायात्मकं

प्रत्यक्षम्। -न्याय० अध्याय १। आह्निक १। सूत्र ४।।

जो श्रोत्र, त्वचा, चक्षु, जिह्वा और घ्राण का शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध के साथ अव्यवहित अर्थात् आवरणरहित सम्बन्ध होता है । इन्द्रियों के साथ मन का और मन के साथ आत्मा के संयोग से ज्ञान उत्पन्न होता है उस को प्रत्यक्ष कहते हैं परन्तु जो व्यपदेश्य अर्थात् संज्ञासंज्ञी के सम्बन्ध से उत्पन्न होता है वह-वह ज्ञान न हो। जैसा किसी ने किसी से कहा कि 'तू जल ले आ' वह लाके उस के पास धर के बोला कि 'यह जल है' परन्तु वहां 'जल' इन दो अक्षरों की संज्ञा लाने वा मंगवाने वाला नहीं देख सकता है। किन्तु जिस पदार्थ का नाम जल है वही प्रत्यक्ष होता है और जो शब्द से ज्ञान उत्पन्न होता है वह शब्द-प्रमाण का विषय है। 'अव्यभिचारि' जैसे किसी ने रात्रि में खम्भे को देख के पुरुष का निश्चय कर लिया, जब दिन में उसको देखा तो रात्रि का पुरुषज्ञान नष्ट होकर

स्तम्भज्ञान रहा, ऐसे विनाशी ज्ञान का नाम व्यभिचारी है। ‘व्यवसायात्मक’ किसी ने दूर से नदी की बालू को देख के कहा कि ‘वहां वस्त्र सूख रहे हैं, जल है वा और कुछ है’ ‘वह देवदत्त खड़ा है वा यज्ञदत्त’ जब तक एक निश्चय न हो तब तक वह प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं है किन्तु जो अव्यपदेश्य, अव्यभिचारि और निश्चयात्मक ज्ञान है उसी को प्रत्यक्ष कहते हैं। दूसरा अनुमान-

अथ तत्पूर्वकं त्रिविधमनुमानं पूर्ववच्छेषवत्सामान्यतो दृष्टञ्च।।

-न्याय० अ० १। आ० १। सू० ५।।

ओ३म् प्रथम अध्याय समाप्त

२ जख्मी प्राणी की बेदर्द रूह

यह संसार है यहां हमेशा से ऐसा ही चलता रहता है| इसमें श्यामा भी है वह इसी के साथ अपना समय गुजारती है| वह औरत सभी प्रकार के दुःख- दर्द, मान- अपमान, सर्दी -गर्मी ,भुख -प्यास, दुःख -सुख, सबको सहर्ष स्विकार करके उनको सहती है और मुंह से कभी ऊह तक नहीं करती है| जिसको हि पतन्जली अपनी भाषा में महान तप के नाम से सम्बोधित करते है| अर्थात तपश्वियों की भाषा मे श्यामा एक तपश्वनी किस्म की स्त्री है| वैसे भि कहा जाता है कि पुरूष की तुलना में स्तरी अधिक दुःखो को सह सकती जैसा कि प्रमाण स्वरुप यहां श्यामा को उपस्थित प्रकृत ने किया है यह औरत अपवाद किस्म कि है| जो सहन शिलता की अदम्य और अद्भुत क्षमता रखती है| जब श्यामा और यशवन्त कि तिसरी संतान हुई तो यशवव्त तब तक बेकार था अर्थात कोई व्यवसाय या कई नौकरी नहीं करता था| घर पर ही रहता था, खेती किसानी से जो कुछ पैदा होता था उसी से सब का कार्य गुजर- बसर होता था| और यशवन्त अपना सारा खर्च अपनी माँ से लेता था| लेकिन वह यशवन्त के लिये परयाप्त नहीं पड़ता था, क्योंकि उसका व्यक्तिगत खर्च काफी अधिक था| उसके बड़े भाई ने कहा की तुम कहीं नौकरी करो जिससे तुम अपना और अपने परिवार का जीवकोपार्जन कर सको, उसने कहा कि वह नौकरि नहीं करेगा वह अपनी स्वयं कि दुकान करेगा या अपना व्यवसाय प्रारम्भ करेगा, जिसके लिये उसकी माँ और घर के सदश्यों ने मिल कर पैसे का इन्तजाम किया और उसके लिय उसके साथ उसके एक छोटे भाई को भी कर दिया जो व्यापार में उसकी सहायता करने के लिये| उसी बाजार में जहां पर पहले मुखिया का दुसरी पत्नी का बड़ा लड़का जिसकी हत्या कि गई थी, वही पर बाजार में अपनि दुकान थी जो रेल्वे ने जमिन लेने के बाद कुछ लोगों को दुकान बना कर दिया था वैजु कि जमिन में जो रेल्वे स्टेशन बना था जसमें हत्याये भी हुई थी| उसी में किराने कि दुकीन शुरु कि गई जिसका मालिक यशवन्त बना और उसका छोटा भाई जो काफी मजबुत ताकतवर था काफी मेहनत और परिश्रम करके धन्धे को जमका लिया और वहां से अच्छी खासी आमदनी होने लगी और घर में रुपया आने का एक नया श्रोत बन गया जिससे घर में यशवन्त की आव भगत पहले से और अधिक बढ़ गई, और वह घर का मालिक बन बैठा| अब सभी कार्य उसकी सहमति के वगैर नहीं होते थे, जो उसके मर्जी के खिलाफ कार्य करता वह उसकी खुब खिचाई करता एक प्रकार से लोग उससे डरने लगे थे| लेकिन श्याना कि मुसिबत किसी तरह कम नहीं हुई, यद्यपि और अधिक बढ़ गई, यशवन्त सुबह दुकान पर जाता नदि पार करके नाव से और शाम को आता तो बहाने बनाकर उसकी पिटाई करता, बाजार का सारा क्रोध रोज उस पर ही उतारता, जूआ खेलता शराब पिता यह सब आधुनिक शौक उसने पाल रक्खे थे| जिसके कारण अत्यधिक चिड़-चिड़ा स्वभाव का बन गया था|जब किसी को नहीं पाता तो बच्चों को बुरी तरह से

पिटता जिसमें आर्यन को भी उसके क्रोध का सबसे अधिक शिकार होना पड़ता था| वह एक प्रकार का आतातातई था लेकिन उसको कोई डर बस बोलता नहीं था क्योंकि वह अब मालिक भी पुरे परिवार का बन चुका जिससे सबको रुपया उससे मागना पड़ता था| उसको आर्यन को पिटने का एक नया बहाना मिल गया कि वह बिल्कुल बोलता नहीं था वह बिल्कुल सहम गया था| क्योंकि बचपन से शिषु अवस्था से ही उसका रुद्र अवतार देख कर वह उससे बुरी तरह से भय-भित रहता और वह बोलना नहीं सिख पाया जैसा कि प्रायः बच्चे कुछ एक साल में बोलने लगते है| लेकिन आर्यन ४-५साल तक बिल्कुल एक शब्द भी नहीं बोलता था|लोग उसको गुंगा कह कर सम्बोधित करने लगे थे| यशवन्त जब भी श्यमा और आर्यन को बात- बात पर पीटता तब उसकी माँ और परिवार के लोग उसकी खुब प्रशन्सा करते और उसकी बुद्धिमानी की दाद के साथ साबाशी देते कि देखो कितना अच्छा कार्य करता है| क्योंकि वह रुपया कमा कर लाता था, उसकी चलती थी पुरे परिवार पर उसका हाथ खुल चुका था|,परिवार पर हाथ -पैर चलाना, भांग खाना, यह सब मामुलि बात थी| दुकान पर छोटा भाई बैठता सारी दुकान दारी करता दिन रात वह परिश्रम करता, और यह नेतागिरी करता इसके साथ बड़े लोगों के शौक पाल रक्खा था| उसका समाज उसे बहुत प्रिय था| वह बच्चों को मारता नशे में घर पर जब आर्यन रोता तो उसके मुंह में कपड़े ठुस देता निर्दयता की सभी सिमा वह लांघ देता| इस प्रकार राक्षसी वृत्ति का खुब उपयोग करता| परिवार के लोग तो उसके स्वभाव से भलि प्रकार परिचित थे वह सब प्रायः उससे दूर ही रहते थे बहुत अधिक जरुरत पर ही उससे कोई अपनी गुहार करता था| लेकिन जब कोई परिवार के बाहर के व्यक्ति कहता कि तुम ऐसा क्यों कर रहे हो? तो वह कहता कि हमारे बच्चे परिवार है हम इसे खिला- पिला रहें हमारा अधिकार है हम इसे मारे या काटे तुम्हारा क्या जाता है? तुम यहां से चलते बनो, सामने वाला एक दो बार बोलता, जब नहीं सुनता और लोगों से उसका जानवर पना नहीं देखा जाता तो लोग शान्त हो कर अपने रास्ते पर आगे बढ़ जाते उस को बुरा भला कह कर| कोई उससे लड़ाई करना नहीं चाहता था|

जो प्रत्यक्षपूर्वक अर्थात् जिसका कोई एक देश वा सम्पूर्ण द्रव्य किसी स्थान वा काल में प्रत्यक्ष हुआ हो उसका दूर देश में सहचारी एक देश के प्रत्यक्ष होने से अदृष्ट अवयवी का ज्ञान होने को अनुमानकहते हैं। जैसे पुत्र को देख के पिता, पर्वतादि में वमूम को देख के अग्नि, जगत् में सुख दुःख देख के पूर्वजन्म का ज्ञान होता है। वह अनुमान तीन प्रकार का है। एक ‘पूर्ववत्’ जैसे बद्दलों को देख के वर्षा, विवाह को देख के सन्तानोत्पत्ति, पढ़ते हुए विद्यार्थियो ं को देख के विद्या होने का निश्चय होता है, इत्यादि जहां-जहां कारण को देख के कार्य का ज्ञान हो वह ‘पूर्ववत्’। दूसरा ‘शेषवत्’ अर्थात् जहां कार्य को देख के कारण का ज्ञान हो । जैसे नदी के प्रवाह की बढ़ती देख के ऊपर हुई वर्षा का, पुत्र को देख के पिता का, सृष्टि को देख के अनादि कारण का तथा कर्त्ता ईश्वर का और पाप पुण्य के

आचरण को देख के सुख दुःख का ज्ञान होता है, इसी को 'शेषवत्' कहते हैं। तीसरा 'सामान्यतोदृष्ट' जो कोई किसी का कार्य कारण न हो परन्तु किसी प्रकार का साधर्म्य एक दूसरे के साथ हो जैसे कोई भी विना चले दूसरे स्थान को नहीं जा सकता वैसे ही दूसरों का भी स्थानान्तर में जाना विना गमन के कभी नहीं हो सकता। अनुमान शब्द का अर्थ यही है कि अनु अर्थात् 'प्रत्यक्षस्य पश्चान्मीयते ज्ञायते येन तदनुमानम्' जो प्रत्यक्ष के पश्चात् उत्पन्न हो जैसे धूम के प्रत्यक्ष देखे विना अदृष्ट अग्नि का ज्ञान कभी नहीं हो सकता।

तीसरा उपमान- प्रसिद्धसाधर्म्यात्साध्यसाधनमुपमानम्।। -न्याय० अ० १। आ० १। सू० ६।।

जो प्रसिद्ध प्रत्यक्ष साधर्म्य से साध्य अर्थात् सिद्ध करने योग्य ज्ञान की सिद्धि करने का साधन हो उसको उपमान कहते हैं। 'उपमीयते येन तदुपमानम्' जैसे किसी ने किसी भृत्य से कहा कि 'तू देवदत्त के सदृश विष्णुमित्र को बुला ला' वह बोला कि-'मैंने उसको कभी नहीं देखा' उस के स्वामी ने कहा कि 'जैसा यह देवदत्त है वैसा ही वह विष्णुमित्र है' वा 'जैसी यह गाय है वैसा ही गवय अर्थात् नीलगाय होता है।' जब वह वहां गया और देवदत्त के सदृश उस को देख निश्चय कर लिया कि यही विष्णुमित्र है, उसको ले आया। अथवा किसी जंगल में जिस पशु को गाय के तुल्य देखा उसको निश्चय कर लिया कि इसी का नाम गवय है।

चौथा शब्दप्रमाण-

आप्तोपदेशः शब्दः।। -न्याय० अ० १। आ० १। सू० ७।।

जो आप्त अर्थात् पूर्ण विद्वान्, धर्मात्मा, परोपकारप्रिय, सत्यवादी, पुरुषार्थी, जितेन्द्रिय पुरुष जैसा अपने आत्मा में जानता हो और जिस से सुख पाया हो उसी के कथन की इच्छा से प्रेरित सब मनुष्यों के कल्याणार्थ उपदेष्टा हो अर्थात् जितने पृथिवी से लेके परमेश्वर पर्यन्त पदार्थों का ज्ञान प्राप्त होकर उपदेष्टा होता है। जो ऐसे पुरुष और पूर्ण आप्त परमेश्वर के उपदेश वेद हैं, उन्हीं को शब्दप्रमाण जानो।

पांचवां ऐतिं-

न चतुष्ट्वमैतिह्यार्थापत्तिसम्भवाभावप्रामाण्यात्।।

-न्याय० अ० २। आ० २। सू० १।।

जो इति ह अर्थात् इस प्रकार का था उस ने इस प्रकार किया अर्थात् किसी के जीवनचरित्र का नाम ऐतिह्य है।

छठा अर्थापनि-

'अर्थादापद्यते सा अर्थापत्तिः' केनचिदुच्यते 'सत्सु घनेषु वृष्टिः, सति कारणे कार्य्यं भवतीति किमत्र प्रसज्यते, असत्सु घनेषु वृष्टिरसति कारणे च कार्य्यं न भवति ।' जैसे किसी ने किसी से कहा कि 'बद्दल के होने से वर्षा और कारण के होने से कार्य्य उत्पन्न होता है' इस से विना कहे यह दूसरी बात सिद्ध होती है कि विना बद्दल वर्षा और विना कारण कार्य्य कभी नहीं हो सकता। सातवां सम्भव- 'सम्भवति यस्मिन् स सम्भवः' कोई कहे कि 'माता पिता के विना सन्तानोत्पत्ति, किसी ने मृतक जिलाये, पहाड़ उठाये, समुद्र में पत्थर तराये, चन्द्रमा के टुकड़े किये, परमेश्वर का अवतार हुआ, मनुष्य के सींग देखे और वन्ध्या के पुत्र और पुत्री का विवाह किया, इत्यादि सब असम्‌भव हैं। क्योंकि ये सब बातें सृष्टिक्रम से विरुद्ध हैं। जो बात सृष्टिक्रम के अनुकूल हो वही सम्भव है। आठवां अभाव- 'न भवन्ति यस्मिन् सोऽभावः' जैसे किसी ने किसी से कहा कि 'हाथी ले आ' वह वहां हाथी का अभाव देख कर जहां हाथी था वहां से ले आया। ये आठ प्रमाण। इन में से जो शब्द में ऐतिह्य और अनुमान में अर्थापत्ति, सम्भव और अभाव की गणना करें तो चार प्रमाण रह जाते हैं। इन चार प्रकार की परीक्षाओं से मनुष्य सत्यासत्य का निश्चय कर सकता है अन्यथा नहीं।

धर्मविशेषप्रसूताद् द्रव्यगुणकर्मसामान्यविशेषसमवायानां पदार्थानां

साधर्म्यवैधर्म्याभ्यां तत्त्वज्ञानान्निःश्रेयसम्।। -वै० अ० १। आ० १। सू० ४।।

जब मनुष्य धर्म के यथायोग्य अनुष्ठान करने से पवित्र होकर 'साधर्म्य' अर्थात् जो तुल्य धर्म है जैसा पृथिवी जड़ और जल भी जड़, 'वैधर्म्य' अर्थात् पृथिवी कठोर और जल कोमल, इसी प्रकार से द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष और समवाय इन छः पदार्थों के तत्त्वज्ञान अर्थात् स्वरूपज्ञान से 'निःश्रेयसम्' मोक्ष प्राप्त होता है।

पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशं कालो दिगात्मा मन इति द्रव्याणि।। -वै० अ० १। आ० १। सू० ५।।

पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश, काल, दिशा, आत्मा और मन ये नव द्रव्य हैं।

क्रियागुणवत्समवायिकारणमिति द्रव्यलक्षणम्।।

-वै० अ० १। आ० १। सू० १५।।

'क्रियाश्च गुणाश्च विद्यन्ते यस्मिंस्तत् क्रियागुणवत्' जिस में क्रिया, गुण और केवल गुण भी रहैं उस को द्रव्य कहते हैं। उन में से पृथिवी, जल, तेज, वायु, मन और आत्मा ये छः द्रव्य क्रिया और गुणवाले हैं तथा आकाश, काल और दिशा ये तीन क्रियारहित गुण वाले हैं। (समवायि) 'समवेतुं'

शीलं यस्य तत् समवायि प्राग्वृत्तित्वं कारणं समवायि च तत्कारणं च समवायिकारणम् ।' 'लक्ष्यते येन तल्लक्षणम्' जो मिलने के स्वभावयुक्त कार्य से कारण पूर्वकालस्थ हो उसी को 'द्रव्य' कहते हैं। जिस से लक्ष्य जाना जाय जैसा आंख से रूप जाना जाता है उसको 'लक्षण' कहते हैं।

रूपरसगन्धस्पर्शवती पृथिवी।। -वै० अ० २। आ० १। सू० १।।

रूप, रस, गन्ध, स्पर्शवाली पृथिवी है। उस में रूप, रस और स्पर्श अग्नि, जल और वायु के योग से हैं।

व्यवस्थितः पृथिव्यां गन्धः।। -वै० अ० २। आ० २। सू० २।।

पृथिवी में गन्ध गुण स्वाभाविक है। वैसे ही जल में रस, अग्नि में रूप, वायु में स्पर्श और आकाश में शब्द स्वाभाविक है।

रूपरसस्पर्शवत्य आपो द्रवाः स्निग्धाः।। -वै० अ० २। आ० १। सू० २।।

रूप, रस और स्पर्शवान् द्रवीभूत और कोमल जल कहाता है। परन्तु इन में जल का रस स्वाभाविक गुण तथा रूप, स्पर्श अग्नि और वायु के योग से हैं। –

अप्सु शीतता।। -वै० अ० २। आ० १। सू० ५।।

और जल में शीतलत्व गुण भी स्वाभाविक है।

तेजो रूपस्पर्शवत्।। -वै० अ० २। आ० १। सू० ३।।

जो रूप और स्पर्शवाला है वह तेज है। परन्तु इस में रूप स्वाभाविक और स्पर्श वायु योग से है।

स्पर्शवान् वायुः।। -वै० अ० २। आ० १। सू० ४।।

स्पर्श गुणवाला वायु है परन्तु इस में भी उष्णता, शीतता, तेज और जल के योग से रहते हैं।

त आकाशे न विद्यन्ते।। -वै० अ० २। आ० १। सू० ५।।

रूप, रस, गन्ध और स्पर्श आकाश में नहीं हैं। किन्तु शब्द ही आकाश का गुण है।

निष्क्रमणं प्रवेशनमित्याकाशस्य लिंगम्।। -वै० अ० २। आ० १। सू० २०।।

जिसमें प्रवेश और निकलना होता है वह आकाश का लिंग है।

कार्य्यान्तराप्रादुर्भावाच्च शब्दः स्पर्शवतामगुणः।।

-वै० अ० २। आ० १। सू० २५।।

अन्य पृथिवी आदि कार्यों से प्रकट न होने से शब्द; स्पर्शगुणवाले भूमि आदि का गुण नहीं हैं किन्तु शब्द आकाश ही का गुण है।

अपरस्मिन्नपरं युगपच्चिरं क्षिप्रमिति काललिंगानि।।

-वै० अ० २। आ० २। सू० ६।।

जिस में अपर पर (युगपत्) एक वार (चिरम्) विलम्ब (क्षिप्रम्) शीघ्र इत्यादि प्रयोग होते हैं उसको 'काल' कहते हैं।

नित्येष्वभावादनित्येषु भावात्कारणे कालाख्येति।।

-वै० अ० २। आ० २। सू० ९।।

जो नित्य पदार्थों में न हो और अनित्यों में हो इसलिये कारण में ही काल संज्ञा है।

इत इदमिति यतस्तद्दिश्यं लिंगम्।। -वै० अ० २। आ० २। सू० १०।।

यहां से वह पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, ऊपर, नीचे, जिस में यह व्यवहार होता है उसी को 'दिशा' कहते हैं।

आदित्यसंयोगाद् भूतपूर्वाद् भविष्यतो भूताच्च प्राची।।

-वै० अ० २। आ० २। सू० १४।।

जिस ओर प्रथम आदित्य का संयोग हुआ है, होगा, उस को पूर्व दिशा कहते हैं। और जहां अस्त हो उस को पश्चिम कहते हैं। पूर्वाभिमुख मनुष्य के दाहिनी ओर दक्षिण और बाईं ओर उत्तर दिशा कहाती है।

एतेन दिगन्तरालानि व्याख्यातानि।। -वै० अ० २। आ० २। सू० १६।।

इस से पूर्व दक्षिण के बीच की दिशा को आग्नेयी, दक्षिण पश्चिम के बीच को नैऋत, पश्चिम उत्तर के बीच को वायवी और उत्तर पूर्व के बीच को ऐशानी दिशा कहते हैं।

इच्छाद्वेषप्रयत्नसुखदुःखज्ञानान्यात्मनो लिंगमिति।।

-न्याय० अ० १। आ० १। सू० १०।।

जिस में (इच्छा) राग, (द्वेष) वैर, (प्रयत्न) पुरुषार्थ, सुख, दुःख, (ज्ञान) जानना, गुण हों वह जीवात्मा है। वैशेषिक में इतना विशेष है-

प्राणाऽपाननिमेषोन्मेषजीवनमनोगतीन्द्रियान्तिर्वकाराः सुखदुःखेच्छा– द्वेषप्रयत्नाश्चात्मनो लिंगानि।। -वै० अ० ३। आ० २। सू० ४।।

(प्राण) भीतर से वायु को निकालना (अपान) बाहर से वायु को भीतर लेना (निमेष) आंख को नीचे ढांकना (उन्मेष) आंख का ऊपर उठाना (जीवन) प्राण का धारण करना (मनः) मनन विचार अर्थात् ज्ञान (गति) यथेष्ट गमन करना (इन्द्रिय) इन्द्रियों को विषयों में चलाना उन से विषयों का ग्रहण करना (अन्तर्विकार) क्षुधा, तृषा, ज्वर, पीड़ा आदि विकारों का होना, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष और प्रयत्न ये सब आत्मा के लिंग अर्थात् कर्म और गुण हैं।

युगपज्ज्ञानानुत्पत्तिर्मनसो लिंगम्।। -न्याय० अ० १। आ० १। सू० १६।।

जिस से एक काल में दो पदार्थों का ग्रहण ज्ञान नहीं होता उस को मन कहते हैं। यह द्रव्य का स्वरूप और लक्षण कहा। अब गुणों का कहते हैं-

रूपरसगन्धस्पर्शाः संख्याः परिमाणानि पृथक्त्वं संयोगविभागौ परत्वा– ऽपरत्वे बुद्धयः सुखदुःखे इच्छाद्वेषौ प्रयत्नाश्च गुणाः।। -वै० अ० १। आ० १। सू० ६।।

रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, गुरुत्व, द्रवत्व, स्नेह, संस्कार, धर्म, अधर्म और शब्द ये २४ गुण कहाते हैं।

द्रव्याश्रय्यगुणवान् संयोगविभागेष्वकारणमनपेक्ष इति गुणलक्षणम्।।

-वै० अ० १। आ० १। सू० १६।।

गुण उसको कहते हैं कि जो द्रव्य के आश्रय रहै, अन्य गुण का धारण न करे, संयोग और विभाग में कारण न हो, अनपेक्ष अर्थात् एक दूसरे की अपेक्षा न करे उसका नाम गुण है।

श्रोत्रेपलब्धिर्बुद्धिनिर्ग्राह्यः प्रयोगेणाऽभिज्वलित आकाशदेशः शब्दः।। -महाभाष्य।।

जिस की श्रोत्रें से प्राप्ति जो बुद्धि से ग्रहण करने योग्य और प्रयोग से प्रकाशित तथा आकाश जिस का देश है वह शब्द कहाता है। नेत्र से जिस का ग्रहण हो वह रूप, जिह्वा से जिस मिष्टादि अनेक प्रकार का ग्रहण होता है वह रस, नासिका से जिस का ग्रहण होता है वह गन्ध, त्वचा से जिसका

ग्रहण होता है वह स्पर्श, एक द्वि इत्यादि गणना जिस से होती है वह संख्या, जिस से तौल अर्थात् हल्का भारी विदित होता है वह परिमाण, एक दूसरे से अलग होना वह पृथक्त्व, एक दूसरे के साथ मिलना वह संयोग, एक दूसरे से मिले हुए के अनेक टुकड़े होना वह विभाग, इस से यह पर है वह पर, उस से यह उरे है वह अपर, जिस से अच्छे बुरे का ज्ञान होता है वह बुद्धि, आनन्द का नाम सुख, क्लेश का नाम दुःख, (इच्छा) राग, (द्वेष) विरोध, (प्रयत्न) अनेक प्रकार का बल पुरुषार्थ, (गुरुत्व) भारीपन, (द्रवत्व) पिघल जाना, (स्नेह) प्रीति और चिकनापन, (संस्कार) दूसरे के योग से वासना का होना, (धर्म) न्यायाचरण और कठिनत्वादि (अधर्म) अन्यायाचरण और कठिनता से विरुद्ध कोमलता ये २४ गुण हैं।

उत्क्षेपणमवक्षेपणमाकुञ्चनं प्रसारणं गमनमिति कर्माणि।।

-वै० अ० १। आ० १। सू० ७।।

'उत्क्षेपण' ऊपर को चेष्टा करना 'अवक्षेपण' नीचे को चेष्टा करना

'आकुञ्चन' संकोच करना 'प्रसारण' फ़ैलाना 'गमन' आना जाना घूमना आदि इन को कर्म कहते हैं। अब कर्म का लक्षण-

एकद्रव्यमगुणं संयोगविभागेष्वनपेक्षकारणमिति कर्मलक्षणम्।।

-वै० अ० १। आ० १। सू० १७।।

'एकं द्रव्यमाश्रय आधारो यस्य तदेकद्रव्यं न विद्यते गुणो यस्य यस्मिन् वा तदगुणं संयोगेषु विभागेषु चाऽपेक्षारहितं कारणं तत्कर्मलक्षणं' अथवा 'यत् क्रियते तत्कर्म, लक्ष्यते येन तल्लक्षणम्, कर्मणो लक्षणं कर्मलक्षणम्' एक द्रव्य के आश्रित गुणों से रहित संयोग और विभाग होने में अपेक्षा रहित कारण हो उसको कर्म्म कहते हैं।

द्रव्यगुणकर्मणां द्रव्यं कारणं सामान्यम्।। -वै० अ० १। आ० १। सू० १८।।

जो कार्य द्रव्य गुण और कर्म का कारण द्रव्य है। वह सामान्य द्रव्य है।

द्रव्याणां द्रव्यं कार्यं सामान्यम्।। -वै० अ० १। आ० १। सू० २३।।

जो द्रव्यों का कार्य द्रव्य है वह कार्यपन से सब कार्यों में सामान्य है।

द्रव्यत्वं गुणत्वं कर्मत्वञ्च सामान्यानि विशेषाश्च।।

-वै० अ० १। आ० २। सू० ५।।

द्रव्यों में द्रव्यपन, गुणों में गुणपन, कर्मों में कर्मपन ये सब सामान्य और विशेष कहाते हैं। क्योंकि द्रव्यों में द्रव्यत्व सामान्य और गुणत्व कर्मत्व से द्रव्यत्व विशेष है; इसी प्रकार सर्वत्र जानना।

सामान्यं विशेष इति बुद्ध्यपेक्षम्।। -वै० अ० १। आ० २। सू० ३।।

सामान्य और विशेष बुद्धि की अपेक्षा से सिद्ध होते हैं। जैसे-मनुष्य व्यक्तियों में मनुष्यत्व सामान्य और पशुत्वादि से विशेष तथा स्त्रीत्व और पुरुषत्व इनमें ब्राह्मणत्व क्षत्रियत्व वैश्यत्व शूद्रत्व भी विशेष हैं। ब्राह्मण व्यक्तियों में ब्राह्मणत्व सामान्य और क्षत्रियादि से विशेष है इसी प्रकार सर्वत्र जानो।

इहेदमिति यतः कार्यकारणयोः स समवायः।।

-वै० अ० ७। आ० २। सू० २६।।

कारण अर्थात् अवयवों में अवयवी कार्यों में क्रिया क्रियावान्, गुण गुणी, जाति व्यक्ति कार्य्य कारण, अवयव अवयवी, इन का नित्य सम्बन्ध होने से समवाय कहाता है और जो दूसरा द्रव्यों का परस्पर सम्बन्ध होता है वह संयोग अर्थात् अनित्य सम्बन्ध है।

द्रव्यगुणयोः सजातीयारम्भकत्वं साधर्म्यम्।। -वै० अ० १। आ० १। सू० ९।।

जो द्रव्य और गुण का समान जातीयक कार्य्य का आरम्भ होता है उस को साधर्म्य कहते हैं। जैसे पृथिवी में जड़त्व धर्म और घटादि कार्योत्पादकत्व स्वसदृश धर्म है वैसे ही जल में भी जडत्व और हिम आदि स्वसदृश कार्य का आरम्भ पृथिवी के साथ जल का और जल के साथ पृथिवी का तुल्य धर्म है। अर्थात् 'द्रव्य- गुणयोर्विजातीयारम्भकत्वं वैधर्म्यम्' यह विदित हुआ कि जो द्रव्य और गुण का विरुद्ध धर्म और कार्य का आरम्भ है उस को वैधर्म्य कहते हैं। जैसे पृथिवी में कठिनत्व, शुष्कत्व और गन्धवत्त्व धर्म जल से विरुद्ध और जल का द्रवत्व, कोमलता और रसगुणयुक्तता पृथिवी से विरुद्ध है।

कारणभावात्कार्यभावः।। -वै० अ० ४। आ० १। सू० ३।।

कारण के होने ही से कार्य्य होता है।

न तु कार्याभावात्कारणाभावः।। -वै० अ० १। आ० २। सू० २।।

कार्य के अभाव से कारण का अभाव नहीं होता।

कारणाऽभावात्कार्याऽभावः।। -वै० अ० १। आ० २। सू० १।।

कारण के न होने से कार्य कभी नहीं होता।

कारणगुणपूर्वकः कार्यगुणो दृष्टः।। -वै० अ० २। आ० १। सू० २४।।

जैसे कारण में गुण होते हैं वैसे ही कार्य्य में होते हैं। परिमाण दो प्रकार का है-

अणुमहदिति तस्मिन्विशेषभावाद्विशेषाभावाच्च।।

-वै० अ० ७। आ० १। सू० ११।।

(अणु) सूक्ष्म (महत्) बड़ा। जैसे त्रसरेणु लिक्षा से छोटा और द्व्यणुक से बड़ा है तथा पहाड़ पृथिवी से छोटे, वृक्षों से बड़े हैं।

सदिति यतो द्रव्यगुणकर्मसु सा सत्ता।। -वै० अ० १। आ० २। सू० ७।।

जो द्रव्य, गुण, कर्मों के सत् शब्द अन्वित रहता है अर्थात् 'सद् द्रव्यम्, सद् गुणः, सत्कर्म' सद् द्रव्य, सद् गुण, सत् कर्म अर्थात् वर्त्तमान कालवाची शब्द का अन्वय सब के साथ रहता है।

भावोऽनुवृत्तेरेव हेतुत्वात्सामान्यमेव।। -वै० अ० १। आ० २। सू० ४।।

जो सब के साथ अनुवर्त्तमान होने से सत्तारूप भाव है सो महासामान्य कहाता है । यह क्रम भावरूप द्रव्यों का है और जो अभाव है वह पाचं पक्रार का होता है।

क्रियागुणव्यपदेशाभावात्प्रागसत्।। -वै० अ० ९। आ० १। सू० १।।

क्रिया और गुण के विशेष निमित्त के अभाव से प्राक् अर्थात् पूर्व (असत्) न था जैसे घट, वस्त्रदि उत्पत्ति के पूर्व नहीं थे इसका नाम 'प्रागभाव'।

दूसरा- सदसत्। -वै० अ० ९। आ० १। सू० २।।

जो होके न रहै जैसे घट उत्पन्न होके नष्ट हो जाय यह 'प्रध्वंसाभाव' कहाता है। तीसरा-

सच्चासत्।। -वै० अ० ९। आ० १। सू० ४।।

जो होवे और न होवे जैसे 'अगौरश्वोऽनश्वो गौः' यह घोड़ा गाय नहीं और गाय घोड़ा नहीं अर्थात् घोड़े में गाय का और गाय में घोड़े का अभाव और गाय में गाय, घोड़े में घोड़े का भाव है। यह 'अन्योऽन्याभाव' कहाता है। चौथा-

यच्चान्यदसदतस्तदसत्।। -वै० अ० ९। आ० १। सू० ५।।

जो पूर्वोक्त तीनों अभावों से भिन्न है उसको 'अत्यन्ताभाव' कहते हैं। जैसे-'नर शृंग' अर्थात् मनुष्य का सींग 'खपुष्प' आकाश का फ़ूल और 'बन्ध्या पुत्र' बन्ध्या का पुत्र इत्यादि। पांचवां-

नास्ति घटो गेह इति सतो घटस्य गेहसंसर्गप्रतिषेधः।।

-वै० अ० ९। आ० १। सू० १०।।

घर में घड़ा नहीं अर्थात् अन्यत्र है, घर के साथ घड़े का सम्बन्ध नहीं है। यह संसर्गाभाव कहाता है । ये पांच अभाव कहाते हैं।

इन्द्रियदोषात्संस्कारदोषाच्चाविद्या।। -वै० अ० ९। आ० २। सू० १०।।

इन्द्रियों और संस्कार के दोष से अविद्या उत्पन्न होती है।

तद्दुष्टं ज्ञानम्।। -वै० अ० ९। आ० २। सू० ११।।

जो दुष्ट अर्थात् विपरीत ज्ञान है उस को 'अविद्या' कहते हैं।

अदुष्टं विद्या।। -वै० अ० ९। आ० २। सू० १२।।

जो अदुष्ट अर्थात् यथार्थ ज्ञान है उसको 'विद्या' कहते हैं।।

पृथिव्यादिरूपरसगन्धस्पर्शा द्रव्याऽनित्यत्वादनित्याश्च।।

-वै० अ० ७। आ० १। सू० २।।

एतेन नित्येषु नित्यत्वमुक्तम्।। -वै० अ० ७। आ० १। सू० ३।।

जो कार्यरूप पृथिव्यादि पदार्थ और उनमें रूप, रस, गन्ध, स्पर्श गुण हैं ये सब द्रव्यों के अनित्य होने से अनित्य हैं और जो इस से कारणरूप पृथिव्यादि नित्य द्रव्यों में गन्धादि गुण हैं वे नित्य हैं।

सदकारणवन्नित्यम्।। -वै० अ० ४। आ० १। सू० १।।

जो विद्यमान हो और जिस का कारण कोई भी न हो वह नित्य है अर्थात्-

'सत्कारणवदनित्यम्' जो कारण वाले कार्यरूप द्रव्य गुण हैं वे अनित्य कहाते हैं।

अस्येदं कार्यं कारणं संयोगि विरोधि समवायि चेति लैंगिकम्।।

-वै० अ० ९। आ० २। सू० १।।

इसका यह कार्य वा कारण है इत्यादि समवायि, संयोगि, एकार्थसमवायि और विरोधि यह चार प्रकार का लैंगिक अर्थात् लिंगलिंगी के सम्बन्ध से ज्ञान होता है। 'समवायि' जैसे आकाश परिमाण वाला है, 'संयोगि' जैसे शरीर त्वचा वाला है इत्यादि का नित्य संयोग है, 'एकार्थसमवायि' एक अर्थ में दो का रहना जैसे कार्य 'रूप' स्पर्श कार्य का लिंग अर्थात् जनाने वाला है, 'विरोधि' जैसे हुई वृष्टि होने वाली वृष्टि का विरोधी लिंग है।

'व्याप्ति'—

नियतधर्मसाहित्यमुभयोरेकतरस्य व्याप्तिः। निजशक्त्युद्भवमित्याचार्याः।।

आधेयशक्तियोग इति पञ्चशिखः।। -सांख्यसूत्र २९, ३१, ३२।।

जो दोनों साध्य साधन अर्थात् सिद्ध करने योग्य और जिस से सिद्ध किया जाय उन दोनों अथवा एक, साधनमात्र का निश्चित धर्म का सहचार है उसी को व्याप्ति कहते हैं। जैसे धूम और अग्नि का सहचार है।।२९।। तथा व्याप्त जो धूम उस की निज शक्ति से उत्पन्न होता है अर्थात् जब देशान्तर में दूर धूम जाता है तब विना अग्नियोग के भी धूम स्वयं रहता है। उसी का नाम व्याप्ति है अर्थात् अग्नि के छेदन, भेदन, सामर्थ्य से जलादि पदार्थ धूमरूप प्रकट होता है।।३१।। जैसे महत्तत्त्वादि में प्रकृत्यादि की व्यापकता बुद्ध्यादि में व्याप्यता धर्म के सम्बन्ध का नाम व्याप्ति है जैसे शक्ति आधेयरूप और शक्तिमान् आधाररूप का सम्बन्ध है।।३२।।

इत्यादि शास्त्रें के प्रमाणादि से परीक्षा करके पढ़े और पढ़ावे। अन्यथा विद्यार्थियों को सत्य बोध कभी नहीं हो सकता। जिस-जिस ग्रन्थ को पढ़ावें उस-उस की पूर्वोक्त प्रकार से परीक्षा करके जो-जो सत्य ठहरे वह-वह ग्रन्थ पढ़ावें। जो-जो इन परीक्षाओं से विरुद्ध हों उन-उन ग्रन्थों को न पढ़ें न पढ़ावें। क्योंकि-

लक्षणप्रमाणाभ्यां वस्तुसिद्धिः।।

लक्षण जैसा कि 'गन्धवती पृथिवी' जो पृथिवी है वह गन्धवाली है। ऐसे लक्षण और प्रत्यक्षादि प्रमाण इन से सब सत्यासत्य और पदार्थों का निर्णय हो जाता है। इसके विना कुछ भी नहीं होता।

अथ पठनपाठनविधिः

अब पढ़ने पढ़ाने का प्रकार लिखते हैं-प्रथम पाणिनिमुनिकृतशिक्षा जो कि सूत्ररूप है उस की रीति अर्थात् इस अक्षर का यह स्थान, यह प्रयत्न, यह करण है। जैसे 'प' इस का ओष्ठ स्थान, स्पृष्ट प्रयत्न

और प्राण तथा जीभ की क्रिया करनी करण कहाता है। इसी प्रकार यथायोग्य सब अक्षरों का उच्चारण माता, पिता, आचार्य सिखलावें। तदनन्तर व्याकरण अर्थात् प्रथम अष्टाध्यायी के सूत्रें का पाठ जैसे ‘वृद्धिरादैच्’ फिर पदच्छेद जैसे ‘वृद्धिः, आत्, ऐच् वा आदैच्’, फिर समास ‘आच््च ऐच्च आदैच्’ और अर्थ जैसे ‘आदैचां वृद्धिसंज्ञा क्रियते’ अर्थात् आ, ऐ, औ की वृद्धि संज्ञा है। ‘तः परो यस्मात्स तपरस्तादपि परस्तपरः’ तकार जिस से परे और जो तकार से भी परे हो वह तपर कहाता है। इस से क्या सिद्ध हुआ जो आकार से परे त् और त् से परे ऐच् दोनों तपर हैं। तपर का प्रयोजन यह है कि ह्रस्व और प्लुत की वृद्धि संज्ञा न हुई। उदाहरण (भागः) यहां ‘भज्’ धातु से ‘घञ्’ प्रत्यय के परे ‘घ्, ञ्’ की इत्संज्ञा होकर लोप हो गया। पश्चात् ‘भज् अ’ यहां जकार के पूर्व भकारोत्तर अकार को वृद्धिसंज्ञक आकार हो गया है। तो भाज् पुनः ‘ज्’ को ग् हो अकार के साथ मिलके ‘भागः’ ऐसा प्रयोग हुआ।

‘अध्यायः’ यहाँ अधिपूर्वक ‘इङ्’ धातु के ह्रस्व इ के स्थान में ‘घञ्’ प्रत्यय के परे ‘ऐ’ वृद्धि और उस को आय् हो मिल के ‘अध्यायः’।

‘नायकः’ यहाँ ‘नीञ्’ धातु के दीर्घ ईकार के स्थान में ‘ण्वुल्’ प्रत्यय के परे ‘ऐ’ वृद्धि और उस को आय् होकर मिलके ‘नायकः’। और ‘स्तावकः’ यहां ‘स्तु’ धातु से ‘ण्वुल्’ प्रत्यय होकर ह्रस्व उकार के स्थान में ‘औ’ वृद्धि, आव् आदेश होकर अकार में मिल गया तो ‘स्तावकः’। (कृञ्) धातु से आगे ‘ण्वुल्’ प्रत्यय, उस के ‘ण् ल्’ की इत्संज्ञा होके लोप, ‘वु’ के स्थान में अक आदेश और ऋकार के स्थान में ‘आर्’ वृद्धि होकर ‘कारकः’ सिद्ध हुआ। जो-जो सूत्र आगे-पीछे के प्रयोग में लगें उन का कार्य सब बतलाता जाय और सिलेट अथवा लकड़ी के पट्टे पर दिखला-दिखला के कच्चा रूप धर के जैसे ‘भज+घञ्+सु’ इस प्रकार धर के प्रथम धातु के अकार का लोप पश्चात् घ्कार का फिर ञ् का लोप होकर ‘भज्+ अ़सु’ ऐसा रहा, फिर अ को आकार वृद्धि और ज् के स्थान में ‘ग्’ होने से ‘भाग्+अ़सु’ पुनः अकार में मिल जाने से ‘भाग़सु’ रहा, अब उकार की इत्संज्ञा ‘स्’ के स्थान में ‘रुँ’ होकर पुनः उकार की इत्संज्ञा लोप हो जाने पश्चात् ‘भागर्’ ऐसा रहा, अब रेफ के स्थान में (ः) विसर्जनीय होकर ‘भागः’ यह रूप सिद्ध हुआ। जिस-जिस सूत्र से जो-जो कार्य होता है उस-उस को पढ़ पढ़ा के और लिखवा कर कार्य्य कराता जाय। इस प्रकार पढ़ने पढ़ाने से बहुत शीघ्र दृढ़ बोध होता है।

एक बार इसी प्रकार अष्टाध्यायी पढ़ा के धातुपाठ अर्थसहित और दश लकारों के रूप तथा प्रक्रिया सहित सूत्रें के उत्सर्ग अर्थात् सामान्यसूत्र जैसे ‘कर्मण्यण्’ कर्म उपपद लगा हो तो धातुमात्र से अण् प्रत्यय हो, जैसे ‘कुम्भकारः’। पश्चात् अपवाद सूत्र जैसे ‘आतोऽनुपसर्गे कः’ उपसर्गभिन्न कर्म उपपद लगा हो तो आकारान्त धातु से ‘क’ प्रत्यय होवे अर्थात् जो बहुव्यापक जैसा कि कर्मोपपद लगा हो तो सब धातुओं से ‘अण्’ प्राप्त होता है उससे विशेष अर्थात् अल्प विषय उसी पूर्व सूत्र के विषय में

से आकारान्त धातु को ‘क’ प्रत्यय ने ग्रहण कर लिया। जैसे उत्सर्ग के विषय में अपवाद सूत्र की प्रवृत्ति होती है वैसे अपवाद सूत्र के विषय में उत्सर्ग सूत्र की प्रवृत्ति नहीं होती। जैसे चक्रवर्ती राजा के राज्य में माण्डलिक और भूमिवालों की प्रवृत्ति होती है वैसे माण्डलिक राजादि के राज्य में चक्रवर्ती की प्रवृत्ति नहीं होती।

इसी प्रकार पाणिनि महर्षि ने सहस्र श्लोकों के बीच में अखिल शब्द, अर्थ और सम्बन्धों की विद्या प्रतिपादित कर दी है। धातुपाठ के पश्चात् उणादिगण के पढ़ाने में सर्व सुबन्त का विषय अच्छी प्रकार पढ़ा के, पुनः दूसरी वार शंका, समाधान वार्तिक, कारिका, परिभाषा की घटनापूर्वक अष्टाध्यायी की द्वितीयानुवृत्ति पढ़ावे।

तदनन्तर महाभाष्य पढ़ावे। अर्थात् जो बुद्धिमान्, पुरुषार्थी, निष्कपटी, विद्यावृद्धि के चाहने वाले नित्य पढ़ें-पढ़ावें तो डेढ़ वर्ष में अष्टाध्यायी और डेढ़ वर्ष में महाभाष्य पढ़ के तीन वर्ष में पूर्ण वैयाकरण होकर वैदिक और लौकिक शब्दो का व्याकरण से, पुनः अन्य शास्त्रो को शीघ्र सहज में पढ़ पढ़ा सकते हैं। किन्तु जैसा बड़ा परिश्रम व्याकरण में होता है वैसा श्रम अन्य शास्त्रें में करना नहीं पड़ता। और जितना बोध इनके पढ़ने से तीन वर्षों में होता है उतना बोध कुग्रन्थ अर्थात् सारस्वत, चन्द्रिका, कौमुदी, मनोरमादि के पढ़ने से पचास वर्षों में भी नहीं हो सकता क्योंकि जो महाशय महर्षि लोगों ने सहजता से महान् विषय अपने ग्रन्थों में प्रकाशित किया है वैसा इन क्षुद्राशय मनुष्यों के कल्पित ग्रन्थों में क्योंकर हो सकता है?

महर्षि लोगों का आशय, जहाँ तक हो सके वहाँ तक सुगम और जिस के ग्रहण में समय थोड़ा लगे इस प्रकार का होता है। और क्षुद्राशय लोगों की मनसा ऐसी होती है कि जहाँ तक बने वहाँ तक कठिन रचना करनी। जिस को बड़े परिश्रम से पढ़ के अल्प लाभ उठा सकें जैसे पहाड़ का खोदना कौड़ी का लाभ होना। और आर्ष ग्रन्थों का पढ़ना ऐसा है कि जैसा एक गोता लगाना बहुमूल्य मोतियों का पाना।

व्याकरण को पढ़ के यास्कमुनिकृत निघण्टु और निरुक्त छः वा आठ महीने में सार्थक पढ़ें और पढ़ावें। अन्य नास्तिककृत अमरकोशादि में अनेक वर्ष व्यर्थ न खोवें।

तदनन्तर पिंगलाचार्यकृत छन्दोग्रन्थ जिस से वैदिक लौकिक छन्दों का प्रिज्ञान, नवीन रचना और श्लोक बनाने की रीति भी यथावत् सीखें। इस ग्रन्थ और श्लोकों की रचना तथा प्रस्तार को चार महीने में सीख पढ़ पढ़ा सकते हैं। और वृत्तरत्नाकार आदि अल्पबुद्धिप्रकल्पित ग्रन्थों में अनेक वर्ष न खोवें।

तत्पश्चात् मनुस्मृति, वाल्मीकि रामायण और महाभारत के उद्योगपर्वान्तर्गत विदुरनीति आदि अच्छे-

अच्छे प्रकरण जिनसे दुष्ट व्यसन दूर हों और उत्तमता सभ्यता प्राप्त हो वैसे को काव्यरीति से अर्थात् पदच्छेद, पदार्थोक्ति, अन्वय, विशेष्य विशेषण और भावार्थ को अध्यापक लोग जनावें और विद्यार्थी लोग जानते जायें। इन को वर्ष के भीतर पढ़ लें।

तदनन्तर पूर्वमीमांसा, वैशेषिक, न्याय, योग, सांख्य और वेदान्त अर्थात् जहाँ तक बन सके वहाँ तक ऋषिकृत व्याख्यासहित अथवा उत्तम विद्वानों की सरल व्याख्यायुक्त छः शास्त्रें को पढ़ें-पढ़ावें परन्तु वेदान्त सूत्रें के पढ़ने के पूर्व ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय,छान्दोग्य और बृहदारण्यक इन दश उपनिषदों को पढ़ के छः शास्त्रें के भाष्य वृत्तिसहित सूत्रें को दो वर्ष के भीतर पढ़ावें और पढ़ लेवें।

पश्चात् छः वर्षों के भीतर चारों ब्राह्मण अर्थात् ऐतरेय, शतपथ, साम और गोपथ ब्राह्मणों के सहित चारों वेदों के स्वर, शब्द, अर्थ, सम्बन्ध तथा क्रियासहित पढ़ना योग्य है। इसमें प्रमाण-

स्थाणुरयं भारहारः किलाभू दधीत्य वेदं न विजानाति योऽर्थम्।

योऽर्थज्ञ इत्सकलं भद्रमश्नुते नाकमेति ज्ञानविधूतपाप्मा ।।

यह निरुक्त में मन्त्र है

जो वेद को स्वर और पाठमात्र पढ़ के अर्थ नहीं जानता वह जैसा वृक्ष, डाली पत्ते, फल, फूल और अन्य पशु धान्य आदि का भार उठाता है वैसे भारवाह अर्थात् भार को उठाने वाला है। और जो वेद को पढ़ता और उनका यथावत् अर्थ जानता है ज्ञान से पापों को छोड़ पवित्र धर्माचरण के प्रताप से वही सम्पूर्ण आनन्द को प्राप्त होके देहान्त के पश्चात् सर्वानन्द को प्राप्त होता है।

उत त्वः पश्यन्न ददर्श वाचमुत त्वः शृण्वन्न शृणोत्येनाम् ।

उतो त्वस्मै तन्वं१ वि सस्रे जायेव पत्य उशती सुवासाः ।।

– ऋ मं० १०। सू० ७१। मं० ४।।

जो अविद्वान् हैं वे सुनते हुए नहीं सुनते, देखते हुए नहीं देखते, बोलते हुए नहीं बोलते । अर्थात् अविद्वान् लोग इस विद्या वाणी के रहस्य को नहीं जान सकते किन्तु जो शब्द अर्थ और सम्बन्ध का जानने वाला है उस के लिये विद्या-जैसे सुन्दर वस्त्र आभूषण धारण करती अपने पति की कामना करती हुई स्त्री अपना शरीर और स्वरूप का प्रकाश पति के सामने करती है वैसे विद्या विद्वान् के लिये अपने स्वरूप का प्रकाश करती है, अविद्वानों के लिये नहीं।

ऋचो अक्षरे परमे व्योमन्यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः ।

यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति य इत्तद्विदुस्त इमे समासते ।।

— ऋ मं० १। सू० १६४ १। मं० ३९ ।।

जिस व्यापक अविनाशी सर्वोत्कृष्ट परमेश्वर में सब विद्वान् और पृथिवी सूर्य आदि सब लोक स्थित हैं कि जिसमें सब वेदों का मुख्य तात्पर्य है उस ब्रह्म को जो नहीं जानता वह ऋग्वेदादि से क्या कुछ सुख को प्राप्त हो सकता है? नहीं-नहीं, किन्तु जो वेदों को पढ़ के धर्मात्मा योगी होकर उस ब्रह्म को जानते हैं वे सब परमेश्वर में स्थित होके मुक्तिरूपी परमानन्द को प्राप्त होते हैं। इसलिए जो कुछ पढ़ना वा पढ़ाना हो वह अर्थज्ञान सहित चाहिये।

इस प्रकार सब वेदों को पढ़ के आयुर्वेद अर्थात् जो चरक, सुश्रुत आदि ऋषि मुनि-प्रणीत वैद्यक शास्त्र है, उस को अर्थ, क्रिया, शस्त्र, छेदन, भेदन, लेप, चिकित्सा, निदान, औषध, पथ्य, शारीर, देश, काल और वस्तु के गुण ज्ञानपूर्वक ४ वर्ष के भीतर पढ़ें पढ़ावें।

तदनन्तर धनुर्वेद अर्थात् राजसम्बन्धी काम करना है इसके दो भेद, एक निज राजपुरुषसम्बन्धी और दूसरा प्रजासम्बन्धी होता है। राजकार्य में सब सेना के अध्यक्ष शस्त्रस्त्रविद्या नाना प्रकार के व्यूहों का अभ्यास अर्थात् जिसको आजकल 'कवायद' कहते हैं। जो कि शत्रुओं से लड़ाई के समय में क्रिया करनी होती है उन को यथावत् सीखें और जो जो प्रजा के पालने और वृद्धि करने का प्रकार है उन को सीख के न्यायपूर्वक सब प्रजा को प्रसन्न रक्खें दुष्टों को यथायोग्य दण्ड, श्रेष्ठों के पालन का प्रकार सब प्रकार सीख लें।

इस राजविद्या को दो-दो वर्ष में सीख कर गान्धर्ववेद कि जिस को गानविद्या कहते हैं। उस में स्वर, राग, रागिणी, समय, ताल, ग्राम, तान, वादित्र, नृत्य, गीत आदि को यथावत् सीखें परन्तु मुख्य करके सामवेद का गान वादित्रवादनपूर्वक सीखें और नारदसंहिता आदि जो-जो आर्ष ग्रन्थ हैं उन को पढ़ें परन्तु भड़वे वेश्या और विषयासक्तिकारक वैरागियों के गर्दभशब्दवत् व्यर्थ आलाप कभी न करें।

अर्थवेद कि जिस को शिल्पविद्या कहते हैं उस को पदार्थ गुण-विज्ञान क्रियाकौशल, नानाविध पदार्थों का निर्माण, पृथिवी से लेके आकाश पर्यन्त की विद्या को यथावत् सीख के अर्थ अर्थात् जो ऐश्वर्य को बढ़ाने वाला है। उस विद्या को सीख के दो वर्ष में ज्योतिषशास्त्र सूर्यसिद्धान्तादि जिस में बीजगणित, अंक, भूगोल, खगोल और भूगर्भविद्या है इस को यथावत् सीखें।

तत्पश्चात् सब प्रकार की हस्तक्रिया, यन्त्रकला आदि को सीखें, परन्तु जितने ग्रह, नक्षत्र, जन्मपत्र, राशि, मुहूर्त आदि के फल के विधायक ग्रन्थ हैं उन को झूठ समझ के कभी न पढ़ें और पढ़ावें।

एक बार आर्यन जब करिब दो वर्ष का था, उस समय में बहुत बड़ी बाढ़ आई और जब सारा गामव पानी बुरी तरह से डुब गया| काफि लोग अपना घर बार छोड़ कर अपनी जान बचाने कि लिये गांव से बाहर यसुरक्षित अस्थान के लिये पलायन करने लगे| जिनके पास मजबुत मकान थे वही पर रह कर पानी वापिस घटने का इन्तजार करने लगे| जब पुरे गांव में पानी भरा था उससे यशवन्त का घर भी अछुता नहीं था वहां सब पानी - पानी ही चारों तरफ भर रह था| उसी समय एक नाटकिय घटना घटी, श्यामा ने आर्यन को एक खाट पर सुला दिया तथा वह स्वयं घर में ईधर-उधर किसी कार्य से चली गई| इधर आर्यन चारपाई पर उछल - कुद करने लगा और इसी में चारपाई से बिल्कुल निचे गिर उसका दुर्भाग्य ही था कि वह जहां गिरा वहां पर निचे एक बड़ा सा पत्थर था जिसका एक कोना जो आर्यन के सिर में घुस गया और वहां से तेज धारा खुन कि निकलने लगी| जिसके अथाह पिड़ा से वह तत्काल बेहोस हो गया| जब यशवन्त को पता चला कि आर्यन को सर में भारी चोट के कारण बेहोस हो गया है| पुरे घर में अफरा- तफरी की माहौल बन गया किसी को कुछ समझ में नही आरहा था कि अब क्या किया जाये? तो उसने कहा मर जाने दो साले को, जब देखो तब एक नई मुसिबत खड़ा करके परेशान करता है| इसके बाद वह श्यामा को मारने पिटने के साथ बुरा- भला खरी- खोटी सुनाता है, और घर से बाहर निकल जाता है| उसी गांव में यशवन्त के घर के ठीक पिछे एक बुढ़िया अकेली रहती थी| उसे आर्यन और श्यामा पर काफि दया आ गई, वहां उस समय गांव में कोई अच्छा चिकित्सक नहीं था| ईस लिये उसने अपनी जान की परवाह किये वगैर जब चारों तरफ पानी भरा था| नदी का पानी उफान पर हिलकोरें लेकर लहरों के साथ अपनि सारी हदों को तोड़कर सबको अपने में समटने के लुये बेताब हो कर बढ़ रहा था| उसी बिच किसी तरह से एक मांझी और उसकी नौका को मंगा कर वह आर्यन को लेकर बाजार गई, जहां पर अच्छे चिकित्सक से उसका इलाज कराया| जिससे आर्यन कुछ एक दिन में बिल्कुल ठीक भला चंगा हो गया, जिससे श्यामा की जान में जान आई वह तो बिल्कुल दु:खी और असहाय हो गई थी| उसने उस बुढ़िया को बहुत धन्यवाद दिया और उसके अहसान के बोझ से हमेंशा- हमेंशा के लिये दब गई| लेकिन उस बुढ़िया औरत ने कहा यह तो उसका धर्म था| यदि उस समय यशवन्त कि सुनी जाती तो आर्यन का बचना मुस्किल था अर्थात उसकी मृत्यु निश्चित थी ऐसा चिकित्सक ने कहा था| उस मौत से आर्यन तो बच गया लेकिन इस मृत्यु लोक उसके लिये प्रकृत रोज नई तरह के मृत्यु कि व्यवस्था कि है और यमराज के समान यशवन्त को उसका स्वामी बनाया है उससे कौन बचा सकता है?

ऐसा प्रयत्न पढ़ने और पढ़ाने वाले करें कि जिस से तीस व चौंतीस वर्ष के भीतर समग्र विद्या उत्तम शिक्षा प्राप्त होके मनुष्य लोग कृतकृत्य होकर सदा आनन्द में रहैं। जितनी विद्या इस रीति से तीस वा चौंतीस वर्षों में हो सकती है उतनी अन्य प्रकार से शत-वर्ष में भी नहीं हो सकती। ऋषिप्रणीत ग्रन्थों को इसलिये पढ़ना चाहिये कि वे बड़े विद्वान् सब शास्त्रवित् और धर्मात्मा थे। और अनृषि

अर्थात् जो अल्पशास्त्र पढ़े हैं और जिन का आत्मा पक्षपातसहित है, उनके बनाए हुए ग्रन्थ भी वैसे ही हैं। पूर्वमीमांसा पर व्यासमुनिकृत व्याख्या, वैशेषिक पर गोतममुनिकृत, न्यायसूत्र पर वात्स्यायनमुनिकृत भाष्य, पतञ्जलिमुनिकृतसूत्र पर व्यासमुनिकृत भाष्य, कपिलमुनिकृत सांख्यसूत्र पर भागुरिमुनिकृत भाष्य, व्यासमुनिकृत वेदान्तसूत्र पर वात्स्यायनमुनिकृत भाष्य अथवा बौधायनमुनिकृत भाष्य वृत्ति सहित पढ़ें पढ़ावें। इत्यादि सूत्रें को कल्प अंग में भी गिनना चाहिये।

जैसे ऋग्यजुः साम और अथर्व चारों वेद ईश्वरकृत हैं वैसे ऐतरेय, शतपथ, साम और गोपथ चारों ब्राह्मण, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निघण्टु, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष छः वेदों के अंग,मीमांसादि छः शास्त्र वेदों के उपांग; आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद और अर्थवेद ये चार वेदों के उपवेद इत्यादि सब ऋषि मुनि के किये ग्रन्थ हैं। इनमें भी जो जो वेदविरुद्ध प्रतीत हो उस-उस को छोड़ देना क्योंकि वेद ईश्वरकृत होने से निर्भ्रान्त स्वतःप्रमाण अर्थात् वेद का प्रमाण वेद ही से होता है । ब्राह्मणादि सब ग्रन्थ परतः प्रमाण अर्थात् इनका प्रमाण वेदाधीन है। वेद की विशेष व्याख्या 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' में देख लीजिये और इस ग्रन्थ में भी आगे लिखेंगे।

अब जो परित्याग के योग्य ग्रन्थ हैं उनका परिगणन संक्षेप से किया जाता है अर्थात् जो-जो नीचे ग्रन्थ लिखेंगे वह-वह जाल ग्रन्थ समझना चाहिये। व्याकरण में कातन्त्र, सारस्वत, चन्द्रिका, मुग्धबोध, कौमुदी, शेखर, मनोरमा आदि। कोश में अमरकोशादि। छन्दोग्रन्थ में वृत्तरत्नाकरादि। शिक्षा में 'अथ शिक्षां प्रवक्ष्यामि पाणिनीयं मतं यथा' इत्यादि। ज्यौतिष में शीघ्रबोध, मुहूर्त्तचिन्तामणि आदि। काव्य में नायिकाभेद, कुवलयानन्द, रघुवंश, माघ, किरातार्जुनीयादि। मीमांसा में धर्मसिन्धु, व्रतार्कादि। वैशेषिक में तर्कसंग्रहादि। न्याय में जागदीशी आदि। योग में हठप्रदीपिकादि। सांख्य में सांख्यतत्त्वकौमुद्यादि। वेदान्त में योगवासिष्ठ पञ्चदश्यादि। वैद्यक में शार्ंगधरादि। स्मृतियों में मनुस्मृति के प्रक्षिप्त श्लोक और अन्य सब स्मृति, सब तन्त्र ग्रन्थ, सब पुराण, सब उपपुराण, तुलसीदासकृत भाषारामायण, रुक्मिणीमंगलादि और सर्वभाषाग्रन्थ ये सब कपोलकल्पित मिथ्या ग्रन्थ हैं।

अज्ञान और धुन्द्ध का बादल कितना शक्तिशाली और बिशाल है, जो सूर्य जैसे विशाल प्रकाशपुन्ज को भी जो उर्जा का सबसे शक्ति शाली विश्व का भन्डार है, उसे भी अपने अन्धेरे के आगोश में समा लेता है| तो मानव कि क्या क्षमता है? उसके सामने अर्थात एक मिट्टि के कण तिनका से अधिक नहीं है| जो पानि पाते ही उसमें एककार हो जाता है| पानि में से जिस प्रकार मिट्टि के कड़ों को निकलना आसान नहीं है, उसी प्रकार मानव जीवन से अज्ञान के संसकार को निकालना कठिन और दुस्कर है, लेकिन असंभव नहीं है| इसि कारण से मानव दुर्लभ जीवन सभी को मिलता है, जिसमें एक आर्यन भी है|

आर्यन चार वर्षों तक लगातार नहीं बोला, मौन ही रहा करता| लोग उसे गूंगा कह कर बुलाने लगे थे, उसको बुलवाने के लिये काफी प्रयाश किये जाने लगे, उसे लोग उसका नाम आर्यन कह कर पुकारते वह उनकी तरफ देखता लेकिन जुबान से कुछ नहीं बोलता था| वह सुन कर हुं हां करता जैसे मौन ब्रत का उसने समाधि ले लिया है, कई वर्षों तक ऐसा ही चलता रहा कि एक दिन अचानक उसका चाचा जो बाजार में दुकान चलाता था वह आर्यन को पकड़ कर अपने साथ घर से बाहर लाया और उसको बोलने के लिये विवश करने लगा| काफी प्रयास के बाद भी जब आर्यन नहीं बोला तो उसने कहा आज इसको बोलना ही होगा नहीं तो मै इसको कुयें में डाल दुंगा, क्योंकि उस समय पिने के लिये पानी कुयें से निकाला जाता था| जो भी ठीक ठाक घर थे उनके यहां कुआं अवश्य होता था| ऐसा हि एक कुआं आर्यन के घर के सामने जो बहुत पुराना उसके पुर्वजों ने बनवाया था| आज उसके चाचा ने उसे एक बड़ी कान्डाल पानी कि जो थी, उसमें बैठा कर रस्सी के सहारे कुयें में ढिल दि, और आर्यन पर दबाव डालने लगा की वह बोले अन्यथा उसे वह पानी में डुबो कर मार देगा| जब आर्यन कुयें में पानी के पास पहुंचा तो अचानक माँ-माँ कह कर रोने लगा इस पर उसको बाहर कुयें से निकाल लिया उसके चाचा ने, इसके बाद आर्यन बोलने लगा, इस तरह काफी परिश्रम और मशक्कत के बाद आर्यन ने अपनी जुबान खोली| और लगातार बोलता रहा और कुछ ही दिनों में सब कुछ धारा प्रवाह बोलने लगा| अपनी मातृभाषा में, यशवन्त जब उसे मारता या डाटता फटकारता तो उसे बहुत बुरा लगता, वह अब सब कुछ समझने लगा था| वह यशवन्त के सामने तो बहुत डरता था, क्योंकि वह जानवरों कि भाती बिना कारण के पिटना प्रारम्भ कर देता था| लेकिन जब यशवन्त घर पर नहीं रहता या घर के बाहर रहता था, तब आर्यन खुब बोल कर लोगों का मनोरन्जन करता अपनी नितिपूर्वक बातों से| आर्यन एक बहुत ज्यादा समझदार और बच्चों कि तुलना में था इसके साथ चालाक और इमानदार झुठ बोलने से उसे चिढ़ थी| वह बचपन से ही बहुत तेज तर्राक सहनशिल विवेकी था| जो यशवन्त को बुरा नहीं लगता था| वह उससे स्वयं के लिये खतरेमहशुष करने लगा था इसलिये वह उसे बर्बाद मुर्ख बनाने के प्रयाश में निरन्तप पुरुषार्थ करता रहता था| वह पित कम कशाई कि तरह अधिक व्यवहार करता था| वह तो बहाने तलाश करता हैं कि किस प्रकार से आर्यन को मार या डाट- फटकार सके| इसका कुछ कारण आर्यन कि मां श्यामा को मानता है, और श्यामा के लिये वह उसके परिवार कि उन पुरानी बातो का बदला लेता है जो यशवन्त के हृदय में बहुत सी पुरानी घटनाओं ने घर कर लिया है जो उसे मजबुर करती है कि वह किसी भी प्रकार से माँ बेटे अर्थात आर्यन और श्यामा को प्रताणित कर के यातना देने के लिये, जैसे किसी अदृश्य ताकत ने नियुक्त कर रखा है उसे, या फिर उसको दौरा पड़ता है| उसे बहुत बड़ी मानशिक बिमारी है, जिसका ईलाज दुसरे जो निरपराध अपने आश्रित प्राणी है उनको तड़पाने कष्ट देने से उसे आराम मिलता है| यहीं जीवन का दस्तुर और हकिकत है जो हर आदमी को बेबश,

लाचार, और मजबुर करता है वह करने के लिये जो वह करना नहीं चाहता लेकिन वह करता है जैसा कि आर्यन कहां जानता है? कि उसको किस जन्म के अपराध कि सजा मिल रही है, अभी तो केवल एक यशवन्त जो उसके लिये संकट बना है, आगे उसके लिये कितने हजारों उससे भि अधिक खतरनाक यशवन्त मिलेगें जो उसके लिये दु:खो का पहाड़ उसके उपर गिरायेंगें| लेकिन इन सब का जड़ मुल कारण यह यशवन्त ही है, वह छोटा बच्चा समझ नहीं पाता है कि आखिर यह सब उसके हीसाथ क्यों हो रहा है? इन्हीं सब प्रश्नों का उत्तर जानने के लिये वह विद्यालय में जाना प्रारम्भ करता है| गांव के पास ही एक छोटा प्राथमिक पाठशाला है, जहां पर घर के दूसरे बच्चें पढ़ने के लिये जाते है, आर्यन को भी श्यामा शुबह- शुबह तैयार करके विद्यालय भेजने लगी| वहां विद्यालय में एक दिन आर्यन के साथ एक घटना घटी वह पहली कक्षा में बैठता था, जहा पर एक बहन जी शिक्षिका थी, जो आर्यन के मासुम, निर्दोश चेहरें को देख कर प्रायः मोहित काफी आकर्षित हो जाती और वह उससे प्रेम करने लगी थी| आर्यन विद्यालय में अपनी कक्षा का सबसे अधिक सुन्दर और आकर्षक बच्चा था जिसके कारण बहन जी ज्यादा अनुशाषन पर जोर नहीं देती थी| और ना ही उसे कुछ बोलती थी, आर्यन उस समय काफी छोटा था, विद्यालय में जाता कुछ देर अपने समकक्ष बच्चों के साथ खेलता फिर वहीं अपनी किताबों के थैले को अपने शिर के निचे दबा कर सो जाता था, ऐसा ही प्रायः वह करता था| लेकिन एक दिन कुछ शरारती बच्चों ने उसके थैले से उसकी किताब निकाल कर कहीं गायब कर दि, अर्थात उसकी किताबों को चुरा लिया, जब विद्यालय कि छुट्टि हुई तब और घर के बच्चों के साथ वह भी घर की तरफ चलने लगा और उसका ध्यान अपने किताबों के थैले पर गया वह पहले से काफी हल्का लग रहा था, जब उसने उसके अन्दर अपना हाथ डाल कर टटोला तो किताबें नदारत गायब थी | उसने अपने साथी लड़को से कहा लेकिन उनमें किसी ने यह नहीं कहा कि किसी ने उसकी किताबों को लिया है| यह बात घर के और बच्चों के द्वारा यशवन्त को पता चलती है तो वह आर्यन को बुला कर पुछ- ताछ के साथ मारना पिटना और बांध कर कुयें में लटका दिया जिससे आर्यन को मात्र दो पांच रुपये कि किताब के लिये अत्यधिक असहनिय दर्द और पिड़ा को सहना पड़ा इसके बाद यशवन्त ने कभी दुबारा जीवन में पढ़ने के लिये किताबें नहीं दिलवायी| हमेंशा आर्यन दूसरों से किताबों को मांग-मांग कर ही पढ़ाई करता था| इसी तरह समय का कारवां चलता रहा, और इसके साथ आर्यन के जीवन की गाड़ी भी चलती रही कभी सड़क पर तो कभी गड्ढों से हो कर गुजर रही थी| समय का काम है निरन्तर बदलते रहना मौसम कि तरह लेकिन जीवन का मौसम बहुत कम बदलता है जिसके जिवन में दु:ख दर्द का मौसम है, तो वही कई रूप बदलकर बार-बार नई शक्ल में आता है| और किसी के जीवन में सुख का मौसम आता है तो हजार रूप बदल कर नये-नये आकर्षण मुखौटों को लगा कर आता है, यशवन्त का परिवार काफी बढ़ गया, और उसके परिवार में जो चार भाई और बहन थी| उनकी सब कि बिवाह शादी हो चुकी

उनके सबके बाल बच्चे हो गये थे| जिसके लिये पुराना मकान छोटा पड़ रहा था, क्योंकि उस मकान में यशवन्त के पिता जो चार भाई थे, वह सब अपने परिवार चार- चार पांच-पांच लड़के लड़किया और उनके भि लड़के लड़किया इस तरह सैकड़ो व्यक्ति उसी एक मकान में रहते थे जिसमें कभी मुरली धर रहते थे| क्योकि यह मकान मुरली धर का था जो कभि बैजु के द्वारा उसकी बहु के लिये बनाया गया था| सैकड़ो कमरों का दो मन्जिला मकान था कभी यहां पर हाथी घोड़े भी रहते थे| इस परिवार के बुजुर्ग जैसे यशवन्त के पिता अपने भाईयों के साथ घोड़े से चलते थे इनके पास अपनी हाथीयां थी जिनसे यह सब सवारी करते थे| तलवार गड़ासा भाला इत्यादि भी हुआ करता था| लेकिन यह सब अब बिते जमाने कि बात हो गई है| संयुक्त परिवार अब सब टुटने लगा सब अब अपना नया मकन बनाने के लिये बाहर जमिन कि तो कोई कमी नहीं थी, सबने जमिन वटवारा किया सबसे पहले मकान यशवन्त कि मां ने यशवन्त को आगे कर के बनाया, उसके बाद यशवन्त के पिता के सभी भाईयों अपना-अपना पक्का मकान बनाया और बारी- बारी सबने अपना पुराना मकान नदि के किनारे वाला छोड़ कर सबने अन्दर गांव अपने-अपने मकान में निवास करने लगे अपनो परिवारीक सदस्य और कुटुम्बों के साथ| जब यश वन्त कि मां यशवन्त के साथ मिल कर नया मकान बना रहे थे तभी यशवन्त कि माँ को कैन्सर हो गया था| अभी मकान पुरा नहीं बन पाया फिर भी काम चलाउ था, जितने घर के सदस्य थे उनके लिये पर्याप्त था, इसलिये गृहप्रवेश करा कर के उसमें रहना शुरु कर दिया | जिसमें सभी भाईयों को रहने के लिये एक कमरा मिला था| उसी बिच अचानक यशवन्त कि माँ की तबियत अधिक खराब हो गई, जिसके इलाज के लिये उन्हे बि एच यु अस्पताल वाराणसी में भर्ती कराया गया और काफी समय तक दवा पर रक्खा गया, लेकिन बहुत प्रयाश के बाद भी उन्हे बचाया नहीं जा सका| अर्थात वह मृत्यु को उपलब्द्ध हो गई, जिसके बाद बड़े शान से ऊनका अन्तेष्टि संसकार और ब्राह्मण भोज का आयोजन किया गया| उनके मरने के बाद कोई परिवार में सभी परिवार को एक साथ करके चलाने वाला नहीं बचा सभी भाईयों कि आपस में नही बनती थी, इस तरह से यशवन्त के आतंक और उसके निचे किसी को रहना पसन्द नहीं था| आये दिन परिवार में भाईयों मे झगड़ा फसाद मार-पिट होता ही रहता था|बाप कि कोई सुनता नहीं था उनको पागल कह कर एक किनारें कर दिया था| जिससे उन्होंने अपने सबसे छोटे लड़के को अपने साथ मिला कर उसके लिये अलग से मकान बना कर रहने लगे| बाकि तिन भाई वह भी अलग हो गये सबने अपनी जमिन का बटवारा कर लिया, खाना-पिना अलग करके एक ही घर में पड़ोसियों कि तरह रहने लगे| कोई किसी को देखना नहीं चाहता था बात करना तो बहुत दूर कि बात थी| आपसी बिद्वेश अत्यधिक आपस मों बढ़ चुकी थी| यशवन्त का बड़ा भाई जो घर पर नहीं रहता था व सरकारी सेवा करता था इसलिये वह घर पर रहता नहीं था| और जो दो भाई यशवन्त से छोटे थे वह एक तो जो उसके साथ दुकान देखता था| उससे यशवन्त ने झगड़ा करके

मार -पिट करके उसे दुकान पर से निकाल दिया, जिससे कुछ समय में वह ईतना अधिक विशाद को प्राप्त हुआ कि वह पागल हो गया| और थोड़े समय के बाद वह सब कुछ छोड़ कर कहीं चला गया और कभी लौट कर वापिस नहीं आया| उसकी पत्नी बच्चों का कोई सहारा यहां नहीं बना, तब उसकी पत्नी अपने लड़के और लड़कि को लेकर हमेंशा के लिये अपने बाप के घर पर रहने लगी, और अपने हिस्से कि जमिन को दुसरे खेतिहर कामगारों को किराये पर दे दिया| और इधर यशवन्त स्वयं दुकान पर बैठना शुरु किया लेकिन इसका व्यवहार ग्राहको के साथ ठीक नहीं बन पाया, इसलिये दुकान टुट गई, जिसको बाद में यशवन्त के सबसे छोटे भाई ने पैसै दे कर उससे दुकान खरिद लिया| लेकिन वह भी ज्यादा समय चला नहीं पाया इसलिये उसने उसको किराये पर दे कर अपने लिये घर पर ही एक दुकान खोल कर अपना जीवन बसर करने लगा| यशवन्त का बड़ा भाई काफी अच्छा पैसा कमाता था, उसने अपने लिये नया मकान पुराने मकान के सामने बनवाया और पुराने साझे के मकान को यह कह कर छोड़ दिया कि वहां पर भुत रहता है|

(प्रश्न) क्या इन ग्रन्थों में कुछ भी सत्य नहीं?

(उत्तर) थोड़ा सत्य तो है परन्तु इसके साथ बहुत सा असत्य भी है। इस से 'विषसम्पृक्तान्नवत् त्याज्याः' जैसे अत्युत्तम अन्न विष से युक्त होने से छोड़ने योग्य होता है वैसे ये ग्रन्थ हैं।

(प्रश्न) क्या आप पुराण इतिहास को नहीं मानते?

(उत्तर) हां मानते हैं परन्तु सत्य को मानते हैं मिथ्या को नहीं।

(प्रश्न) कौन सत्य और कौन मिथ्या है?

(उत्तर) ब्राह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान् गाथा नाराशंसीरिति।।

यह गृह्यसूत्रदि का वचन है। जो ऐतरेय, शतपथादि ब्राह्मण लिख आये उन्हीं के इतिहास, पुराण; कल्प, गाथा और नाराशंसी पांच नाम हैं, श्रीमद्भागवतादि का नाम पुराण नहीं।

(प्रश्न) जो त्याज्य ग्रन्थों में सत्य है उसका ग्रहण क्यों नहीं करते?

(उत्तर) जो-जो उनमें सत्य है सो-सो वेदादि सत्य शास्त्रें का है और मिथ्या उनके घर का है। वेदादि सत्य शस्त्रें के स्वीकार में सब सत्य का ग्रहण हो जाता है। जो कोई इन मिथ्या ग्रन्थों से सत्य का ग्रहण करना चाहै तो मिथ्या भी उस के गले लिपट जावे। इसलिए 'असत्यमिश्रं सत्यं दूरतस्त्याज्यमिति' असत्य से युक्त ग्रन्थस्थ सत्य को भी वैसे छोड़ देना चाहिए जैसे विषयुक्त अन्न को।

(प्रश्न) तुम्हारा मत क्या है?

(उत्तर) वेद अर्थात् जो-जो वेद में करने और छोड़ने की शिक्षा की है उस-उस का हम यथावत् करना, छोड़ना मानते हैं। जिसलिये वेद हम को मान्य है इसलिये हमारा मत वेद है। ऐसा ही मानकर सब मनुष्यों को विशेष आर्य्यों को ऐकमत्य होकर रहना चाहिये।

(प्रश्न) जैसा सत्यासत्य और दूसरे ग्रन्थों का परस्पर विरोध है वैसे अन्य शास्त्रें में भी है। जैसा सृष्टिविषय में छः शास्त्रें का विरोध है-मीमांसा कर्म, वैशेषिक काल, न्याय परमाणु, योग पुरुषार्थ, सांख्य प्रकृति और वेदान्त ब्रह्म से सृष्टि की उत्पत्ति मानता है, क्या यह विरोध नहीं है?

(उत्तर) प्रथम तो विना सांख्य और वेदान्त के दूसरे चार शास्त्रें में सृष्टि की उत्पत्ति प्रसिद्ध नहीं लिखी और इन में विरोध नहीं क्योंकि तुम को विरोधाविरोध का ज्ञान नहीं। मैं तुम से पूछता हूं कि विरोध किस स्थल में होता है? क्या एक विषय में अथवा भिन्न-भिन्न विषयों में?

(प्रश्न) एक विषय में अनेकों का परस्पर विरुद्ध कथन हो तो उस को विरोध कहते हैं यहां भी सृष्टि एक ही विषय है।

(उत्तर) क्या विद्या एक है वा दो? एक है। जो एक है तो व्याकरण, वैद्यक, ज्योतिष आदि के भिन्न-भिन्न विषय क्यों हैं? जैसा एक विद्या में अनेक विद्या के अवयवों का एक दूसरे से भिन्न प्रतिपादन होता है वैसे ही सृष्टिविद्या के भिन्न-भिन्न छः अवयवों का छः शास्त्रें मे ें प्रतिपादन करने से इन में कुछ भी विरोध नहीं। जैसे घड़े के बनाने में कर्म, समय, मिट्टी, विचार, संयोग वियोगादि का पुरुषार्थ, प्रकृति के गुण और कुंभार कारण हैं। वैसे ही सृष्टि का जो कर्म कारण है उस की व्याख्या मीमांसा में, समय की व्याख्या वैशेषिक में, उपादान कारण की व्याख्या न्याय में, पुरुषार्थ की व्याख्या योग में, तत्त्वों के अनुक्रम से परिगणन की व्याख्या सांख्य में और निमित्तक ारण जो परमेश्वर है उस की व्याख्या वेदान्त- शास्त्र में है। इस से कुछ भी विरोध नहीं। जैसे वैद्यकशास्त्र में निदान, चिकित्सा, औषधिदान और पथ्य के प्रकरण भिन्न-भिन्न कथित हैं परन्तु सब का सिद्धान्त रोग की निवृत्ति है। वैसे ही सृष्टि के छः कारण हैं। इन में से एक-एक कारण की व्याख्या एक-एक शास्त्रकार ने की है। इसलिए इनमें कुछ भी विरोध नहीं। इस की विशेष व्याख्या सृष्टिप्रकरण में कहेंगे। जो विद्या पढ़ने पढ़ाने के विघ्न हैं उनको छोड़ देवें। जैसा कुसंग अर्थात् दुष्ट विषयी जनों का संग, दुष्टव्यसन जैसा मद्यादि सेवन और वेश्यागमनादि बाल्यावस्था में विवाह अर्थात् पच्चीस वर्षों से पूर्व पुरुष और सोलहवें वर्ष से पूर्व स्त्री का विवाह हो जाना; पूर्ण ब्रह्मचर्य न होना; राजा, माता, पिता और विद्वानों का प्रेम वेदादि शास्त्रें के प्रचार में न होना; अतिभोजन, अति जागरण करना, पढ़ने पढ़ाने परीक्षा लेने वा देने में आलस्य वा कपट करना; सर्वोपरि विद्या का लाभ न समझना; बल, बुद्धि, पराक्रम,

आरोग्य, राज्य, धन की वृद्धि न मानना; ईश्वर का ध्यान छोड़ अन्य पाषाणादि जड़ ‘मूर्त्ति के दर्शन-पूजन में व्यर्थ काल खोना; माता, पिता, अतिथि और आचार्य्य, विद्वान्, इन को सत्यमूर्त्ति मान कर सेवा सत्संग न करना; वर्णाश्रम के धर्म को छोड़ ऊर्ध्वपुण्ड्र, तिलक, कण्ठी, मालाधारण, एकादशी, त्रयोदशी आदि व्रत करना, काश्यादि तीर्थ और राम, कृष्ण, नारायण, शिव, भगवती, गणेशादि के नामस्मरण से पाप दूर होने का विश्वास, पाखण्डियों के उपदेश से विद्या पढ़ने में अश्रद्धा का होना, विद्या धर्म योग परमेश्वर की उपासना के विना मिथ्या पुराणनामक भागवतादि की कथादि से मुक्ति का मानना; लोभ से धनादि में प्रवृत्ति होकर विद्या में प्रीति न रखना; इधर उधर व्यर्थ घूमते रहना इत्यादि मिथ्या व्यवहारों में फंस के ब्रह्मचर्य और विद्या के लाभ से रहित होकर रोगी और मूर्ख बने रहते हैं। आजकल के सम्प्रदायी और स्वार्थी ब्राह्मण आदि जो दूसरों को विद्या सत्संग से हटा और अपने जाल में फ़ंसा के उन का तन, मन, धन नष्ट कर देते हैं और चाहते हैं कि जो क्षत्रियादि वर्ण पढ़ कर विद्वान् हो जायेंगे तो हमारे पाखण्डजाल से छूट और हमारे छल को जानकर हमारा अपमान करेंगे इत्यादि विघ्नों को राजा और प्रजा दूर करके अपने लड़कों और लड़कियों को विद्वान् करने के लिये तन, मन, धन से प्रयत्न किया करें।

जब आर्यन ९ वर्ष का हुआ तब यशवन्त ने उसे अपने साथ रख लिया| और अलग अपने भाई से हो कर एक मेडिकल की दुकान खोल ली, वह अपने भाईयों से अलग होने के बाद अपने पास के एक विद्यालय में आर्यन को पहली कक्षा में प्रवेश करया गया| वहां थोड़े समय सब कुछ ठीक रहा पुनः फिर यशवन्त वही पुराना तांण्डव करने लगा, आर्यन को लेकर वह परेशान रहने लगा, और वह आर्यन के कन्धे पर दुकान की जीम्मेदारी को डालने लगा| अब तक आर्यन ईतना अधिक जागरुक या समझदार नहीं हो पाया था| कि मेडिकल को सम्हाल सके, या उस पर बरा- बर नजर रख सके , जो लोग परिचित चिकित्सक थे वह यशवन्त के न रहने पर दुकान में आते और आर्यन को धता पढ़ा कर दवाईयां ले कर चले जाते, और जब यशवन्त आता तो वह बहुत नाराज होता, और कहता कि फला दवा कहां है, आर्यन जब सही उत्तर नहीं देता तो उसको मार पड़ती जो एक सामान्य घटना थी यशवन्त के लिये| कौन क्या ले जा रहा है दुकान से यशवन्त सब कुछ जानता था लेकिन आर्यन के लिये यह समझना बहुत कठीन था उस समय पर लेकिन कुछ एक साल में उसे सारा व्यापारिक ज्ञान हो गया, लेकिन यह ज्ञान उसक़े किसी काम नहीं आ सका जैसा कि कहा गया है ,अब पश्चाताए क्या होत है जब चिड़िया चुग गई खेत| यशवन्त जरुरत से अधिक आकान्क्षायें आर्यन से रखता था| जिससे आये दिन उसको बहाने मिलते ही रहते थे आर्यन को सुधारने के लिये| वहीं पर एक दूर का रिस्तेदार यशवन्त का था जिसने उसकी दुकान के बगल में कपड़े की दूकान खोल रखी थी| वह सब मिल कर साम को खाना बनाते थे| थोड़े समय में वह कपड़े का दूकान दार आर्यन को अपने दुकान में जब वह खाली रहता पढ़ाने के लिये बुलाने लगा| और वह भी अपने हाथ कि सफाई करता छोटी-

छोटी बातों पर| जिससे आर्यन अत्यधिक तनाव में रहता और उसका मन पढ़ने में नहीं लगता था| लेकिन वह सारी बातों को खुब समझता था| और समय मिलने पर व्यक्त करता साथ में आलोचना भी अपनी समझ के अनुसार करता थ|

यद्यपि यशवन्त एक सम्भ्रान्त समाज का प्रतिष्ठित और एक सम्मानित पुरुष था| मगर वह अपने परिवार और बाल-बच्चों के प्रति अत्यधिक निर्दयी क्रुर प्रकृति के स्वभाव के साथ हमेशा स्वयं को प्रस्तुत करता था| छोटी-मोटी बस्तुओं के लिये श्यामा और आर्यन को अतिशय शारिरीक यातना कष्ट और पिड़ा दिया करता था| स्वयं तो हर प्रकार कि तरह-तरह ऐयासी और रगंरेलियां मनाया करता और जो अपने अधिकार में निरीह प्राणी है उनका जीवन दुभर कर देता था| और उन्हें हमेशा अलंकारी शब्दों से संबोधित करता जैसे पागल , कुलटा, मुर्ख , बेहया, और स्वयं को बड़ा विद्वान शास्त्रों का ज्ञाता समझता और दूसरों को महामूर्ख उल्लु समझता है| आर्यन को यह सब बिल्कुल अच्छा नहीं लगता है| वहां घर में पैसों कि भी बहुत तंगी बनाकर रखता था यशवन्त जिसकि वजह से एक-एक पैसे के लिये लाले पड़ जाते कभी-कभी जिसके कारण आर्यन ने पहलि बार अपनि माँ और भाई, बहन के लिये यशवन्त से छुपा कर दूकान के गल्ले में से पैसे निकाल कर घर के लिये छोटे-मोटे सामान बाजार से ले आता जब वह घर पर जाता था| और यशवन्त के द्वारा पकड़ा गया, जिसके लिये उसे बहुत कड़ा दण्ड दिया गया, क्योंकी यशवन्त एक-एक पैसे का हिसाब बरा-बर रखता था| यहां से आर्यन के भीतर चोरी कि प्रवृत्तियों ने अपना निवास बना लिया, इसके बाद एक दो छोटी-मोटी चोरियां आर्यन और अपने दुकान में से कि अन्तिम बार दूकान में जब उसने हाथ साफ किया तो यशवन्त ने उसे उसके विद्यालय से लाकर उसकी काफी पिटाई कि और विद्यालय बन्द करा दिया , और उसे घर पर भेज दिया गया| आर्यन युं ही कुछ समय तक गांव में रहता और घुमां करता और बरा-बर आये दिन मार पिट खाता रहता, अपनी माँ और भाई बहन के साथ, इसकी गांव में बहुत शिकायतें आने लगी यशवन्त के पास जिसमें अधिकतर झुठी होती थी, लेकिन सजा हर शिकायत पर मिलती क्योंकी वह यशवन्त कि निगाह में अत्यधिक बदनाम और आवारा बन चुका था| और बहुत चंचल शरारती किस्म के बालक के रुप में अपनी पहचान बना चुका है| यशवन्त हमेंशा दूसरों कि बातों को अधिक तवज्जह देता और सभी आर्यन के खिलाफ आने वाली शिकायतों को सच माना करता था| जिसमें सबसे अधिक शिकायतकर्ता के रुप में उसके बड़े भाई का बड़ा लड़का ही होता था क्योंकि वह यशवन्त को अधिक प्रिय था जिसका वह और उसकी माँ हमेंशा गलत उपयोग करती थी| वह लोग कहते कि आर्यन ने आज उस लड़के से लड़ाई और मार-पीट की गाली दिया करता है और उसका पड़ोसी के बगीचे में से ईसने उनका केला- अमरुद तोड़ कर खाया और नुकसानदायक कार्य हमेंशा ही करता है किसी का झाड़ उखाड़ दिया है, यह कोई कार्य ठीक से नही करता है| वास्तव में सभी लोग आर्यन और उसकी मां की सरलता सज्जनता से

ईर्श्या करते है | अपने को श्रेष्ठ यशवन्त कि निगांह में सिद्ध करने के लिये कहते है| यह चिकनी - चुपड़ी वह बातें जो यशवन्त को अच्छी लगती वह कह कर उसका मन जित लेते थे और हमेंशा अपने फायदे के लिये उसका उपयोग करते थे, वह मुर्ख समझता की वह सब उसके कल्याण के लिये सब सच बोलते है, वास्तव में वह सब उसका और उसके परिवार का सर्वनाश करना चाहते थे, ईसका ज्ञान यशवन्त से अधिक आर्यन को हो रहा था लेकिन उसका अपने परिस्थितियों पर कोई बस नहीं था वह निरीह पशु के समान जीवन को जीने के लिये बेबश ओर लाचार है, जैसे एक जानवर अपने रस्सी से बंध कर अपने मालिक के सारी जायज और नाजायज यातनाओं को न चाहते हुये सहता है यही हाल आर्यन का भी है|

(प्रश्न) क्या स्त्री और शूद्र भी वेद पढ़ें? जो ये पढ़ेंगे तो हम फिर क्या करेंगे? और इनके पढ़ने में प्रमाण भी नहीं हैं। जैसा यह निषेध है-

स्त्रीशूद्रौ नाधीयातामिति श्रुतेः।

स्त्री और शूद्र न पढ़ें यह श्रुति है।

(उत्तर) सब स्त्री और पुरुष अर्थात् मनुष्यमात्र को पढ़ने का अधिकार है। तुम कुआ में पड़ो और यह श्रुति तुम्हारी कपोलकल्पना से हुई है। किसी प्रामाणिक ग्रन्थ की नहीं। और सब मनुष्यों के वेदादि शास्त्र पढ़ने सुनने के अधिकार का प्रमाण यजुर्वेद के छब्बीसवें अध्याय में दूसरा मन्त्र है-

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः ।

ब्रह्मराजन्याभ्या शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय ।।

परमेश्वर कहता है कि (यथा) जैसे मैं (जनेभ्यः) सब मनुष्यों के लिये (इमाम्) इस (कल्याणीम्) कल्याण अर्थात् संसार और मुक्ति के सुख देनेहारी (वाचम्) ऋग्वेदादि चारों वेदों की वाणी का (आ वदानि) उपदेश करता हूं वैसे तुम भी किया करो।

यहाँ कोई ऐसा प्रश्न करे कि जन शब्द से द्विजों का ग्रहण करना चाहिये क्योंकि स्मृत्यादि ग्रन्थों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य ही के वेदों के पढ़ने का अधिकार लिखा है; स्त्री और शूद्रादि वर्णों का नहीं।

(उत्तर) (ब्रह्मराजन्याभ्या) इत्यादि देखो परमेश्वर स्वयं कहता है कि हम ने ब्राह्मण, क्षत्रिय, (अर्य्याय) वैश्य, (शूद्राय) शूद्र, और (स्वाय) अपने भृत्य वा स्त्रियादि (अरणाय) और अतिशूद्रादि के लिये भी वेदों का प्रकाश किया है; अर्थात् तब मनुष्य वेदों को पढ़ पढ़ा और सुन सुनाकर विज्ञान को बढ़ा के अच्छी बातों का ग्रहण और बुरी बातों का त्याग करके दुःखों से छूट कर आनन्द को प्राप्त हों।

कहिये! अब तुम्हारी बात मानें वा परमेश्वर की? परमेश्वर की बात अवश्य माननीय है इतने पर भी जो कोई इस को न मानेगा वह नास्तिक कहावेगा क्योंकि ‘नास्तिको वेदनिन्दकः’ वेदों का निन्दक और न मानने वाला नास्तिक कहाता है। क्या परमेश्वर शूद्रों का भला करना नहीं चाहता? क्या ईश्वर पक्षपाती है कि वेदों के पढ़ने सुनने का शूद्रों के लिये निषेध और द्विजों के लिये विधि करे? जो परमेश्वर का अभिप्राय शूद्रादि के पढ़ाने सुनाने का न होता तो इनके शरीर में वाक् और श्रोत्र इन्द्रिय क्यों रचता? जैसे परमात्मा ने पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, चन्द्र, सूर्य और अन्नादि पदार्थ सब के लिये बनाये हैं वैसे ही वेद भी सबके लिये प्रकाशित किये हैं। और जहाँ-जहाँ निषेध किया है उस का यह अभिप्राय है कि जिस को पढ़ने पढ़ाने से कुछ भी न आवे वह निर्बुद्धि और मूर्ख होने से शूद्र कहाता है। उस का पढ़ना पढ़ाना व्यर्थ है। और जो स्त्रियों के पढ़ने का निषेध करते हो वह तुम्हारी मूर्खता, स्वार्थता और निर्बुद्धिता का प्रभाव है। देखो! वेद में कन्याओं के पढ़ने का प्रमाण-

ब्रह्मचर्य्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम् ।।

-अथर्व० अ० ३। प्र० २४। कां० ११। मं० १८।।

जैसे लड़के ब्रह्मचर्य सेवन से पूर्ण विद्या और सुशिक्षा को प्राप्त होके युवती, विदुषी, अपने अनुकूल प्रिय सदृश स्त्रियों के साथ विवाह करते हैं वैसे (कन्या) कुमारी (ब्रह्मचर्येण) ब्रह्मचर्य सेवन से वेदादि शास्त्रें को पढ़ पूर्ण विद्या और उत्तम शिक्षा को प्राप्त युवती होके पूर्ण युवावस्था में अपने सदृश प्रिय विद्वान् (युवानम्) और पूर्ण युवावस्थायुक्त पुरुष को (विन्दते) प्राप्त होवे। इसलिये स्त्रियों को भी ब्रह्मचर्य और विद्या का ग्रहण अवश्य करना चाहिये।

ऐसा ही काफी दिनों तक चलता रहा, अचानक यशवन्त के मन में क्या सुझा कि उसने आर्यन की व्यक्तितग पाचँवी की परिक्षाा एक विद्यालय से दिला कर, अपने एक परिचित विद्यालय के शिक्षक कि सहायता से उसे पास करा दिया| फिर उसका दाखिला छठी कक्षा में कराया एक विद्यालय में, गांव से उस पार नदी के करिब १२ किलोमिटर का सफर आर्यन को पढ़ने के लिये जाने लगा, रोज नदी को नाव से पार करके जब सुखा गर्मी का समय होता तो नाव किनारें पर मिलती, नहीं तो बारिष सर्दि में जब नदी के पानी में बाढ़ आती तो नाव को पकड़ने और छोड़ने में हि कई कई घन्टे गुजर जाते और किचड़ में नाव का पिछा करना क्योंकी बारिष के समय पर नाव का कोई एक निश्चित अस्थान नहीं होता था| वह बाढ़ में काफी बह जाती थी| ऐसा ही एक वर्ष तक पढ़ाई चलती रही| विद्यालय में एक अध्यापक जिसने पाँच पास करा करके छठी कक्षा में प्रवेश दिलाया था, उसने अपनी एक किताब कापी की दुकान वहीं विद्यालय के एक कमरें में खोल रखी थी| जहां से उसने यशवन्त के कहने पर बहुत सारी कापियां हर विषय कि दो कापी दे दी इस तरह से दूनिया भर की कापीयां मिल गई सब मोटी-मोटी जो कभी भरती नहीं लिखने से खालीहीरहती थी , और किताब

एक भी नहीं मिली | नदारत सभी अध्यापक कहते लिखो और उनका काम कभी भी पुरा नहीं कर पाता था क्योंकि सारा समय नदी से आने जाने में गुजर जाता था बाकी समय थकने के कारण सोने में गुजर जाता था| और सभी के पास आर्यन को सुधारने का एक ईलाज दण्ड स्वरुप मारों-पिटो जिससे आर्यन काफी तंग आ चुका है| क्योंकि आर्यन लिखने का बहुत कम कार्य करता है, सब कुछ ऐसे ही समझ लेता था, रोज पैदल ही आना-जाना पड़ता सारा दिन ऐसे ही बित जाता, कभी-कभी दुकान पर भी जाना पड़ता किसी घर के कार्य से पैसा वगैरह ले कर सब्जी ले कर आना पड़ता था| जब १५-२०किलो मिटर का रास्ता पैदल तय करना पड़ता था| यहीं दिन चर्या थी रोज नाव पर एकाक घन्टे बैठना पड़ता सवारी के ईन्तजार में, जब नाव भर जाती तो वह नदी पार करने के लिये नाव को डाड़े से खे कर पार लाया जाता जिसमें काफी समय गुजर जाता था, जिसमें नाव को नदी में डुबने का खतरा हमेंशा बना रहता था जो आर्यन को भयभित करता है, फिर भी वह जीवन के इस मार्ग पर जो छुरे के धार पर चलने के समान है निर्बिध्न रुप से चलता रहा| जीवन के कठिनतम दुर्गम पर्वत कभी चढ़ना और कभी उतरना इसी तरह जीवन का संघर्ष चलता रहा|

इस तरह पुराने साझें के मकान में यशवन्त का परिवार अकेला ही रहता था| यशवन्त ने अपने लिये जिस दुकान से बाजारवाद का शिकार होकर के दूसरी दुकान में मेडिकल की दुकान प्रारम्भ किया था | और स्वयं को अकेले सम्हालने का प्रयाश करने लगा| तभी एक और घटना घटी सबसे अलग होने पर भी उसे शान्ती नहीं मिली एक दिन अचानक आर्यन का सबसे जो छोटा भाई था रमन उसको बुखार हुआ| उस समय जुन का महिना बहुत अधिक गर्मी पड़ रही थी| उस दिन परिवार के एक पुराने पटिदार के यहां पर लड़के के जन्म की वरही थी, अर्थात पुरे परिवार का खाने पिने का निमन्त्रण था| वहीं पर आर्यन के भाई रमन को मस्तिस्क ज्वर होना प्रारम्भ हुआ, उस समय बहुत भिड़-भाड़ का माहौल उस घर में था| आर्यन कि मां श्यामा उस समय किसी कार्य में व्यस्त थी, उसने आर्यन को बुलाकर कहां कि तुम इसको घर ले कर चलो, और वहां ईसको लिटा कर चारपाई पर चिकित्सक से दवा ले कर आवों तब तक मैं यहा थोड़ा काम है उसको निपटा कर आ रही हुं| आर्यन ने पहले अपने भाई को घर ले गया वहां उसको लिटा कर चिकित्सक को बुलाने गया, तब तक श्यामा घर पर आगई उसने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि बुखार तेजी से उसको दबोच लेगा| जैसा कि चिकित्सक आया लेकिन उसको बिमारी समझ में नहीं आई सुई और औसधियों का बहुत उपयोंग किया लेकिन कुछ काम नहीं आया| जिसने जो कहा वह सब कुछ किया गया, सैकड़ो बाल्टी पानी से उसका सर धोया गया लेकिन बुखार कम ना हो कर और बढ़ता गया उसकी पुरी शरीर अकड़ गई दांत बैठ गया था| और वह इतना अधिक थोड़े समय में उग्र रूप धारण कर लिया जिस पर किसी चिकित्सक कि दवा काम नहीं आई, और उसको आनन- फानन वाराणसी ले जाया गया| लेकिन वहां भी कोई उसे बचा नहीं सका जिससे उसकी मृत्यु हो गई|

क्योंकि उसे दिमागी बहुत खतरनाक ज्वर हो गया था, जससे किसी को समझने का मौका ही नहीं दिया सब कुछ बहुत तेजी से हुआ, उस समय उसकी हालत बहुत गम्भिर हो चुकी थी| इस अपने भाई की मृत्यु बहुत करिब से आर्यन ने देखा और अनुभव किया था| वह घटना अत्यधिक मार्मिक और दिल को दहला देने वाली बनी जिसकी छाया आर्यन के जीवन पर से कभी नहीं उतरी वह आर्यन के जीवन में पहला मृत्यु का बहुत भयानक और घिनौना नग्न नृत्य बना, जब भी उस घटना की याद आती है वह बिल्कुल नया बन जाती जैसे उसका भाई नहीं वह स्वयं उस पिड़ा को सह रहा है उसका सम्पूर्ण हृदय उस अथाह दर्द से द्रवित हो कर दुःख सागर में डुबने लगता है उसे आज भी यह सब आन्दोलित करता है जो यह बार-बार प्रकट करती है, और धिक्कारती है ईस नस्वर संसार से बिरक्ति के लिए|

(प्रश्न) क्या स्त्री लोग भी वेदों को पढ़ें?

(उत्तर) अवश्य; देखो श्रौतसूत्रदि में-इमं मन्त्रं पत्नी पठेत्।

अर्थात् स्त्री यज्ञ में इस मन्त्र को पढ़े। जो वेदादि शास्त्रें को न पढ़ी होवे तो यज्ञ में स्वरसहित मन्त्रें का उच्चारण और संस्कृतभाषण कैसे कर सके? भारतवर्ष की स्त्रियों में भूषणरूप गार्गी आदि वेदादि शास्त्रें को पढ़ पूर्ण विदुषी हुई थीं यह शतपथब्राह्मण में स्पष्ट लिखा है। भला जो पुरुष विद्वान् और स्त्री अविदुषी और स्त्री विदुषी और पुरुष अविद्वान् हो तो नित्यप्रति देवासुर-संग्राम घर में मचा रहै फिर सुख कहां? इसलिये जो स्त्री न पढ़े तो कन्याओं की पाठशाला में अध्यापिका क्योंकर हो सकें तथा राजकार्य्य न्यायाधीशत्वादि; गृहाश्रम का कार्य्य जो पति को स्त्री और स्त्री को पति प्रसन्न रखना; घर के सब काम स्त्री के आधीन रहना विना विद्या के इत्यादि काम अच्छे प्रकार कभी ठीक नहीं हो सकते। देखो! आर्य्यावर्त्त के राजपुरुषों की स्त्रियां धनुर्वेद अर्थात् युद्धविद्या भी अच्छी प्रकार जानती थीं क्योंकि जो न जानती होतीं तो कैकेयी आदि दशरथ आदि के साथ युद्ध में क्योंकर जा सकती ? और युद्ध कर सकती। इसलिये ब्राह्मणी को सब विद्या, क्षत्रिया को सब विद्या और युद्ध तथा राजविद्याविशेष, वैश्या को व्यवहारविद्या और शूद्रा को पाकादि सेवा की विद्या अवश्य पढ़नी चाहिये। जैसे पुरुषों को व्याकरण, धर्म और अपने व्यवहार की विद्या न्यून से न्यून अवश्य पढ़नी चाहिये। वैसे स्त्रियों को भी व्याकरण, धर्म, वैद्यक, गणित, शिल्पविद्या तो अवश्य ही सीखनी चाहिये। क्योंकि इनके सीखे विना सत्याऽसत्य का निर्णय; पति आदि से अनुकूल वर्त्तमान, यथायोग्य सन्तानोत्पत्ति, उनका पालन, वर्द्धन और सुशिक्षा करना, घर के सब कार्य्यों को जैसा चाहिये वैसा करना कराना वैद्यकविद्या से औषधवत् अन्न पान बना और बनवाना नहीं कर सकती। जिससे घर में रोग कभी न आवे और सब लोग सदा आनन्दित रहैं। शिल्पविद्या के जाने विना घर का बनवाना, वस्त्र आभूषण आदि का बनाना बनवाना, गणितविद्या के विना सब का हिसाब

समझना समझाना, वेदादि शास्त्रविद्या के विना ईश्वर और धर्म को न जानके अधर्म से कभी नहीं बच सके। इसलिये वे ही धन्यवादार्ह और कृतकृत्य हैं कि जो अपने सन्तानों को ब्रह्मचर्य, उत्तम शिक्षा और विद्या से शरीर और आत्मा के पूर्ण बल को बढ़ावें। जिस से वे सन्तान मातृ, पितृ, पति, सासु, श्वसुर, राजा, प्रजा, पड़ोसी, इष्टमित्र और सन्तानादि से यथायोग्य धर्म से वर्तें। यही कोश अक्षय है। इस को जितना व्यय करे उतना ही बढ़ता जाय। अन्य सब कोश व्यय करने से घट जाते हैं और दायभागी भी निज भाग लेते हैं। और विद्याकोश का चोर वा दायभागी कोई भी नहीं हो सकता। इस कोश की रक्षा और वृद्धि करने वाला विशेष राजा और प्रजा भी हैं।

कन्यानां सम्प्रदानं च कुमाराणां च रक्षणम्।। मनु०।।

राजा को योग्य है कि सब कन्या और लड़कों को उक्त समय तक ब्रह्मचर्य में रखके विद्वान् कराना। जो कोई इस आज्ञा को न माने तो उस के माता पिता को दण्ड देना अर्थात् राजा की आज्ञा से आठ वर्ष के पश्चात् लड़का वा लड़की किसी के घर में न रहने पावें किन्तु आचार्य्यकुल में रहैं। जब तक समावर्त्तन का समय न आवे तब तक विवाह न होने पाये|

है समय नदी कि बाढ़ कि सब बह जाया करते हैं| पर होते ऐसे कुछ लोग, जो इतिहास बनाया करते हैं| डिगा नहीं जो अपने पथ से, लाख मुसिबत आने पर| मिली सफलता जग में उसकोजीने वा मर जाने पर| जैसा कि भर्तृहरि जी कहते हैः-

विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा सदसि वाक्पटुता युधि विक्रमः| यशसि चाभिरुचिर्व्यर्स

चाभिरुचिर्व्यर्सनं श्रुतौ प्रकृतिसिद्धमिदं हि महात्मना|| अर्थात् किसी प्रकार की विपत्ति आने पर उससे विचलित ना होना, धैर्य को धारण करना, धन-जन-बल से समृद्ध होने पर क्षमावान् रहना, सभा में वाणी का चातुर्य-मधुर, सत्य और शिष्ट बोलना, रणभूमि या जीवन संग्राम में बल पराक्रम दिखाना, पीछे ना रहना, यश किर्ति की अभिलाषा और वेदादि शास्त्रों का निरन्तर स्वाध्याय करनें में रुचि, ये महापुरुष के स्वाभाविक गुण है|

आर्यन की उम्र करिब दस साल होगी, उसने अपनी आखों के सामने किसी को इस तरह तड़प-तड़प कर मरते हुये, अपने जीवन में पहली बार देखा था| आगे चल कर उसका स्वयं का जीवन किसी व्यक्ति के तड़प-तड़प कर मरते हुये आदमी से कम नहीं हुआ, वह भी रोज तड़प-तड़प कर मरता रहा, और जीवन से लड़- लड़ कर एक-एक कतरा जीवन का छिनता रहता है, कितने सालों तक लगातार जाने कौन सा पाठ या शिक्षा जीवन उसको सिखा रहा था? जो भी सब कुछ उसके साथ और उसके परिवार के साथ हो रहा था| वह बहुत हद तक यशवन्त को इसका कसुरवार

मानता था क्योंकि उसके कर्मो से ऐसा ही कुछ व्यक्त हो रहा था| कभी - कभी वह सोचता कि यशवन्त भी मुर्ख है और किसी बेबसी का शिकार है, अभी क्या हो रहा है वह कहां जान पाया है? वह इसको जानने के लिये अपनी मां से पुछता, तब श्यामा प्यार से उसके सर पर हाथ रखती और कहती सब जान जायेगा जब तु बड़ा होगा, और परमत्मा सब ठीक करेगा| आर्यन को अपने अन्दर सब खाली-खाली लगने लगा और रिक्तता का भ ाव उसे बिल्कुल अन्दर तक हिला दिया है, जैसे किसी तुफान ने किसी विशाल वट वृक्ष को झकझोर दिया हो और उसकी सारी कि सारी जड़े हिल गई हो, जैसे किसी विशाल भवन को किसी भुकम्प ने बुरी तरह आहत कर दिया हो और उस भवन में हर तरफ से दरारे ही दरारे पड़ गई हो, या फिर कोई विजली किसी पेड़ पर आकाश से गिर गई हो, जो उस पेड़ को चिर- फाड़ कर धराशाई कर दिया हो, वह सोचता है आखिर ऐसा जीवन में क्यों होता है? जब उसको संसार का मुल आधार दुःख है उससे उसका आख मिचौलि साक्षात्कार आमना- सामना होता है तो उसके पैर जमिन से उखड़ने लगते है जब उसे पता चलता है, कि यहां जिने के लिये पत्थल तोड़ कर उससे रस निकालना पड़ता है, और उसी पत्थल रस के बदले में जीवन की शांसे मिलती है|

यशवन्त को भी मामुलि दुःख होता है, लेकिन वह सब क्षणिक होता है, फिर वह सब कुछ भुल कर उसी पुराने मार्ग पर अन्धों की तरह चलता रहता है, बिना किसी अफसोस या प्रायाश्चित के, उसके दिमांग में यह बात बैठ गई की उस मकान में बैजु का भुत रहता है और वहीं सभी को परेसान करता है और उस पर भी वह सवार हो जाता है, जब वह अपना आपा खो बैठता है, ऐसा किसी विषेस ज्योतिषी से ज्ञात हुआ लेकिन वह इसको स्विकारता नहीं है| जबकि और सभी लोग यहीं कहते है क्योंकि वह मकान बैजु के पुराने मकान के स्थान पर उसको तोड़ कर बना गया है| और अब बैजु का भुत सभी को परेशान कर रहा है इसके कारण यशवन्त का एक भाई पागल हो कर गायब हो गया, इसकी मां मर गई, और ईसका बेटा भी तड़प- तड़प कर मर गया, यह सब सुन कर यशवन्त अपने परिवार अर्थात आर्यन, श्यामा, और अपने एक लड़का, लड़की को वहा से उस घर को छोड़ कर ईलहाबाद सहर में रहने की योजना बनाता है और कुछ समय में सबके साथ वहां से जा कर सहर में रहने लगता है| पुराना मकान हमेंशा के लिये छोड़ देता है| जो घर उसने और उसकी मां ने सुरु किया था, वह अधुरा ही रहता है कभी पुरा नही बनता है उसको भुत बंगलि के नाम से लेग सम्बोधित करते है जिसमें अब लोग दिन में जाने से डरते है| यशवन्त के लिये एक और नई समस्या आर्यन ने खड़ी कर दि थी| वह यह थी कि वह आर्यन को अत्यधिक मारता- पिटता कभी- कभी बींध कर किसी हलील कसाई की तरह बेतहासा नशे में धुत हो कर, जिससे आर्यन बहुत अधिक डरता था | सबको दर्द होता है साधारण है उसे भी अपने शरिर पर घाव और चोट निशान के काफी तकलिफ देते थे| जिससे वह स्वयं को बचाने क े लिये, जैसा कि हर प्राणी के लिये अपनी जान

किमती होती है| ऐसा आर्यन के साथ भी होता था क्योंकि वह भी एक जीव ही है, मरता क्या ना करता? जब भी यशवन्त घर पर रहता उसके सामने नहीं आता| उससे प्रायः छुप कर रहता नहीं तो वह आये दिनकोई ना कोई बहाना य ा बिना कीरण के अकारण उसे पिटना शुरु कर देता था| यशवन्त का ऐसा स्वभाव बन गया था कि वह कभी भी आ जीवन आर्यन को देख कर खुस या प्रशन्न नही होता था, और सदा वह अपने दोस्तों के उदाहरण देता जो सारे कुकर्मि निच किस्म के सब तरह निकृष्ट व्यक्तियों में सबसे श्रेष्ठ थे, वह चाहता की उसका परिवार बेटा वैसा ही हो, जैसा कि कहा गया है दुर के ढोल सुहावन लागे, अर्थात दुर की वस्तुयें सुन्दर और सुहावनी लगती है, ऐसा ही यशवन्त के साथ था उसे अपने पास की वस्तुयें बुरी लगती थी अपनी पत्नी और अपने बच्चें और दुसरों कि पत्नी सुन्दर शूसिल गुणी, और दूसरों के बच्चें गुणी कुशल आकर्षण आज्ञा पालक समझदार दिखते थे| वह बड़े रस लेकर अपने कुकर्मी व्यभिचारी और दुराचारी दोस्तों के बारें मे बखान करता, और कहता कि उस मेरे मित्र का लड़का विद्यालय से इनाम जित कर लाया है, तु ने क्या किया पेट भर खाया और दिन आवारा निच दोस्तों के साथ धमाल- चौकड़ी करता रहता सब मेरे से शिकायत करते है, मुझे तेरी वजह से शर्मिन्दा होना पड़ता है तु मेरी इज्जत खराब करता है| इस तरह कि बहुत बेवकुफि भरी बातें नशे में धुत हो कर करता रहता, सुबह से शाम तक मारता - पिटता ही रहता था| आर्यन उसके अत्याचार से बचने के लिये पहले छुपने के लिये घर में ही रहता या किसी पड़ोसी के यहां चला जाता वहां से बुला कर मारता, और जब बच्चों के साथ खेलता रहता या विद्यालय चला जाता और वहां से लाकर वही मारे पिटने का कार्य जारी रखता, इसके अतिरिक्त रात में यशवन्त जब आता और आर्यन को विस्तर से जगा कर पिटाई करता था| उसने आर्यन को बुरी तरह से परेशान कर दिया था जिससे वह पागल जैसा हो गया था, जिससे आर्यन जीने से अधिक मरने के लिये उतावला हो गया था, जैसा कि आर्यन के आगे के जीवन से हमें ज्ञात होगा| फिर भी आर्यन उस महाकाल से बचने के लिये रास्ता खोज ही लेता था| यशवन्त यदि डाल-डाल पर रहता तो आर्यन हर पत्ते पर स्वयं को बचाने के लिये बैठता, जो उसकी मृत्यु का ग्राहक बन कर उसके जीवन में प्रकट हो गया है| दोनों एक दुसरे से बढ़ कर पागल पन के शिकार है| यशवन्त जिन घरों में नही जाता वहां पर आर्यन औरतो ं के पास छुपता था| इस तरह गांव मे सब के घरों मे प्रायः घुमने लगा स्वयं को बचाने के लिये लेकिन कोऊ कुछ समय के लिये ही बचाता था जब भी उन दोनों का आमना- सामना होता, यशवन्त एक काईयां किस्म का आदमी था सब कुछ सुत ब्याज समेत बसुल करता और पुरे शरिर को लहु-लुहान कर देता जब तक नही ं थकता पिटता ही रहता कितने डन्डे और लाठीयों को तोड़ देता था| यशवन्त के अन्दर बहुत अधिक दिखावा भी था| वह औरों को एहसास कराना चाहता था कि अपने भाईयों और उनके परिवार वालों कि वह अपने बिवी बच्चों को कितने अधिक शाषन में रखता है|

गोर्की रसिसन लेखक और आर्यन के जिवन में काफी समकक्षता मुझे दिखाई देति है, क्योंकि गोर्की का प्रारम्भिक जीवन बहुत कुछ आर्‌यन से मिलता जुलता दिखाई देता है उसे भी अत्यधिक कष्टों का सामना करना पड़ता है| अपने जीवन को बचाये रखने के लिये|

जब दण्ड बड़ा तेजोमय है उस को अविद्वान्, अधर्मात्मा धारण नहीं कर सकता। तब वह दण्ड धर्म से रहित कुटुम्बसहित राजा ही का नाश कर देता है।।८।।क्योंकि जो आप्त पुरुषों के सहाय, विद्या, सुशिक्षा से रहित, विषयों में आसक्त मूढ़ है वह न्याय से दण्ड को चलाने में समर्थ कभी नहीं हो सकता।।९।।और जो पवित्र आत्मा सत्याचार और सत्पुरुषों का संगी यथावत् नीतिशास्त्र के अनुकूल चलनेहारा श्रेष्ठ पुरुषों के सहाय से युक्त बुद्धिमान् है वही न्यायरूपी दण्ड के चलाने में समर्थ होता है।।१०।

ओ३म् दूसरा अध्याय समाप्त

३ बेपरवाह घायल परिन्दा

ओ३म् शिरो मे श्रीर्यशो मुखं त्विषिः केशाश्च श्मश्रूणि| राजा मे प्राणोअ्अमृतं सम्राट् चक्षुरर्विराट् श्रोत्रम्||

जो दूसरों को स्वतन्त्रा देने के पक्षधर नहीं है, आना कानि करके रुकावटे खड़ी करते है, वह परोक्ष रुपसे स्वयं को भी परतन्त्र करते है| हम तभी अपने सभी शत्रुओं का समूल सर्वनाश कर सकते है जब उन सभी को अपना मित्र बना लेते है| सिर्फ उन्हीं लोगों को किसी व्यक्ति कि आलोचना करने का अधिकार बनता है, जब उनके पास एक विशाल हृदय हो, उस व्यक्ति की सहयाता करने के लिये| जब तक कोई व्यक्ति एक अच्छा दाश नहीं बनता, तब तक वह एक बड़ा मालिक भी नहीं बन सकता| जब कोई हमें हमारी मर्जि के खिलाफ कष्ट देता है वह भले फुल के समान हों लेकिन काटों सा प्रतित होता है और उसमें चुभन का अहसाश भी बहुत अधिक होता है| लेकिन जब हम स्वयं को बिशाल पर्वत के समान कष्ट देते है तो वह हमें फुल कि खुसबु कि तरह बहुत हल्का और आराम दायक लगता है| क्योंकि सबसे अधिक कष्ट स्वयं को हम स्वयं ही देते है, अपनि अज्ञानता के कारण और दोष दूसरों पर बरा-बर मढ़ते रहते है स्वयं को हमेशा निर्दोष ही समझते रहते है| यह हमारी सबसे बड़ी और अक्षम्य भुल होती है| यह कैसे हमारे समाज में सम्भव हो गया? कि छोटे और माशुम बच्चों में बृद्धों से कहीं अधिक समझदारी और बुद्धिमानी है, जरुर बृद्धों को जो शिक्षा मिली है, उसमें अवश्य कुछ बहुत गम्भिर दोष है, जिसको दूर करने के लिये उन्हें शिक्षित करना होगा| गरिबी, दरिद्रता, अशिक्षा और निर्धनता वास्तव में सभी प्रकार कि क्रान्ति और अपराध के लिये उत्तरदाई है| हमारें जीवन का सबसे बड़ा अपराध है, कि हम जब बिना बिचारें अन्द्ध परम्पारा या ऐसे व्यक्ति का अनुसरण निरन्तर करते रहते है जिसका हमारे जीवन में कोई मकसद या मतलब नहीं होता है| आत्मा हमारे शरीर में एक बदशूरत बिना तराशा पत्थर हिरे के समान है, उसे निरन्तर तराशने और रंग रोगन की जरुरत पड़ती है उसकी अस्मिता को बरकरार रखने के लिये| शब्द के पास ऐसा कोई सामर्थ नहीं है कि किसी प्रकार से हमारें मन को प्रभावित कर सके, जब तक बिना किसी श्रेष्ठ, अतिउत्तम सुक्ष्म जीवन की कोई ऐसी वास्तविक घटना जो डर, दहसत, विभित्सता, आनन्द को नहीं उत्पन्न करते हैं| चित्त कि स्वतन्त्रता में ही प्रशान्ति का परम आनन्द विद्यमान होता है|

मातृमान् पितृमानाचार्यवान् पुरुषो वेद।

यह शतपथ ब्राह्मण का वचन है। वस्तुतः जब तीन उत्तम शिक्षक अर्थात् एक माता, दूसरा पिता और

तीसरा आचार्य होवे तभी मनुष्य ज्ञानवान् होता है। वह कुल धन्य ! वह सन्तान बड़ा भाग्यवान् ! जिसके माता और पिता धार्मिक विद्वान् हों। जितना माता से सन्तानों को उपदेश और उपकार पहुंचता है उतना किसी से नहीं। जैसे माता सन्तानों पर प्रेम, उन का हित करना चाहती है उतना अन्य कोई नहीं करता । इसीलिए (मातृमान्) अर्थात् **'प्रशस्ता धार्मिकी विदुषी माता विद्यते यस्य स मातृमान्'** धन्य वह माता है कि जो गर्भाधान से लेकर जब तक पूरी विद्या न हो तब तक सुशीलता का उपदेश करे। माता और पिता को अति उचित है कि गर्भाधान के पूर्व, मध्य और पश्चात् मादक द्रव्य, मद्य, दुर्गन्ध, रूक्ष, बुद्धिनाशक पदार्थों को छोड़ के जो शान्ति, आरोग्य, बल, बुद्धि, पराक्रम और सुशीलता से सभ्यता को प्राप्त करें वैसे घृत, दुग्ध, मिष्ट, अन्नपान आदि श्रेष्ठ पदार्थों का सेवन करें कि जिससे रजस् वीर्य्य भी दोषों से रहित होकर अत्युत्तम गुणयुक्त हो। जैसा ऋतुगमन का विधि अर्थात् रजोदर्शन के पांचवें दिवस से लेके सोलहवें दिवस तक ऋतुदान देने का समय है उन दिनों में से प्रथम के चार दिन त्याज्य हैं, रहे १२ दिन, उनमें एकादशी और त्रयोदशी को छोड़ के बाकी १० रात्रियों में गर्भाधान करना उत्तम है। और रजोदर्शन के दिन से लेके १६वीं रात्रि को पश्चात् न समागम करना। पुनः जब तक ऋतुदान का समय पूर्वोक्त न आवे तब तक और गर्भस्थिति के पश्चात् एक वर्ष तक संयुक्त न हों। जब दोनों के शरीर में आरोग्य, परस्पर प्रसन्नता, किसी प्रकार का शोक न हो। जैसा चरक और सुश्रुत में भोजन छादन का विधान और मनुस्मृति में स्त्री पुरुष की प्रसन्नता की रीति लिखी है उसी प्रकार करें और वर्तें। गर्भाधान के पश्चात् स्त्री को बहुत सावधानी से भोजन छादन करना चाहिए। पश्चात् एक वर्ष पर्यन्त स्त्री पुरुष का संग न करे। बुद्धि, बल, रूप, आरोग्य, पराक्रम, शान्ति आदि गुणकारक द्रव्यों ही का सेवन स्त्री करते रहै कि जब तक सन्तान का जन्म न हो।

जब जन्म हो तब अच्छे सुगन्धियुक्त जल से बालक को स्नान, नाड़ीछेदन करके सुगन्धियुक्त घृतादि का होम**१** और स्त्री के भी स्नान भोजन का यथायोग्य प्रबन्ध करे कि जिस से बालक और स्त्री का शरीर क्रमशः आरोग्य और पुष्ट होता जाय। ऐसा पदार्थ उस की माता वा धायी खावे कि जिस से दूध में भी उत्तम गुण प्राप्त हों। प्रसूता का दूध छः दिन तक बालक को पिलावे। पश्चात् धायी पिलाया करे परन्तु धायी को उत्तम पदार्थों का खान पान माता-पिता करावें। जो कोई दरिद्र हो, धायी को न रख सके तो वे गाय वा बकरी के दूध में उत्तम औषधि जो कि बुद्धि, पराक्रम, आरोग्य करने हारी हों उनको शुद्ध जल में भिजा, औटा, छान के उपयोग करें|

१– बालक के जन्म समय में 'जातकर्मसंस्कार' होता है उस में हवनादि वेदोक्त कर्म होते हैं वे श्री स्वामी जी ने 'संस्कारविधि' में सविस्तार लिख दिये हैं । समर्थदान ।

जब आर्यन को घर- गांव में छुपने के सभी स्थान और मार्ग का पता यशवन्त को चल गया| और

यशवन्त ने उसकी सजा भी पहले से और अधिक बड़ा दिया, तब आर्यन ने कुछ और नये रास्ते खोज या तलाश लिये, अब वह गांव के बाहर जंगली झाड़ियों में, फसलों में और दुर जंगल में निकल जाता| आर्यन को पता था कि यशवन्त बाजार जब चला जायेगा, उसको थक हार और तलाश कर तो वह वापिस घर अपनी मां के पास आ कर उससे खाना मांग कर खायेगा| और वह काफी समय तक बाहर जंगल में एकान्त मौन शान्त प्रकृत की गोद में बैठ कर ध्यन में मस्त हो जाता था और उसे समय का पत ही नहीम चलता था| इस तरह दोपहर में वह पुनः घर आता, इस प्रकार यशवन्त से कई दिनों से बचता रहा, लेकिन जब पकड़ा गया यशवन्त बेरहमी पूर्ण बिना किसी दया या रहम के निर्दयता कि सभी हदों को पार कर जाता भयंकर और असहनिस दर्दनाक पिड़ा देता और कई-कई घन्टे बांध कर उपर छत के चुल्ले में लटका दिया करत था और निचे से डन्डे-लाठी से खुब जिस प्रकार रुई को धुना जाता है ठिक उसी प्रकार से, और यह भुल जाता कि चोट कहं पर लग रही है| रोने और चिल्लाने का मौका भि नह ीं देता, मुंह में कपड़ा जबर जस्ती ठूंस देता था| ऐसी यातना पूर्ण जीन्दगी चलती रही, और समय का बेदर्द कारवां गमगिन गित हवां में घोल कर बहता रहा| इधर यशवन्त भी बहुत परेशान रहता, क्योंकि आर्यन पर वह जीतनी अधिक शक्ती का प्रयोग करता, और अपना जितना अधिक ध्यान बरा-बर उसपर केन्द्रित करता उतना ही अधिक आर्यन उसकी मुठ्ठी से फिसलता रहा जैसे किसी मुठ्ठी से जीतनी ताकत से रेत को पकड़ता है| रेत फसके मुठ्ठी से सब फिसल जाती है, ऐसा ही आर्यन के साथ हो रहा था| वह रेत के समान उसके सामर्थ से बाहर होने लगा, लेकिन यशवन्त भी ईतना जल्दी कहां हार मानने को तैयार होता है|

दूध के समान जल मिलाके बालक को पिलावें। जन्म के पश्चात् बालक और उसकी माता को दूसरे स्थान जहाँ का वायु शुद्ध हो वहां रक्खें सुगन्ध तथा दर्शनीय पदार्थ भी रक्खें और उस देश में भ्रमण कराना उचित है कि जहां का वायु शुद्ध हो और जहां धायी, गाय, बकरी आदि का दूध न मिल सके वहां जैसा उचित समझें वैसा करें। क्योंकि प्रसूता स्त्री के शरीर के अंश से बालक का शरीर होता है, इसी से स्त्री प्रसव समय निर्बल हो जाती है इसलिये प्रसूता स्त्री दूध न पिलावे। दूध रोकने के लिये स्तन के छिद्र पर उस ओषधी का लेप करे जिससे दूध स्रवित न हो। ऐसे करने से दूसरे महीने में पुनरपि युवती हो जाती है। तब तक पुरुष ब्रह्मचर्य्य से वीर्य्य का निग्रह रक ्खे। इस प्रकार जो स्त्री वा पुरुष करेंगे उनके उत्तम सन्तान, दीर्घायु, बल पराक्रम की वृद्धि होती ही रहेगी कि जिससे सब सन्तान उत्तम बल, पराक्रमयुक्त, दीर्घायु, धार्मिक हों। स्त्री योनिस ंकोच, शोधन और पुरुष वीर्य्य का स्तम्भन करे। पुनः सन्तान जितने होंगे वे भी सब उत्तम होंगे। बालकों को माता सदा उत्तम शिक्षा करे, जिससे सन्तान सभ्य हों और किसी अंग से कुचेष्टा न करने पावें। जब बोलने लगें तब उसकी माता बालक की जिह्वा जिस प्रकार कोमल होकर स्पष्ट उच्चारण कर सके वैसा उपाय करे कि जो जिस वर्ण का स्थान, प्रयत्न अर्थात् जैसे 'प' इसका ओष्ठ स्थान और स्पृष्ट प्रयत्न दोनों ओष्ठों को

मिलाकर बोलना; ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत अक्षरों को ठीक-ठीक बोल सकना। मधुर, गम्भीर, सुन्दर स्वर, अक्षर, मात्र, पद, वाक्य, संहिता अवसान भिन्न-भिन्न श्रवण होवे। जब वह कुछ-कुछ बोलने और समझने लगे तब सुन्दर वाणी और बड़े, छोटे, मान्य, पिता, माता, राजा, विद्वान् आदि से भाषण, उनसे वर्त्तमान और उनके पास बैठने आदि की भी शिक्षा करें जिस से कहीं उन का अयोग्य व्यवहार न हो के सर्वत्र प्रतिष्ठा हुआ करे। जैसे सन्तान जितेन्द्रिय, विद्याप्रिय और सत्संग में रुचि करें वैसा प्रयत्न करते रहें। व्यर्थ क्रीडा, रोदन, हास्य, लड़ाई, हर्ष, शोक, किसी पदार्थ में लोलुपता, ईर्ष्या, द्वेषादि न करें। उपस्थेन्द्रिय से स्पर्श और मर्दन से वीर्य की क्षीणता, नपुंसकता होती और हस्त में दुर्गन्ध भी होता है इससे उसका स्पर्श न करें। सदा सत्यभाषण शौर्य, धैर्य, प्रसन्नवदन आदि गुणों की प्राप्ति जिस प्रकार हो, करावें।

आर्यन तो किसी भि सर्त पर स्वयं को मुक्त करना चाहता था, और अपनी मां भाई को भी मुक्त करना चाहता था, यशवन्त के अत्याचार और शोषण से| अब तक वह बहुत कुछ यशवन्त के जीवन का गणित और उसका जीवन का फलसफा आर्यन ने समझ लिया था| इसलिये वह यशवन्त से बिल्कुल बात नहीं करता था, आर्यन का स्वभाव धिरे- धिरे बिल्कुल बदल गया वह अन्दर ही अन्दर से यशवन्त से अत्यधिक नफरत करने लगा था, वह उसमय बहुत छोटा भी नहीं था काफि कुछ समझने लगा था| यशवन्त उसे मार-पिट कर कड़े से कड़ा दण्ड जो उसने गल्ती नहीं कि है, उसके लिये उसको देकर समझाने और उसको अपने मन माफिक बनाने के लिये तरह के उदाहरण दे कर पाठ पढ़ता, मिठा बोलों सभी को प्रणाम करों इत्यादि तरह का प्रवचन देता, जिसकी भाषा में स्वयं कोई मिठास नहीं होती, बहुत कठोर और क्रोध आवेश और अत्यधिक ज्वलनशिल हृदय बिदारक भाषा का प्रयोग करता, जो काटों कि तरह चुभती थी, आर्यन को जिस प्रकार कोई भाला चुभाता है| किसी नाजुक अंगो पर, यशवन्त वह स्वयं अपने पिता को गाली देता और मौका मिलने पर मारने से नहीं चुकता, लेकिन वह आर्यन को उपदेश देता कि माँ बाप कां सम्मान करों| जैसा कि कहा जाता है, कि जो उपदेश हम दुसरों को देते पहले उसको शक्ति के साथ स्वयं पर लागु करना चाहिये|

जब पांच-पांच वर्ष के लड़का लड़की हों तब देवनागरी अक्षरों का अभ्यास करावें। अन्य देशीय भाषाओं के अक्षरों का भी। उसके पश्चात् जिन से अच्छी शिक्षा, विद्या, धर्म, परमेश्वर, माता, पिता, आचार्य, विद्वान्, अतिथि, राजा, प्रजा, कुटुम्ब, बन्धु, भगिनी, भृत्य आदि से कैसे-कैसे वर्त्तना इन बातों के मन्त्र, श्लोक, सूत्र, गद्य, पद्य भी अर्थ सहित कण्ठस्थ करावें। जिन से सन्तान किसी धूर्त के बहकाने में न आवें और जो-जो विद्या, धर्मविरुद्ध भ्रान्तिजाल में गिराने वाले व्यवहार हैं उन का भी उपदेश कर दें जिस से भूत प्रेत आदि मिथ्या बातों का विश्वास न हो ।

गुरोः प्रेतस्य शिष्यस्तु पितृमेधं समाचरन्।

प्रेतहारैः समं तत्र दशरात्रेण शुद्ध्यति।। मनु०।।

अर्थ-जब गुरु का प्राणान्त हो तब मृतकशरीर जिस का नाम प्रेत है उस का दाह करनेहारा शिष्य प्रेतहार अर्थात् मृतक को उठाने वालों के साथ दशवें दिन शुद्ध होता है। और जब उस शरीर का दाह हो चुका तब उस का नाम भूत होता है अर्थात् वह अमुकनामा पुरुष था। जितने उत्पन्न हों, वर्त्तमान में आ के न रहें वे भूतस्थ होने से उन का नाम भूत है। ऐसा ब्रह्मा से लेके आज पर्यन्त के विद्वानों का सिद्धान्त है परन्तु जिस को शंका, कुसंग, कुसंस्कार होता है उस को भय और शंकारूप भूत, प्रेत, शाकिनी, डाकिनी आदि अनेक भ्रमजाल दुःखदायक होते हैं। देखो! जब कोई प्राणी मरता है तब उसका जीव पाप, पुण्य के वश होकर परमेश्वर की व्यवस्था से सुख दुःख के फल भोगने के अर्थ जन्मान्तर धारण करता है। क्या इस अविनाशी परमेश्वर की व्यवस्था का कोई भी नाश कर सकता है?

अज्ञानी लोग वैद्यक शास्त्र वा पदार्थविद्या के पढ़ने, सुनने और विचार से रहित होकर सन्निपातज्वरादि शारीरिक और उन्मादादि मानस रोगों का नाम भूत प्रेतादि धरते हैं। उन का औषधसेवन और पथ्यादि उचित व्यवहार न करके उन धूर्त, पाखण्डी, महामूर्ख, अनाचारी, स्वार्थी, भंगी, चमार, शूद्र, म्लेच्छादि पर भी विश्वासी होकर अनेक प्रकार से ढोंग, छल, कपट और उच्छिष्ट भोजन, डोरा, धागा आदि मिथ्या मन्त्र, यन्त्र बांधते-बंधवाते फिरते हैं । अपने धन का नाश, सन्तान आदि की दुर्दशा और रोगों को बढ़ा कर दुःख देते फिरते हैं। जब आंख के अन्वमे और गांठ के पूरे उन दुर्बुद्धि पापी स्वार्थियों के पास जाकर पूछते हैं कि-'महाराज ! इस लड़का, लड़की, स्त्री और पुरुष को न जाने क्या हो गया है? ' तब वे बोलते हैं कि 'इस के शरीर में बड़ा भूत, प्रेत, भैरव, शीतला आदि देवी आ गई है, जब तक तुम इस का उपाय न करोगे तब तक ये न छूटेंगे और प्राण भी ले लेंगे। जो तुम मलीदा वा इतनी भेंट दो तो मन्त्र जप पुरश्चरण से झाड़ के इन को निकाल दें। तब वे अन्धे और उन के सम्बन्धी बोलते हैं कि 'महाराज ! चाहे हमारा सर्वस्व जाओ परन्तु इन को अच्छा कर दीजिए।' तब तो उन की बन पड़ती है। वे धूर्त्त कहते हैं-'अच्छा लाओ इतनी सामग्री, इतनी दक्षिणा, देवता को भेंट और ग्रहदान कराओ।' झांझ, मृदंग, ढोल, थाली लेके उसके सामने बजाते गाते और उन में से एक पाखण्डी उन्मत्त होके नाच कूद के कहता है-'मैं इसका प्राण ही ले लूँगा।' तब वे अन्धे उस भंगी चमार आदि नीच के पगों में पड़ के कहते हैं-'आप चाहें सो लीजिये इस को बचाइये।' तब वह धूर्त्त बोलता है मैं हनुमान् हूँ, लाओ पक्की मिठाई, तेल, सिन्दूर, सवा मन का रोट और लाल लंगोट। मैं देवी वा भैरव हूं, लाओ पांच बोतल मद्य, बीस मुर्गी, पांच बकरे, मिठाई और वस्त्र।' जब वे कहते हैं कि-'जो चाहो सो लो' तब तो वह पागल बहुत नाचने कूदने लगता है परन्तु जो कोई बुद्धिमान् उनकी भेंट 'पांच जूता, दण्डा वा चपेटा, लातें मारें' तो उसके हनुमान्, देवी और

भैरव झट प्रसन्न होकर भाग जाते हैं। क्योंकि वह उन का केवल धनादि हरण करने के प्रयोजनार्थ ढोंग है।

इस तरह यशवन्त जब बुरी तरह से परेशान हो गया, और उसके कुछ चाहने वालो ने उसे सुझाव दिया कि आर्यन को किसी अच्छे विद्यालय में दाखिला कराय जाये, क्योंकि आर्यन किसी एक विद्यालय में लगातार शिक्षा ग्रहण नहीं कर पाया | बार-बार विद्यालय यशवन्त की ईच्छा से बदल देता था| अब वह सब सहर में रहने लगे थे, कुछ एक महिने से जहां पर यशवन्त के मामा का अपना मकान था| पहले यशवन्त अपने मामा के यहां पर उनके घर में रहा परिवार समेत फिर अपना किराये का कमरा लेकर उसमें सपरिवार रहने लगा| लेकिन उसका स्वभाव परिवार के साथ नहीं बदला यद्यपि यहां पर और हिन्सक रुप अक्तियांर कर लिया था, कमरा किराये का था और बिल्कुल अलग था जहां कोई उसे कुछ कहने वाला नहीं था| वहां पर केवल एक मामा का परिचित घर था जहां पर आर्यन काफी समय बिताता था, शुरु में वह उनके मामा के घर पर ही रहता था, उनके यहां और उनके लड़के- लड़किया कुछ आर्यन के उम्र के कुछ उससे अधिक बड़े थे| आर्यन के अन्दर एक विशेश गुण था कि वह किसी के साथ बहुत जल्दी घुल- मिल जाता था और बहुत हंसमुख स्वभाव का था, जिससे भी वह पहले मिलता उससे थोड़े समय में ही उसे अपनी तरफ दिव्य आकर्षण शक्तियों के बल पर आकर्षित कर लेता, और लोग उससे अधिक प्रेम करने लगते थे| जल्दी वह किसी की बातों का बुरा भी नहीं मानता था| अत्यधिक मिलनसारता के कारण अजनबियों को भी अपना सहयोगि बना लेता था| यह एक विशेष कारण था जिससे यशवन्त बहुत खलता था| वह नहीं चाहता था कि आर्यन उसके मामा के घर पर जाये और पर रहे, जिसके लिये उसने आर्यन पर बहुत अधिक दबाव दिया, जिसके परिणाम स्वरुप वहां पर जाना बिल्कुल बन्द कर दिया| आर्यन की उम्र उस समय लगभग ११ साल रही होगि जब उसका दाखिला सहर के एक हिन्दी मिडियम जुनियर स्कुल में कक्षा ६ में कराया गया| वह विद्यालय काफि बड़ा और सुन्दर था, जहां पर बहुत से अध्यापक और अध्यापिका शिक्षण का कार्य करते थे| वह सब प्रायः आर्यन से प्रेम पुर्वक पेश आते थे| अचानक कुछ महिनों के अन्दर वहां जो विद्यालय का मालिक था उसका किसी औरत शिक्षिका के साथ गलत सम्बन्द्ध की हवा लोगों अत्यधिक तेजी से फैलने लगी| जिसके कारण उस विद्यालय क ो बन्द कर दिया गया| इस तरह से विद्यालय जाना बन्द हो गया| जससे आर्यन घर पर ही रहता, जब कि यशवन्त रोज सुबह इलहाबाद से ज्ञानपुर मे ं अपने मेडिकल स्टोर को चलाने के लिये आता-जाता रेलगाड़ी से, मंगलवार को कमरें पर रहत दिन भर कभी -कभी वह मंगल वार को हनुमान जी के मंदिर में उनके दर्शन के लिये जाता था| बाकी समय वही पारिवारिक क्लेश करता करता मारता- पिटता उसने अपने लिये एक टेप रिकार्ड ले रखा था, जो कभी आर्यन उसे छु लेता उसके लिये मारता, और उसने स्वयं पढ़ाना भी सुरु किया रोज वह आर्यन को एक पेज सुलेख

लिखने को कहता, आर्यन जब लिखता तो त्रुटिया निकालता फिर उसके लिये दण्ड जो शुरु हुआ तो बन्द होने का नाम नहीं लेता खाना बन्द कर देना शर्दि में कपड़ा सभी उतार कर बाहर पेड़ पर लटका देना, पेड़ जो वही पर किराये के कमरे के पिछे थोड़ी सी खाली जमिन थी उसमें उसके चारों तरफ करिब दस फुट चारदिवारी थी| आर्यन के हांथों कि कलाईयों में रस्सि से बांध कर लटकाने से बहुत गहरा घाव बन गया जो हमेंशा के लिये निशान बन गया|

और जब किसी ग्रहग्रस्त ग्रहरूप ज्योतिर्विदाभास के पास जाके वे कहते हैं-'हे महाराज! इस को क्या है? ' तब वे कहते हैं कि-'इस पर सूर्य्यादि क्रूर ग्रह चढ़े हैं। जो तुम इन की शान्ति, पाठ, पूजा, दान कराओ तो इस को सुख हो जाय, नहीं तो बहुत पीड़ित होकर मर जाय तो भी आश्चर्य नहीं।'

(उत्तर) कहिये ज्योतिर्वित् ! जैसी यह पृथिवी जड़ है वैसे ही सूर्यादि लोक हैं, वे ताप और प्रकाशादि से भिन्न कुछ भी नहीं कर सकते। क्या ये चेतन हैं जो क्रोधित होके दुःख और शान्त होके सुख दे सकें?

(प्रश्न) क्या जो यह संसार में राजा प्रजा सुखी दुःखी हो रहे हैं यह ग्रहों का फल नहीं है?

(उत्तर) नहीं, ये सब पाप पुण्यों के फल हैं।

(प्रश्न) तो क्या ज्योोतिषशास्त्र झूठा है?

(उत्तर) नहीं, जो उसमें अंक, बीज, रेखागणित विद्या है वह सब सच्ची, जो फल की लीला है वह सब झूठी है।

(प्रश्न) क्या जो यह जन्मपत्र है सो निष्फल है।

(उत्तर) हां, वह जन्मपत्र नहीं किन्तु उसका नाम 'शोकपत्र' रखना चाहिये क्योंकि जब सन्तान का जन्म होता है तब सब को आनन्द होता है। परन्तु वह आनन्द तब तक होता है कि जब तक जन्मपत्र बनके ग्रहों का फल न सुने। जब पुरोहित जन्मपत्र बनाने को कहता है तब उस के माता, पिता पुरोहित से कहते हैं-'महाराज! आप बहुत अच्छा जन्मपत्र बनाइये' जो धनाढ्य हों तो बहुत सी लाल पीली रेखाओं से चित्र विचित्र और निर्धन हो तो साधारण रीति से जन्मपत्र बनाके सुनाने को आता है। तब उसके मां बाप ज्योतिषी जी के सामने बैठ के कहते हैं-'इस का जन्मपत्र अच्छा तो है? ' ज्योतिषी कहता है-'जो है सो सुना देता हूं। इसके जन्मग्रह बहुत अच्छे और मित्रग्रह भी बहुत अच्छे हैं जिन का फल धनाढ्य और प्रतिष्ठावान्, जिस सभा में जा बैठेगा तो सब के ऊपर इस का तेज पड़ेगा। शरीर से आरोग्य और राज्यमानी होगा।' इत्यादि बातें सुनके पिता आदि बोलते हैं-'वाह वाह ज्योतिषी जी! आप बहुत अच्छे हो।' ज्योतिषी जी समझते हैं इन बातों से कार्य्य सिद्ध नहीं

होता। तब ज्योतिषी बोलता है-‘ये ग्रह तो बहुत अच्छे हैं परन्तु ये ग्रह क्रूर हैं अर्थात् फ़लाने-फ़लाने ग्रह के योग से ८ वर्ष में इस का मृत्युयोग है।’ इस को सुन के माता पितादि पुत्र के जन्म के आनन्द को छोड़ के शोकसागर में डूब कर ज्योतिषी से कहते हैं कि ‘महाराज जी! अब हम क्या करें? ’ तब ज्योतिषी जी कहते हैं- ‘उपाय करो’। गृहस्थ पूछे ‘क्या उपाय करें।’ ज्योतिषी जी प्रस्ताव करने लगते हैं कि ‘ऐसा-ऐसा दान करो। ग्रह के मन्त्र का जप कराओ और नित्य ब्राह्मणों को भोजन कराओगे तो अनुमान है कि नवग्रहों के विघ्न हट जायेंगे।’ अनुमान शब्द इसलिये है कि जो मर जायेगा तो कहेंगे हम क्या करें परमेश्वर के ऊपर कोई नहीं है। हम ने तो बहुत सा यत्न किया और तुम ने कराया, उस के कर्म ऐसे ही थे। और जो बच जाय तो कहते है कि देखो-हमारे मन्त्र, देवता और ब्राह्मणों की कैसी शक्ति है? तुम्हारे लड़के को बचा दिया। यहां यह बात होनी चाहिये कि जो इनके जप पाठ से कुछ न हो तो दूने तिगुने रुपये उन धूर्तों से ले लेने चाहिये और बच जाय तो भी ले लेने चाहिये क्योंकि जैसे ज्योतिषियों ने कहा कि ‘इस के कर्म और परमेश्वर के नियम तोड़ने का सामर्थ्य किसी का नहीं ।’ वैसे गृहस्थ भी कहें कि ‘यह अपने कर्म और परमेश्वर के नियम से बचा है, तुम्हारे करने से नहीं’ और तीसरे गुरु आदि भी पुण्य दान करा के आप ले लेते हैं तो उनको भी वही उत्तर देना, जो ज्योतिषियों को दिया था।

अब रह गई शीतला और मन्त्र, तन्त्र, यन्त्र आदि। ये भी ऐसे ही ढोंग मचाते हैं। कोई कहता है कि ‘जो हम मन्त्र पढ़ के डोरा वा यन्त्र बना देवें तो हमारे देवता और पीर उस मन्त्र, यन्त्र के प्रताप से उस को कोई विघ्न नहीं होने देते।’ उन को वही उत्तर देना चाहिये कि क्या तुम मृत्यु, परमेश्वर के नियम और कर्मफल से भी बचा सकोगे? तुम्हारे इस प्रकार करने से भी कितने ही लड़के मर जाते हैं और तुम्हारे घर में भी मर जाते हैं और क्या तुम मरण से बच सकोगे? तब वे कुछ भी नहीं कह सकते और वे धूर्त्त जान लेते हैं कि यहां हमारी दाल नहीं गलेगी। इस से इन सब मिथ्या व्यवहारों को छोड़ कर धार्मिक, सब देश के उपकारकर्त्ता, निष्कपटता से सब को विद्या पढ़ाने वाले, उत्तम विद्वान् लोगों का प्रत्युपकार करना जैसा वे जगत् का उपकार करते हैं, इस काम को कभी न छोड़ना चाहिये। और जितनी लीला रसायन, मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण आदि करना कहते हैं उन को भी महापामर समझना चाहिये।

यशवन्त के लिये अपना स्वभाव बदलना असम्भव बन गया था उसे इसकी चिन्ता भी नहीं थी| क्योंकि वह समाज के ऐसे परिवार और तबके से सम्बन्द्ध रखता था जो यह मानते थे कि उनकी प्रतिष्ठा उनके सारे अवगुणों को पचां लेगि, वास्तव में ऐसा यथार्थ भी है, क्योंकि आर्यन ने उससे अकेला बिद्रोह किया, आगे चल कर जिसमें उसको अपना सब कुछ गवाना पड़ता है, और पुरी दुनिया यशवन्त को ही ठीक कहती है, और हमेंशा यशवन्त का ही पक्ष लेती है| आर्यन सब कुछ

जीवन का दांव पर लगा कर जाना की वह झुठा और गलत है| और यशवन्त जैसे व्यक्ति सर्वगुण सम्पन्न है, उनमें अब किसी प्रकार सुधार कि सम्भावना नहीं है| वह समाज का प्रतिष्ठित व्यक्ति है| जो समाज इसकी खुली छुट देता है कि पत्नी और बच्चों को पुरुष कि व्यक्तिगत सम्पत्ती घोसित करता है| और वह उसे बनाये बिगाड़े का पूर्ण अधिकार देता है, यशवन्त जैसे पुरुष उसका खुन चुस जाये उसे कोई बोलने वाला नहीं वह स्वयं को उनका भगवान मानता है, और नादान निरअपराध कमजोर अपने आश्रित बच्चों और अबला नारी का शोशण दोहन की खुलि छुट देता है| और उस पर अपनी शक्ति का प्रयोग कर के समाज में अब्बल दर्जे के गुण्डे बनते है| जिनके लिये कानुन कोई चिज नहीं है, वास्तव में भारत में कानुन नाम कि कोई बस्तु नही है वह तो मात्र कमजोर और बेबस लोगों को प्रताणित करने का बदमाशों के हाथों का खिलौना मात्र है| वास्तव में जिसे हम परिवार या समाज कहते है वह निकृष्ट और अब्बल दर्जे के गुण्डों बदमासों का एक खुखार खुन- चुस संघटन है, जो किसी सच्चे मनुष्य को स्विकारने या उसे पचाने का सामर्थ नहीं रखता है| यहां सब कुछ खोखला और झुठा है उसे भि बहुत प्रकार से लिप- पोत कर रंग रोगन के साथ प्रस्तुत करने का यहां पारम्परिक विश्वविद्यालय जैसी संस्थाये चलाई जा रही है| यह सब किसी प्रकार के बदलाव को स्विकारने के पक्षधर नहीं है| यह सब लकिर के फकिर कंगाल है, भिखारी भुख और प्यास से ब्याकुल हुये साक्षात चांडाल है| दुर से देखने पर देवता प्रतित होते है अन्दर से सभी खुन चुस पिचास और नरभक्षि राक्षस है| इनसे बहुत सावधान रहने कि आवश्यक्ता है| इन्हें जिसका अनुभव नहीं है तो यह गुरुओं द्वारा बतायें गये मार्ग पर चलते है, इनके जैसा इनका गुरु भी ढोगी और पाखण्डी है| समाज या परिवार के द्वारा जो स्त्री पुरुष सताया या दबाया जाता है, वह समाज और परिवार पर एक दिन अवश्य भारी पड़ता है| किसी को दबाने का मतलब है, वैज्ञानिक भाषा में उसे शक्तिशाली बनाना है| दुःख को झलते-झेलते वह इतना परिपक्क बन जाता है कि हम उसे उसका विशेषज्ञ कह सकते है, वह दुःख किसी प्रकार का क्यों ना हो, दुःख प्रायः तिन प्रकार का है, शारीरिक, मानसिक, और आत्मिक जसमें सबसे अधिक दुःख दाई दर्द शारीरिक होता है, इसलिये संसार में मनुष्यों सबसे अधिक शारीरिक कष्ट दिया जाता है फिर मानसिक क्लेश बहुत कम होते है जिनको आत्मिक दुःख मिलता है यह स्वयं का चुनाव होता है| लेकिन यह समाज और परिवार जिसे माँ बाप कहते है यह एक ऐसे लाईलाज भयंकर नासुर है जिनका कोई ईलाज या दवा नहीं है, केवल मौत एक दवा है वह भी सुरमाओं से डरती है, जैसा कि किसी ने कहा है डरपोक, कायर, भीरु रोज पल-पल मरते है, लेकिन जो बहादूर सूरमा होते है वह कभी नहीं यद्यपि जीवन में पहली और अन्तिम बार मरते है| उनसे स्वयं दुःख दूर भागता है| जैसे निहाई हथौड़े के घात को झेलते-झेलते इतना अधिक मजबुत हो जाती है कि निहाई और हथौड़ के मध्य जो आता वह उन दोनों के दबाव स्वयं अपना रूप और आकार बदल लेता है, अर्थात उस बिच के लोहे को लुहार हथौड़े और निहाई

कि सहायता से अपने मन माफिक औजार बना लेता है जैसे तलवार, भाला, बरक्षा, कुल्हाड़ी ईत्यादि लेकिन निहाई और हथौड़े को कुछ खास फर्क नहीं पड़ता, क्योंकि वह दोनों समान बल से स्वयं कि रक्षा कर लेते है| यशवन्त स्वयं हथौड़ा है और आर्यन अब तक निहाई बन चुका है, उनके बिच में जो समाज रुपी गरम लोहा है वह सब खतरनाक औजार है जिसको अदृश्य परमात्मा रूपी लुहार बन कर दोनों का उपयोग कर के अपनी सृष्टि के लिये औजार बना रहा है जिससे नर संहार का कार्य लिया जाता है| यह सब कितनी अद्भुत लिला है, उस लिला धर की, वह तो सभी को ठोस और फौलाद बनाना चाहता है लेकिन सभी कहा बन पाते है|

इत्यादि मिथ्या बातों का उपदेश बाल्यावस्था ही में सन्तानों के हृदय में डाल दें कि जिस से स्वसन्तान किसी के भ्रमजाल में पड़ के दुःख न पावें और वीर्य की रक्षा में आनन्द और नाश करने में दुःखप्राप्ति भी जना देनी चाहिये। जैसे- 'देखो जिस के शरीर में सुरक्षित वीर्य रहता है तब उस को आरोग्य, बुद्धि, बल, पराक्रम बढ़ के बहुत सुख की प्राप्ति होती है। इसके रक्षण में यही रीति है कि विषयों की कथा, विषयी लोगों का संग, विषयों का ध्यान, स्त्री का दर्शन, एकान्त सेवन, सम्भाषण और स्पर्श आदि कर्म से ब्रह्मचारी लोग पृथक् रह कर उत्तम शिक्षा और पूर्ण विद्या को प्राप्त होवें। जिसके शरीर में वीर्य नहीं होता वह नपुंसक महाकुलक्षणी और जिस को प्रमेह रोग होता है वह दुर्बल, निस्तेज, निर्बुद्धि, उत्साह, साहस, धैर्य, बल, पराक्रमादि गुणों से रहित होकर नष्ट हो जाता है। जो तुम लोग सुशिक्षा और विद्या के ग्रहण, वीर्य की रक्षा करने में इस समय चूकोगे तो पुनः इस जन्म में तुम को यह अमूल्य समय प्राप्त नहीं हो सकेगा। जब तक हम लोग गृहकर्मों के करने वाले जीते हैं तभी तक तुम को विद्या-ग्रहण और शरीर का बल बढ़ाना चाहिये।' इसी प्रकार की अन्य-अन्य शिक्षा भी माता और पिता करें।

इसीलिए 'मातृमान् पितृमान्' शब्द का ग्रहण उक्त वचन में किया है अर्थात् जन्म से ५वें वर्ष तक बालकों को माता, ६ वर्ष से ८वें वर्ष तक पिता शिक्षा करें और ९वें वर्ष के आरम्भ में द्विज अपने सन्तानों का उपनयन करके आचार्य कुल में अर्थात् जहां पूर्ण विद्वान् और पूर्ण विदुषी स्त्री शिक्षा और विद्यादान करने वाली हों वहां लड़के और लड़कियों को भेज दें और शूद्रादि वर्ण उपनयन किये विना विद्याभ्यास के लिये गुरुकुल में भेज दें।

उन्हीं के सन्तान विद्वान्, सभ्य और सुशिक्षित होते हैं, जो पढ़ाने में सन्तानों का लाड़न कभी नहीं करते किन्तु ताड़ना ही करते रहते हैं। इसमें व्याकरण महाभाष्य का प्रमाण है-

सामृतैः पाणिभिर्घ्नन्ति गुरवो न विषोक्षितैः।

लालनाश्रयिणो दोषास्ताडनाश्रयिणो गुणाः।।

अर्थ-जो माता, पिता और आचार्य, सन्तान और शिष्यों का ताड़न करते हैं वे जानो अपने सन्तान और शिष्यों को अपने हाथ से अमृत पिला रहे हैं और जो सन्तानों वा शिष्यों का लाड़न करते हैं वे अपने सन्तानों और शिष्यों को विष पिला के नष्ट भ्रष्ट कर देते हैं। क्योंकि लाड़न से सन्तान और शिष्य दोषयुक्त तथा ताड़ना से गुणयुक्त होते हैं और सन्तान और शिष्य लोग भी ताड़ना से प्रसन्न और लाड़न से अप्रसन्न सदा रहा करें। परन्तु माता, पिता तथा अध्यापक लोग ईर्ष्या, द्वेष से ताड़न न करें किन्तु ऊपर से भयप्रदान और भीतर से कृपादृष्टि रक्खें।

आर्यन और श्यामा के लिये जो निकृष्ट और दुष्ट व्यक्ति है, उसे समाज में अत्यधिक सम्मानित और श्रेष्ठ लोगों की सुचि में रखा जाता है, श्यामा और आर्यन को समाज और परिवार के ठेकेदार कहते है कि तुम्हारें कर्मों का दोष है कि तुम्हारा भाग्य या नशिब खराब है, या परमात्मा ने ऐसा ही तुम्हारे लिये लिखा है तुम सब के मस्तक पर| जो व्यक्ति समाज या परिवार के लिये उसका पालन हार या कुछ अच्छा उत्कृष्ट कार्य कर सकता है उसको समाज या परिवार पर बोझ बनाना कहां का न्याय है? किसी को बिवस, बेबस किया गया कि वह एक गंदा और बुरा व्यक्ति बने, यदि थोड़ा धैर्य या प्रेम से कार्य लिया जाये तो यशवन्त जैसे व्यक्तियों के द्वारा तो, वह और उसका बेटा आर्यन एक दुसरे के सहयोगी बन सकते है, आर्यन उसके ब्यापार में उसका हाथ बटाता| या फिर वह समाज के लिये अच्छा ईन्सान सुसज्जन नागरिकर बनकर समाज कि सेवा करता जैसे एक चिकित्सक, शिक्षक, अभियन्ता, या एक अच्छा नेता जो देश को सत्य के मार्ग को आगे बढ़ने के लिये सहयोग करता, क्योंकि एक सम्पन्न परिवार के साथ सुशिक्षत लोगों का संसर्ग मिला था| यशवन्त स्वयं श्यामा को थोड़ा समय देकर पढ़ा सकता है, लेकिन वह ऐसा नहीं करता है क्योंकि उसका अहंकार उसे यह सब करने से रोकता है| उसका स्वाभिमान उसे विद्वेश करने के लिये प्रेरित करता है| उसकी प्रकृति और उसके भाग्य में अभी और भोग विलाश करना उसके साथ इस नस्वर संसार का आनन्द लिखा है| और आर्यन और श्यामा के जीवन में तबाही और उनका सर्व नाश और आर्यन के जीवन में अकाल तड़प-तड़प कर घुंट-घुट कर मरना सबका अपना-अपना कर्मों का फल नहीं तो यह क्या है? या कुछ और लिखा है यह निश्चित है कि जो आदमी आज अपने शरिर पर खरोंच को झेल रहा है उसे आगे चल कर उसको अपनी चमड़ी को उधड़वाने के कष्ट को झेलना होगा, जो आदमी अपनी एक उंगली को खोता है उसे आगे चल कर अपने हाथ पैर और पुरी शरीर को गवांना पड़ेगा क्योंकि यहीं प्रकृति का नियम है| जो कुछ कहना था वह तो नहीं कहा जो कहा है वही हो कर रहेगा, जैसा कि आर्यन को यहा पर रोज नई- नई कठिनाईयों का सामना करना पड़ रहा उसके लिये कठिनाईयां कभी कम नहीं होगी और जीतना वह बढ़ता है ठीक उसी की एवज में उसकी कठीनाईयां भी उसके लिये बढ़ती है उसके बर्दास्त करने का नाम ही उसका जीवन है| अन्यथा उसकी मृत्यु होगी, यहीं तलास और अन्वेषण यहां पर निरन्तर हो रहा है| प्रकृति भी अभी अज्ञान में उसे भी आर्यन का

पूर्ण ज्ञान नहीं है, उसकी क्षमता का अभी तक तो उसने सब कुछ बर्दास्त करके उसने सबको पराजित किया है इसलिये प्रकृति उसके लिये निरन्तर एक से बढ़ कर एक चुनौतियों को खड़ा करती है| जैसा कि कहा जाता है यदि श्रद्धा से कोई कार्य किया जाये तो पुरी कायनात उसकी उस कार्य को पूर्ण करने में लग जाती है| आर्यन यहां सब कुछ सह रहा है बड़े दर्द को बर्दास्त करता है, प्रकृति अर्थात ब्रह्माण्ड भी उसके लिये पहले से अधिक शक्तिशाली दर्द देता है उसका ईसी दिसा में सहयोग करता है| और यशवन्त कि भि पुरी सहायता करता है कि वह किसी प्रकार से आर्यन को मारे क्योंकि उसमें उसकी श्रद्धा जुड़ी है, प्रकृति दोनों का भरपूर सहयोग करती है दोनों कि श्रद्धा के अनुरूप उनका विकास होता है, यशवन्त मारता है और आर्यन मार खाने वाला है, यहां वही सफल होगा जो मारना जानता है क्योकि यह प्रकृत हिंसक है इसका स्वभाव ही है कि यहां एक जीव दूसरे जीव को खा कर स्वयं जीन्दा रहता है, इस लिये कहते है जिव जिवस्य भोजनं|

जैसे अन्य शिक्षा की वैसी चोरी, जारी, आलस्य, प्रमाद, मादक द्रव्य, मिथ्याभाषण, हिसा, क्रूरता, ईर्ष्या, द्वेष, मोह आदि दोषों को छोड़ने और सत्याचार के ग्रहण करने की शिक्षा करें। क्योंकि जिस पुरुष ने जिसके सामने एक वार चोरी, जारी, मिथ्याभाषणादि कर्म किया उस की प्रतिष्ठा उस के सामने मृत्युपर्य्यन्त नहीं होती। जैसी हानि प्रतिज्ञा मिथ्या करने वाले की होती है वैसी अन्य किसी की नहीं। इस से जिस के साथ जैसी प्रतिज्ञा करनी उस के साथ वैसे ही पूरी करनी चाहिये अर्थात् जैसे किसी ने किसी से कहा कि 'मैं तुम को वा तुम मुझ से अमुक समय में मिलूँगा वा मिलना अथवा अमुक वस्तु अमुक समय में तुम को मैं दूँगा ।' इस को वैसे ही पूरी करे नहीं तो उसकी प्रतीति कोई भी न करेगा, इसलिये सदा सत्यभाषण और सत्यप्रतिज्ञायुक्त सब को होना चाहिये। किसी को अभिमान करना योग्य नहीं, क्योंकि **'अभिमानः श्रियं हन्ति'** यह विदुरनीति का वचन है। जो अभिमान अर्थात् अहंकार है वह सब शोभा और लक्ष्मी का नाश कर देता है, इस वास्ते अभिमान करना न चाहिये। छल, कपट वा कृतघ्नता से अपना ही हृदय दुःखित होता है तो दूसरे की क्या कथा कहनी चाहिये। छल और कपट उसको कहते हैं जो भीतर और बाहर और दूसरे को मोह में डाल और दूसरे की हानि पर ध्यान न देकर स्वप्रयोजन सिद्ध करना। 'कृतघ्नता' उस को कहते हैं कि किसी के किए हुए उपकार को न मानना। क्रोधादि दोष और कटुवचन को छोड़ शान्त और मधुर वचन ही बोले और बहुत बकवाद न करे। जितना बोलना चाहिये उससे न्यून वा अधिक न बोले। बड़ों को मान्य दे, उन के सामने उठ कर जा के उच्चासन पर बैठावे, प्रथम 'नमस्ते' करे। उनके सामने उत्तमासन पर न बैठे। सभा में वैसे स्थान में बैठे जैसी अपनी योग्यता हो और दूसरा कोई न उठावे। विरोध किसी से न करे। सम्पन्न होकर गुणों का ग्रहण और दोषों का त्याग रक्खें। सज्जनों का संग और दुष्टों का त्याग, अपने माता, पिता और आचार्य की तन, मन और धनादि उत्तम-उत्तम पदार्थों से प्रीतिपूर्वक सेवा करें।

यान्यस्माकँ् सुचरितानि तानि त्वयोपास्यानि नो इतराणि।। यह तैत्ति०।

इसका यह अभिप्राय है कि माता पिता आचार्य्य अपने सन्तान और शिष्यों को सदा सत्य उपदेश करें और यह भी कहें कि जो-जो हमारे धर्मयुक्त कर्म हैं उन-उन का ग्रहण करो और जो-जो दुष्ट कर्म हों उनका त्याग कर दिया करो। जो-जो सत्य जाने उन-उन का प्रकाश और प्रचार करे। किसी पाखण्डी दुष्टाचारी मनुष्य पर विश्वास न करें और जिस-जिस उत्तम कर्म के लिये माता, पिता और आचार्य आज्ञा देवें उस-उस का यथेष्ट पालन करो। जैसे माता, पिता ने धर्म, विद्या, अच्छे आचरण के श्लोक 'निघण्टु' 'निरुक्त' 'अष्टाध्यायी' अथवा अन्य सूत्र वा वेदमन्त्र कण्ठस्थ कराये हों उन-उन का पुनः अर्थ विद्यार्थियों को विदित करावें। जैसे प्रथम समुल्लास में परमेश्वर का व्याख्यान किया है उसी प्रकार मान के उस की उपासना करें। जिस प्रकार आरोग्य, विद्या और बल प्राप्त हो उसी प्रकार भोजन छादन और व्यवहार करें करावें अर्थात् जितनी क्षुधा हो उस से कुछ न्यून भोजन करे। मद्य मांसादि के सेवन से अलग रहें। अज्ञात गम्भीर जल में प्रवेश न करें क्योंकि जलजन्तु वा किसी अन्य पदार्थ से दुःख और जो तरना न जाने तो डूब ही जा सकता है। **'नाविज्ञाते जलाशये'** यह मनु का वचन। अविज्ञात जलाशय में प्रविष्ट होके स्नानादि न करें।

आर्यन को यहां उसकी प्रकृती कठोर से कठोर यातना और कष्ट पूर्णता के साथ चुनौतीपूर्ण जीवन देकर आगे का मार्ग प्रशस्थ कर रही हैं, उसे संसकारित किया जा रहा है|' करम का लेख मीटै ना भाई' जो लिखवा कर वह आया है वही सब कुछ उसके साथ हो रहा है या वह स्वयं अपना श्रष्टा बन कर अपने लिये जो लिख रहा है अपना भाग्य अपने कर्मों के माद्धयम से|

यशवन्त को अब ख्याल आया कि इसको पुनः किसी विद्यालय में प्रवेश कराया जाये, यही सोच कर जहां वह रहता था ठीक उसके बगल में बिद्यालय चलता था, उसमें अपने एक परिचित को भेज कर अगले शाल के लिये पुनः कक्षा में दाखिल कर दिया गया| यह विद्यालय ज्यादा बड़ा नही था, यहां पर अध्यापकों के द्वारा आर्यन को पिटना प्रारम्भ कर दिया गया, क्योंकि आर्यन पढ़ने लिखने में अवसत दर्जे का बच्चा था और उसका दाखिला सत्र शुरु होने के काफी बाद हुआ था जिसके लिये, अध्यापक दबाव बनाते पिटते लिखने का काम पूरा करों, आर्यन जब ऐसा नहीं कर पाया तो मार-पिट वहां विद्यालय में शुरु हो गई, जिससे जान कर कोई कार्य नहीं करता घर पर यशवन्त उसका काल और विद्यालय में अध्यापक- अध्यापिका जिसमें गणित का अध्यापक कुछ ज्याद ही क्रुर था जो आर्यन को दण्डीत करता था| क्योंकि आर्यन को गणित के सवाल ज्यादा समझ में नहीं आते थे|

अनुशासन आवश्यक है, मगर ज्यादा अनुशासन नुकसानदायक होता है| जैसा कि कहा गया है सर्वत्र अति बर्जयन्ते, अर्थात सभी प्रकार कि अतियों से बचना चाहिये| लेकिन यहां आर्यन और

यशवन्त यह दोनों अपनि अतियों का अतिक्रमण कर रहें है| जैसा कि महात्मा बुद्ध अपने एक शिष्य श्रवण को समझाते हुये कहते है, जो एक युवा राजकुमार था अचानक संसार कि वास्तविकता यथार्थ दु:ख-पिड़ा और अनन्त प्रकार के कष्टों को देख कर संसार से विरक्त हो गया| और महात्मा बुद्ध के सरण में आ कर उनसे नव सन्यास कि दिक्षा ग्रहण करके महासंघ नें उनके साथ आश्रम में रहने लगा| और वहां पर रह कर बहुत कठिन और दुस्कर साधनावों को करने लगा, साधनाओं कि अति पर पहुचने लगा जब सारे साधक ठिक रास्ते पर चलते, तो वह काटों के रास्ते पर चलता, और कईयों दिनों तक एक आसन पर बैठ कर भुखा-प्यासा रहकर साधना में तल्लीन रहने लगा जिससे उसकी शरिर थोड़े समय में बिल्कुल जर्जर बन कर केवल हाड़-मांस का पिन्जड़ बन गया उसकी चलना फिरना सामान्य जीवन जीना उसके लिये दुभर हो गया| जब यह सब श्रवण कि कथा महात्मा बुद्ध को ज्ञात हुआ, तो एक दिन उन्होने श्रवण को अपने पास बुलाकर, और उससे उन्होने कहा कि मैने सुना है कि तुम विणा बहुत अच्छी बजाना जानते हो| श्रवण ने कहा हां पहले मैं बजाया करता था| महात्मा बुद्ध ने कहा आज तुम बिणा बजाओगे और मै सुनुगा| इस तरह से एक बिणा श्रवण के पास लाया गया, तब श्रवण ने विणा पर हाथ फेरते ही मना कर दिया और कहा कि इसविणा के तार काफी ढिले है, यह बजने योग्य नहीं है| फिर महात्मा बुद्ध ने कहा ठीक है दूसरी विणा लाओ, जब दूसरी विणा लाई गई तो श्रवण ने उस विणा पर हाथ फेरते ही उसको भी बजाने से मना कर दिया| और कहा कि इसके तार बहुत कसे है जो उगंली लगाते ही टुट सकते है| महात्मा बुद्ध ने फिर तिसरी विणा को लाने का आदेश दिया| श्रवण ने जब तिसरी विणा का परिक्षण अपनी उगलियों से किया तो उसने कहा कि यह बिल्कुल ठीक है, अर्थात बजने योग्य है इसके तार ना ही अधिक ढिले है, और नाही बहुत अधिक कसे ही है| महात्मा बुद्ध ने कहा मै जानता हुं | यह सब मैंने तुम्हे समझाने के लिये ही व्यवस्था कि थी, जिस तरह विणा के लिये तारों का सम होना आवश्यक है उसी प्रकार से जीवन रुपी विणा को बजने के लिये और साधना के लिये भी जीवन में समता कि जरुरत है अति सर्वनाश का कारण बनती है जैसा कि तुम स्वयं के साथ कर रहे हो, अब समझ गये होगे कि मेरी देशना का अभिप्राय क्या है | अर्थात मध्य मार्ग का अनुसरण करके अपने जीवन लक्ष्य को उपलब्ध हो|

इसके सम्बन्ध में प्रकाण्ड विद्वान वेद और संस्कृति के महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में कुछ इस तरह से अपने विचार व्यक्त किये है कि किस प्रकार का आचरण माता और पिता को करना उचित है| और क्या अनुचित है|

दृष्टिपूतं न्यसेत्पादं वस्त्रपूतं जलं पिबेत्।

सत्यपूतां वदेद्वाचं मनःपूतं समाचरेत्।। मनु०।।

अर्थ-नीचे दृष्टि कर ऊँचे नीचे स्थान को देख के चले, वस्त्र से छान कर जल पिये, सत्य से पवित्र करके वचन बोले, मन से विचार के आचरण करे।

माता शत्रुः पिता वैरी येन बालो न पाठितः।

न शोभते सभामध्ये हंसमध्ये वको यथा ।।

यह किसी कवि का वचन है।

वे माता और पिता अपने सन्तानों के पूर्ण वैरी हैं जिन्होंने उन को विद्या की प्राप्ति न कराई, वे विद्वानों की सभा में वैसे तिरस्कृत और कुशोभित होते हैं जैसे हंसों के बीच में बगुला। यही माता, पिता का कर्त्तव्य कर्म परमधर्म और कीर्ति का काम है जो अपने सन्तानों को तन, मन, धन से विद्या, धर्म, सभ्यता और उत्तम शिक्षायुक्त करना।

अभी तक हमने देखा कि आर्यन जब ग्यारह साल का रहता है| तब अपने पिता यशवन्त से अत्यधिक भयभीत हो कर अपने प्राण रक्षा के लिये एकान्त स्थानों पर स्वयं को छुपाता है, जंगल में जो गांव के पिछे था उन वृक्षों पर छुप कर बैठा करता है| या फिर खेतों की फसलों में छुप कर बैठ जाता है| दिन भर युंही भुखा-प्यासा ही गुजार देता है| दिन भर बरा-बर एकान्त सेवन का निरन्तर अभ्यास करता है जैसे कोई साधक दिन दुनिया दूर अपनी मस्ती में मस्त रहता है| लेकिन इसको कोई सकारात्मक समझने वाला नही है आर्यन स्वयं अभी दुनिया की वास्तविक्ता से बहुत अधिक परिचित नहीं है|वह अब धिरे-धिरे मौन अकेला एकान्तवास जीवनयापन करने में पारंगत हो रहा है| इससे पहले जन्म के बाद लग-भग ४-५ साल तर बिल्कुव एक शब्द भी नहीं बोलता था|यहां तक उसको बुलवाने के लिये उसके सगे संबन्धियों को काफी परिश्रम और यातना पूर्ण व्यवहार उसके साथ करना पड़ा| ऐसा उसके साथ बाहरी दबाव द्वारा कराया जाता है| उसे इस प्रकार कि बिपरित परिस्थितीयों में जीवन जीने के लिये विवश किया जाता है| जिसकी वजह से वह पैदाईसी एक महान चिन्तक विचारक और एक कुशाग्र दार्शनिक प्रवृत्ति का धनी लड़का आगे चल कर बनता है| इसकी इस कला से कोई परिचित नहीं है, लोग उसे बेकार आलसी कायर कामचोर और क्या क्या कह कर संमबोधित करते है| जैसा कि कहा गया है हिरे की परख सिर्फ जौहरी ही कर सकता है, ऐसा ही किस्म का बहुमूल्य बेशकिमती कोहिनुर हिरा है आर्यन मगर उसको कोई पहचानने वाला नहीं है, वह एक ऐसे व्यक्ति के हाथों में पड़ा है जो उसे कोयले से अधिक नहीं समझता है क्योंकि वह कोयले कि खान में ही रहता ईसमें उसका कसुर क्या है जो अपराध उसने किया ही नहीं उसको उस अपराध के लिये आजिवन कारावास की सजा मिलती है|

आगे हम देखते हैं, जब वह सहर में अपने परिवार के साथ रहने के लिये आता है| तो फिर वह

अपनि पुरानी समस्याओं का शिकार होता है| और वह सहर में अपनी जान बचाने के लिये अपने यातना गृह से जहां उसका पिता उसके लिये जल्लाद कि भुमिका निभाता है| फर्क सिर्फ ईतना है कि जेल का जल्लाद मृत्यु दण्ड एक झटके में फांसी पर लटका कर देता है| और यहां आर्यन को रोज तड़पा-तड़पा कर हलाल किया जाता है लेकिन वह अपने दैविय गुणों कि वजह से हर बार बच जाता है| यहां सहर में वह स्वयं को बचाने के लिये पहले वहां माघमेला जो महिनों के लिए लगता है वहां पर जा कर धार्मिक आश्रमों में साधु- सन्तों, फक्कड़ों की संगतों में रहना प्रारम्भ कर देता है| जो नदी किनारे कल्पवास करने के लिये आकर संगम नगरी में ठहरे हुये है, कुछ महिनों के लिये| वहां से कई बार पकड़ कर उसको यशवन्त के परिचित उसे ला कर यशवन्त के सुपूर्द करते और यशवन्त उसे सुधारने के लिये नये तरिकों का निरन्तर प्रयोग करता रहता है| लेकिन जब भी आर्यन को मौका मिलता वह यशवन्त के चुंगुल से बाहर होने के लिये निरन्तर प्रयाष करता, जब कुम्भ का मेला समाप्त हो गया तब आर्यन रेलगाणियों पर सवार हो कर बिना किराये के दुर अपने रिस्तेदारों के यहां जाने लगा| जहां तक रेलगाणी जाती उससे जाता नहीं तो पैदल ही चलता दस- बिस किलोमीटर अपने गांव आ जाता या अपने मामा के यहां चला जाता, ऐसा करके वह कुछ समय के लिये ही स्वयं को बचा पाता था| यशवन्त को जैसे ही पता करता था, जब उसे पता चलता कि वह फलां अस्थान पर फलां रिस्तेदार के यहां पर है तो वह वहां से किसी अपने निकटतम परिचित को आर्यन को लाने के लिये भेजकर बुला लेता था|

शहरों में रहना, रात कहीं बाहर बिताना अत्यधिक मुस्किल और कठिन कार्य था मरता क्या नहीं करता वाली स्थितियों में आर्यन किसी तरह ठीठुर-ठीठुर कर सर्दि की रातों को बितता मजबुरी में उपर से भुख प्यास तड़पाती यह अलग किस्म कि दयनिय कारुणिक यातना वह बर्दास्त करता रह| आर्यन को जीवन जीना अत्यधिक दुस्कर और कठिन होता जा रहा था, समय के साथ वह जैसा बढ़ रहा था समस्याओं का उलझनों का ताण्वडव भी उसी प्रकार से बढ़ रहा था| जिसका कोई दुरगामी उपचार आर्यन के पास नहीं था| सारा समाधान कुछ काल के लिये था और अन्त में यशवन्त के कारागृह में पहुचना अनिवार्य बन गया था| और इधर यशवन्त अपनी जल्लाद कि भुमिका को दिन पर दिन और निखारता जा रहा था यातना के द्वारा ज्यादा से ज्यादा कष्ट पिड़ा दे कर उसको सुधरने के लिये विवश करना|

मगर दोनों कि प्रकृति काफी अडियल किस्म के घोड़े के समान हो गई और दोनों एक दूसरें को देखना पसन्द नहीं करते है, इन दोनों को कोई अदृश्य ताकत एक साथ रहने केलिये विवश करती है और यह दोनों कभी भी एक साथ रहने योग्य नहीं बन पाते हैं जीवन का कारवां जाने किस आत्मा के लिए अमृत रुप सरोवर वाली मंजिल कि तलास में निरन्तर आगे ही आगे बढ़ता रहता है| यशवन्त

आर्यन से बहुत अधिक परेशान हो जाता है साल दो साल शहर में रख कर फिर वही गांव में वापिस ला कर पटक देता है उसी भुत बंगला में, उससे पहले हम यह देखते है कि आर्यन को शहर में एक दो अच्छे विद्यालय में शिक्षा ग्रहण करने का मौका मिलता है, लेकिन बहुत अधिक जटिल और संकृण माहौल होने के कारण सुचारु रुप से शिक्षा नहीं चल पाती है| फिर भी उसमें अपने उम्र के बच्चों से कहीं अधिक जिवन के प्रति जागरुकता समाज परिवार के प्रगति के बारें में सजगता, समझदारी बुद्धिमत्ता कि कोई कमी नहीं आ रही है, जो यशवन्त के लिये चिन्ता का विषय बनता जा रहा है जब वह देखता है कि वह जरुरत से कहीं अधिक चालाक और विवेकी बनता जा रहा है एक अनुभवी बृद्ध पुरुष के समान है| जबकि उसके उम्र के बालक घर से साम को बाहर गांव मे निकलने से डरते है, जबकि आर्यन सैकड़ो किलोमिटर में बशे शहरों कि प्रत्येक गलियों से परिचित हो चुका है, और बाहर अकेले रात भी बिताने लगा है|

जो दण्ड है वही पुरुष राजा, वही न्याय का प्रचारकर्त्ता और सब का शासनकर्त्ता, वही चार वर्ण और आश्रमों के धर्म का प्रतिभू अर्थात् जामिन है।।१।। वही प्रजा का शासनकर्त्ता सब प्रजा का रक्षक, सोते हुए प्रजास्थ मनुष्यों में जागता है इसी लिये बुद्धिमान् लोग दण्ड ही को धर्म कहते हैं।।२।।

जो दण्ड अच्छे प्रकार विचार से धारण किया जाय तो वह सब प्रजा को आनन्दित कर देता है और जो विना विचारे चलाया जाय तो सब ओर से राजा का विनाश कर देता है।।३।।

विना दण्ड के सब वर्ण दूषित और सब मर्यादा छिन्न-भिन्न हो जायें। दण्ड के यथावत् न होने से सब लोगों का प्रकोप हो जावे।।४।।

जहां कृष्णवर्ण रक्तनेत्र भयंकर पुरुष के समान पापों का नाश करनेहारा दण्ड विचरता है वहां प्रजा मोह को प्राप्त न होके आनन्दित होती है परन्तु जो दण्ड का चलाने वाला पक्षपातरहित विद्वान् हो तो।।५।।

जो उस दण्ड का चलाने वाला सत्यवादी, विचार के करनेहारा, बुद्धिमान्, धर्म, अर्थ और काम की सिद्धि करने में पण्डित राजा है उसी को उस दण्ड का चलानेहारा विद्वान् लोग कहते हैं।।६।।

जो दण्ड को अच्छे प्रकार राजा चलाता है वह धर्म, अर्थ और काम की सिद्धि को बढ़ाता है और जो विषय में लम्पट, टेढ़ा, ईर्ष्या करनेहारा, क्षुद्र नीचबुद्धि न्यायाधीश राजा होता है, वह दण्ड से ही मारा जाता है।।७।।

ओ३म् तिसरा अध्याय समाप्त

४ जीव और जुनूनियत का नंगा नाच

ओ३म् ईमं देवाऽ असपत्नँ् सुवध्वं महते क्षत्रय महते ज्यैष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय ।।१।। -यजुः० अ० ९। मन्त्र ४०।।

हे (देवाः) विद्वानो राजप्रजाजनो तुम (इमम्) इस प्रकार के पुरुष को (महते क्षत्रय) बड़े चक्रवर्ति राज्य (महते ज्यैष्ठ्याय) सब से बड़े होने (महते जानराज्याय) बड़े-बड़े विद्वानों से युक्त राज्य पालने और (इन्द्रस्येन्द्रियाय) परम ऐश्वर्ययुक्त राज्य और धन के पालन के लिये (असपत्नँ्सुवध्वम्) सम्मति करके सर्वत्र पक्षपातरहित पूर्ण विद्या विनययुक्त सब के मित्र सभापति राजा को सर्वाधीश मान के सब भूगोल शत्रुरहित करो।। और-

स्थिरा वः सन्त्वायुधा पराणुदे वीळू उत प्रतिष्कभे ।

युष्माकमस्तु तविषी पनीयसी मा मर्त्यस्य मायिनः ।।

– ऋ० मं० १। सू० ३९। मं० २।।

ईश्वर उपदेश करता है कि हे राजपुरुषो ! (वः) तुम्हारे (आयुधा) आग्नेयादि अस्त्र और शतघ्नी (तोप) भुशुण्डी (बन्दूक) धनुष बाण करवाल (तलवार) आदि शस्त्र शत्रुओं के (पराणुदे) पराजय करने (उत प्रतिष्कभे) और रोकने के लिए (वीळू) प्रशंसित और (स्थिरा) दृढ़ (सन्तु) हों (यु्ष्माकम्) और तुम्हारी (तविषी) सेना (पनीयसी) प्रशंसनीय (अस्तु) होवे कि जिस से तुम सदा विजयी होवो परन्तु (मा मर्त्यस्य मायिनः) जो निन्दित अन्यायरूप काम करता है उस के लिये पूर्व चीजें मत हों अर्थात् जब तक मनुष्य धार्मिक रहते हैं तभी तक राज्य बढ़ता रहता है और जब दुष्टाचारी होते हैं तब नष्ट भ्रष्ट हो जाता है। महाविद्वानों को विद्यासभाऽधिकारी; धार्मिक विद्वानों को धर्मसभाऽधिकारी, प्रशंसनीय धार्मिक पुरुषों को राजसभा के सभासद् और जो उन सब में सर्वोत्तम गुण, कर्म, स्वभावयुक्त महान् पुरुष हो उसको राजसभा का पतिरूप मान के सब प्रकार से उन्नति करें। तीनों सभाओं की सम्मति से राजनीति के उत्तम नियम और नियमों के आधीन सब लोग वर्तें, सब के हितकारक कामों में सम्मति करें। सर्वहित करने के लिये परतन्त्र और धर्मयुक्त कामों में अर्थात् जो-जो निज के काम हैं उन-उन में स्वतन्त्र रहैं। पुनः उस सभापति के गुण कैसे होने चाहिये-

इन्द्राऽनिलयमार्काणामग्नेश्च वरुणस्य च।

चन्द्रवित्तेशयोश्चैव मात्र निर्हृत्य शाश्वतीः।।१।।

तपत्यादित्यवच्चैष चक्षूंषि च मनांसि च।

न चैनं भुवि शक्नोति कश्चिदप्यभिवीक्षितुम्।।२।।

सोऽग्निर्भवति वायुश्च सोऽर्कः सोमः स धर्मराट्।

स कुबेरः स वरुणः स महेन्द्रः प्रभावतः।।३।।

वह सभेश राजा इन्द्र अर्थात् विद्युत् के समान शीघ्र ऐश्वर्यकर्त्ता, वायु के समान सब के प्राणवत् प्रिय और हृदय की बात जाननेहारा, यम पक्षपातरहित न्याया- धीश के समान वर्त्तनेवाला, सूर्य्य के समान न्याय, धर्म, विद्या का प्रकाशक अन्धकार अर्थात् अविद्या अन्याय का निरोधक; अग्नि के समान दुष्टों को भस्म करनेहारा, वरुण अर्थात् बांधनेवाले के सदृश दुष्टों को अनेक प्रकार से बांधनेवाला, चन्द्र के तुल्य श्रेष्ठ पुरुषों को आनन्ददाता, धनाध्यक्ष के समान कोशों का पूर्ण करने वाला सभापति होवे।।१।।

जो सूर्यवत् प्रतापी सब के बाहर और भीतर मनों को अपने तेज से तपानेहारा, जिस को पृथिवी में करड़ी दृष्टि से देखने को कोई भी समर्थ न हो।।२।।

और जो अपने प्रभाव से अग्नि, वायु, सूर्य्य, सोम, धर्मप्रकाशक, धनवर्द्धक, दुष्टों का बन्धनकर्त्ता, बड़े ऐश्वर्यवाला होवे, वही सभाध्यक्ष सभेश होने के योग्य होवे।।३।। सच्चा राजा कौन है-

ओ३म् आवदस्त्वं शकुने भद्रमा वद तूष्णीमासीनः सुमतिं चिकिद्धि नः | यदुत्पतन वदसि कर्करिर्यथा बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ||

व्याख्यान हे (आवदस्त्वं शकुने) शकुने= जगदीश्वर | आप (भद्रम्) कल्याण का भी कल्याण अर्थात् व्यवहारिक सुख के उपर मोक्ष सुख का निरन्तर उपदेश सभ जीवो को कीजिये |(तूष्णीमासीनः) हे अन्तर्यामिन् ! हमारे हृदय में स्थित रहो सदा मौन रह कर और सदा (सुमतिम्) सर्वोत्म ज्ञ्ान दिजीए | (चिकिद्धि नः) आपकी कृपा से हम अपने रहने लायक घर बनाकर और आपकी परमविद्या को हम प्राप्त हों | (यदुत्पतन्) स्वयं को उत्तम व्यवहार में पहुचाते हुये आपका (यथा) जिस प्रकार से (कर्करिर्वदसि) कर्तव्य कर्म धर्म को अत्यन्त पुर्षार्थ से करु, हम कभी अकर्तव्य दुष्ट कर्म नहीं करें ऐसा उपदेश हमें हमारें अन्तःकरण में दिजीए जिससे कि हम पुरुषार्‍्थ अर्थात यथायोग्य उद्यम को कभी ना छोड़े | जैसे (बृहद्वदेम विदथे) विज्ञानादि यज्ञ और धर्म युक्त युद्धो में (सुविरा) अत्यन्त शूरविर होयें (बृहत्) सबसे बड़े आप जो परम ब्रह्म है आप (वदेम) आपकी स्तुति, आपका उपदेश आपकी प्रार्थना और उपासना तथा आपका यह बड़ा अखण्ड सामराज्य और सब मनुष्यों का हित सर्वदा कहें सुने और आप के अनुग्रह से परमानन्द को भोगे|

जीवन मानव का मिला है महाभारत अभी जारी है अपने अन्दर द्वन्द चल रहा है आत्मा और शरिर

के मध्य बिमारी ने हमला कर दिया पराजय निश्चित समझ में आ रहा है सारी दवा बेकार सिद्ध हो रही है यह दर्द निरन्तर बढ़ रहा है| इससे बचने के उपाय बहुत बताये गये है उनमें से कुछ यहां दिये जारहे है

श्रम-यत्न और उद्योग से कार्य ही करने के लिए , रचा तुम्हें है हे मनुष्यों ! सद्धर्म करने के लिए | तुम वेद विद्या के पठन से ज्ञान का वर्धन करो , सत्य - धर्म और ब्रह्म के सद्‌गुणों का सेवन करो, अपने पदार्थो को तुम सदा धर्म से धारण करो| लोभ - व्यसन और तृष्णा का सही वारण करो| तुम धृष्ट और प्रगल्भ हो निर्दिन और निर्भय सदा , स्वधर्म के पालन में हे बन्धुओ ! जग में सदा |

मरने से यहा आज तक कोइ बच नही पाया है सभी जो पैदा हुये है वह सब मरने के लिए ही लाईन में खड़े हो कर अपनी बारी आने का इन्तजार कर रहे है, कोई समुह के साथ मरेगा और कोई अकेला तन्हाई में घुट-घुट कर| यहां हर किसी जीव कि यहीं प्रकृति है, कोइ आज मरेगा कोइ कल मरेगा, युंकहे कि यहां हर पल लोग मर रहे है| ईसलिये कविरा कहता चल भाई साधो यह मुर्दों का गांव है यहा अपना गुजारा संभव नहीं है|

जीवन बहुत हो गया आनन्द और प्रेम से जीवन के अन्तीम कुछ समय बचे है उन्हे गुजार लो यहां किसी भी तरह से रो कर या हंस कर जीस में तुम्हे रस मिले वहीं तुम्हारा यहां जीवन जीने का फन्डा है|

मनुष्य बहुत प्रोढ़ हो चुका है उसमे सब बचकानी जो अनादी काल से थी वह सब अब नष्ट हो रहा मानव चेतना नवीन हो चुकी है|

संसार में जीना है तो अभी में जो जीवो क्योंकी जीवन तो गुजर रहा है | यहां जो है पहले से काफ़ी अच्छा है मगर अभी सब कुछ नहीं पाया है धन चाहिये वेसुमार धन चाहिये यह कैसे संभव है क्योकि यहां जगत में सब कुछ झुठा है और सब धन के आश्रित है धन को प्राप्त करना कठिन और दुर्गम है धन को पाते-पाते बिल्कुल सड़ गल जाता है उस धन का उपयोग कभी नहीं कर पाता है सिवाय अपने लिये दो गज कफन के कुछ नहीं प्राप्त करता है, यह मानव बहुत मासुम और भोला है| यह हमेंशा और अधिक धन चाहिये इसके लिए नया रास्ता निकलना क्या ईसके लिये आसान कार्य है | फिर अचानक बुद्धि जागृत होती है और कहती है कि पहले शरिर में जो अज्ञान रुपी बिमारी ने अपना घर बना लिया है इसको कीसि तरह बाहर निकालो अन्यथा यह तुमसे तुम्हारी शरिर ही तुमसे छीन लेगी , जो तुम्हारे लिये इस संसार में सबसे बड़ा धन है, जैसा कि किसी ने कहा है शरिर खलु धर्म साधनम् | ऐसा नहीं किया तो फिर सब तुम्हारें सारे स्वप्न सब तुम्हारे अन्दर ही सड़ जाएगा |

क्लेश-कर्म विपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुष विशेष ईश्वरः|१.२४ योग दर्शन

मेरे परमात्मा आपकी इतनी अधिक कृपा जो मुझे लबा-लब सराबोर कर रहा इतनी मिली खुसी जो मेरे मन में नहीं समा रही है| आपका अहो भाग्य की आप मुझे इस योग्य समझा और मुझे यह परम आनन्द देने की परम अनुकम्पा की मैंने कसम खा लिया है | कि मै अब सब कुछ हंस कर सहुंगा अपने पाप के परिणाम को और अपने पुण्य के प्रसाद को और हर समय ईश्वर को धन्यवाद ही दुगां , कभी किसी प्रकार की सिकायत नहीं करुगा , क्योकि वह तो अन्तरयामी है और सब कुछ देख समझ रहा है उसे बताने समझाने की जरुरत ही नहीं है| स्वयं समझने कि जरुरत है क्योकि नादानी और मुर्खता स्वयं से हो रही है जिसका परिणाम स्वयं के लिये दुःख दाई हो रहा है| और दोस इसके लिये ईस्वर को देना जिसका मतलब है कि अपने गुनाहो पर पर्दा डालना और स्वयं के लिये और खतरनाक परिणामों की कामना करना है| यह तो बहुत कम है इससे भी कई गुना अधिक दर्दनाक जीवन है और लोग उसको भी मुस्कुराकर जीते है | अपने गम को ही जीवन के हसी का आनन्द प्रशन्ता का पल बना लो, क्योकि इनकी अपने जीवन में भरमार है| जो नही है स्वयं के नसिब में उनके इन्तजार में जो है उसको गवाना कहां की समझ दारी है| यह तो उसी प्रकार से है की सुखी रोटी नमक है उसको खाने के बजाय मेवा पकवान की चाह में भुखो दम तोड़ना, कहां कि कोइ बुद्धिमानी नहीं है| शरिर अन्दर से बुरी तरह से सड़ती जा रही है क्या इस सड़न को रोकना असंभव है अभी तक संभव नहीं हुआ है आशा किया जा सकता उसका भी आधार नहीं है परमानन्द की अनुभुतियो ं जि लो जो यह पल जीवन के है बिमार शरिर है आत्मा इसकी साक्षी है| हम यह समझे है कि बिमारी ठीक हो रही है लेकिन कुछ समय के बाद मै झुठा सिद्ध हो जाता हुं जब यह देखता हु कि बीमारी बढ़ती ही जा रही है|

यह बिमारी नहीं मेरी मृत्यु बन कर आई है और यह अब ठीक भी पुरी तरह से नहीं होगी यह मेरा जीवन लिला समाप्त करने के उद्देश्य से आइ है | मुझे इसका भान भी हो रहा है| मेरी आवाज उस सृष्टि रचाने वाले के पास नहीं पहुच रही है, नहीं मै तो कब से कह रहा हु कि उठा लो इस जगत से और इसके बदले वह मुझे सड़ने के लिये विवस कर रहा है | इस जगत में अभी मेरे लिये कुछ और समय सड़ना होगा इससे बचने का कोई उपाय भी तो नही है , कितना वेवस और लाचार है यह आदमी जिसे मै इतने समय से जानता हू उसको जान नहीं पाया है अर्थात सब कूछ ब्यर्थ और बकवास है|

मृत्यु ही आइ है तो कितनी खुसी की बात चलो इस सड़ियल जीवन से मुक्ति मिल जायेगा पुनः एक बार फिर यहां आ कर और सुन्दर तरिके से जीवन गुजारेगे अभी तो हमें जीना यहां नही आया, सायद अगली बार मुझे जीना आ जाये धन्यवाद और यह खुसी होने का समय है कि यह शरिर

मौसम बदलने में समय बिल्कुल नहीं लेती है कभी यह जीवन से सरा बोर कर देती है तो कभी मृत्यु से सराबोर कर देती है हम समझ भी नहीं पाते और मौसम बदल जाता है, अभिनंदन करता हुं जिसने मुझे इस आनन्द रस मृत्यु से सराबोर कर दिया है|

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दवैं तदु सुप्तस्य तथैवैति ।

दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ।।३।।

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः ।

यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ।।४।।

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु ।

यस्मान्नऽऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ।।५।।

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम् ।

येन यज्ञस्तायते सप्त होता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ।।६।।

यस्मिन्नचृ: साम यजूषि यस्मिन्प्रितष्ठिता रथनाभाविवाराः ।

यस्मिँश्चित्तँ्सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ।।७।।

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिनऽइव ।

हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ।।८।।

-यजु० अ० ३४। मं० १। २। ३। ४। ५। ६।।

हे अग्ने! अर्थात् प्रकाशस्वरूप परमेश्वर आप की कृपा से जिस बुद्धि की उपासना विद्वान्, ज्ञानी और योगी लोग करते हैं उसी बुद्धि से युक्त हम को इसी वर्त्तमान समय में आप बुद्धिमान् कीजिये।।१।।

आप प्रकाशस्वरूप हैं कृपा कर मुझ में भी प्रकाश स्थापन कीजिये। आप अनन्त पराक्रम युक्त हैं इसलिये मुझ में भी कृपाकटाक्ष से पूर्ण पराक्रम धरिये। आप अनन्त बलयुक्त हैं इसलिये मुझ में भी बल धारण कीजिये। आप अनन्त सामर्थ्ययुक्त हैं, मुझ को भी पूर्ण सामर्थ्य दीजिये। आप दुष्ट काम और दुष्टों पर क्रोधकारी हैं, मुझ को भी वैसा ही कीजिये। आप निन्दा, स्तुति और स्वअपराधियों का सहन करने वाले हैं, कृपा से मुझ को भी वैसा ही कीजिये।।२।।

हे दयानिधे! आप की कृपा से जो मेरा मन जागते में दूर-दूर जाता, दिव्यगुणयुक्त रहता है, और वही सोते हुए मेरा मन सुषुप्ति को प्राप्त होता वा स्वप्न में दूर-दूर जाने के समान व्यवहार करता सब प्रकाशकों का प्रकाशक, एक वह मेरा मन शिवसंकल्प अर्थात् अपने और दूसरे प्राणियों के अर्थ कल्याण का संकल्प

करनेहारा होवे। किसी की हानि करने की इच्छायुक्त कभी न होवे।।३।।

हे सर्वान्तर्यामी! जिससे कर्म करनेहारे धैर्ययुक्त विद्वान् लोग यज्ञ और युद्धादि में कर्म करते हैं जो अपूर्व सामर्थ्ययुक्त, पूजनीय और प्रजा के भीतर रहनेवाला है, वह मेरा मन धर्म करने की इच्छायुक्त होकर अधर्म को सर्वथा छोड़ देवे।।४।।

जो उत्कृष्ट ज्ञान और दूसरे को चितानेहारा निश्चयात्मकवृत्ति है और जो प्रजाओं में भीतर प्रकाशयुक्त और नाशरहित है जिसके विना कोई कुछ भी कर्म नहीं कर सकता, वह मेरा मन शुद्ध गुणों की इच्छा करके दुष्ट गुणों से पृथक् रहै।।५।।

हे जगदीश्वर! जिससे सब योगी लोग इन सब भूत, भविष्यत्, वर्त्तमान व्यवहारों को जानते, जो नाशरहित जीवात्मा को परमात्मा के साथ मिलके सब प्रकार त्रिकालज्ञ करता है, जिस में ज्ञान और क्रिया है, पांच ज्ञानेन्द्रिय बुद्धि और आत्मायुक्त रहता है, उस योगरूप यज्ञ को जिस से बढ़ाते हैं, वह मेरा मन योग विज्ञानयुक्त होकर अविद्यादि क्लेशों से पृथक् रहै।।६।।

हे परम विद्वन् परमेश्वर! आप की कृपा से मेरे मन में जैसे रथ के मध्य धुरा में आरा लगे रहते हैं वैसे ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और जिस में अथर्ववेद भी प्रतिष्ठित होता है और जिस में सर्वज्ञ सर्वव्यापक प्रजा का साक्षी चित्त चेतन विदित होता है वह मेरा मन अविद्या क ा अभाव कर विद्याप्रिय सदा रहै।।७।।

हे सर्वनियन्ता ईश्वर! जो मेरा मन रस्सी से घोड़ों के समान अथवा घोड़ों के नियन्ता सारथि के तुल्य मनुष्यों को अत्यन्त इधर-उधर डुलाता है, जो हृदय में प्रतिष्ठित गतिमान् और अत्यन्त वेग वाला है, वह सब इन्द्रियों को अधर्माचरण से रोक के धर्मपथ में सदा चलाया करे। ऐसी कृपा मुझ पर कीजिये।।८।।

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।

युयोध्यृस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमऽउक्तिं विधेम ।।१।।

-यजु० अ० ४०। मं० १६।।

हे सुख के दाता स्वप्रकाशस्वरूप सब को जाननेहारे परमात्मन्! आप हम को श्रेष्ठ मार्ग से सम्पूर्ण प्रज्ञानों को प्राप्त कराइये और जो हम में कुटिल पापाचरणरूप मार्ग है उस से पृथक् कीजिये। इसीलिये हम लोग नम्रतापूर्वक आपकी बहुत सी स्तुति करते हैं कि हम को पवित्र करें।।१।।

मा नो महान्तमुत मा नोऽअर्भकं मा न उक्षन्तमुत मा न उक्षितम् ।

मा नो वधीः पितरं मोत मातरं मा नः प्रियास्तन्वो रुद्र रीरिषः ।।१।। -यजु० अ० १६। मं० १५।।

हे रुद्र! (दुष्टों को पाप के दुःखस्वरूप फल को देके रुलाने वाले परमेश्वर) आप हमारे छोटे बड़े जन, गर्भ, माता, पिता और प्रिय बन्धुवर्ग तथा शरीरों का हनन करने के लिये प्रेरित मत कीजिये। ऐसे मार्ग से हम को चलाइये जिस से हम आपके दण्डनीय न हों।।१।।

असतो मा सद् गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्माऽमृतं गमयेति।।

-शतपथ ब्रा०।।

हे परमगुरो परमात्मन्! आप हम को असत् मार्ग से पृथक् कर सन्मार्ग में प्राप्त कीजिये। अविद्यान्धकार को छुड़ा के विद्यारूप सूर्य को प्राप्त कीजिये और मृत्यु रोग से पृथक् करके मोक्ष के आनन्दरूप अमृत को प्राप्त कीजिये। अर्थात् जिस-जिस दोष वा दुर्गुण से परमेश्वर और अपने को भी पृथक् मान के परमेश्वर की प्रार्थना की जाती है वह विधि निषेधमुख होने से सगुण, निर्गुण प्रार्थना। जो मनुष्य जिस बात की प्रार्थना करता है उस को वैसा ही वर्त्तमान करना चाहिये अर्थात् जैसे सर्वोत्तम बुद्धि की प्राप्ति के लिये परमेश्वर की प्रार्थना करे उस के लिये जितना अपने से प्रयत्न हो सके उतना किया करे। अर्थात् अपने पुरुषार्थ के उपरान्त प्रार्थना करनी योग्य है।

ऐसी प्रार्थना कभी न करनी चाहिये और न परमेश्वर उस को स्वीकार करता है कि जैसे हे परमेश्वर! आप मेरे शत्रुओं का नाश, मुझ को सब से बड़ा, मेरी ही प्रतिष्ठा और मेरे आधीन सब हो जायँ इत्यादि, क्योंकि जब दोनों शत्रु एक दूसरे के नाश के लिए प्रार्थना करें तो क्या परमेश्वर दोनों का नाश कर दे ? जो कोई कहै कि जिस का प्रेम अधिक उस की प्रार्थना सफल हो जावे । तब हम कह सकते हैं कि जिस का प्रेम न्यून हो उसके शत्रु का भी न्यून नाश होना चाहिये।

ऐसी मूर्खता की प्रार्थना करते-करते कोई ऐसी भी प्रार्थना करेगा-हे परमेश्वर! आप हम को रोटी बना कर खिलाइये, मकान में झाड़ू लगाइये, वस्त्र धो दीजिये और खेती बाड़ी भी कीजिये। इस प्रकार जो परमेश्वर के भरोसे आलसी होकर बैठे रहते हैं वे महामूर्ख हैं क्योंकि जो परमेश्वर की पुरुषार्थ करने की आज्ञा है उस को जो कोई तोड़ेगा वह सुख कभी न पावेगा। जैसे-

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतँ्समाः ।।२।। य० अ० ४० । मं० २

परमेश्वर आज्ञा देता है कि मनुष्य सौ वर्ष पर्यन्त अर्थात् जब तक जीवे तब तक कर्म करता हुआ जीने की इच्छा करे, आलसी कभी न हो। देखो! सृष्टि के बीच में जितने प्राणी हैं अथवा अप्राणी हैं, वे सब अपने-अपने कर्म और यत्न करते ही रहते हैं। जैसे पिपीलिका आदि सदा प्रयत्न करते, पृथिवी आदि सदा घूमते और वृक्ष आदि सदा बढ़ते घटते रहते हैं वैसे यह दृष्टान्त मनुष्यों को भी ग्रहण करना योग्य है। जैसे पुरुषार्थ करते हुए पुरुष का सहाय दूसरा भी करता है वैसे धर्म से पुरुषार्थी पुरुष का सहाय ईश्वर भी करता है। जैसे काम करने वाले पुरुष को भृत्य करते हैं और अन्य आलसी को नहीं। देखने की इच्छा करने और नेत्र वाले को दिखलाते हैं अन्धे को नहीं। इसी प्रकार परमेश्वर भी सब के उपकार करने की प्रार्थना में सहायक होता है हानिकारक कर्म में नहीं। जो कोई गुड़ मीठा है ऐसा कहता है उस को गुड़ प्राप्त वा उस को स्वाद प्राप्त कभी नहीं होता और जो यत्न करता है उस को शीघ्र वा विलम्ब से गुड़ मिल ही जाता है।

अब तीसरी उपासना-

समाधिनिर्धूतमलस्य चेतसो निवेशितस्यात्मनि यत्सुखं भवेत्।

न शक्यते वर्णयितुं गिरा तदा स्वयं तदन्तःकरणेन गृह्यते।।१।।

यह उपनिषत् का वचन है।

जिस पुरुष के समाधियोग से अविद्यादि मल नष्ट हो गये हैं, आत्मस्थ होकर परमात्मा में चित्त जिस ने लगाया है उस को जो परमात्मा के योग का सुख होता है वह वाणी से कहा नहीं जा सकता क्योंकि उस आनन्द को जीवात्मा अपने अन्तःकरण से ग्रहण करता है। उपासना शब्द का अर्थ समीपस्थ होना है। अष्टांग योग से परमात्मा के समीपस्थ होने और उस को सर्वव्यापी, सर्वान्तर्यामीरूप से प्रत्यक्ष के लिये जो-जो काम करना होता है वह-वह सब करना चाहिये। अर्थात्-

तत्रऽहिसासत्याऽस्तेयब्रह्मचर्याऽपरिग्रहा यमाः।।

इत्यादि सूत्र पातञ्जलयोगशास्त्र के हैं।

जो उपासना का आरम्भ करना चाहै उस के लिये यही आरम्भ है कि वह किसी से वैर न रक्खे, सर्वदा सब से प्रीति करे। सत्य बोले। मिथ्या कभी न बोले। चोरी न करे। सत्य व्यवहार करे। जितेन्द्रिय हो। लम्पट न हो और निरभिमानी हो। अभिमान कभी न करे। ये पांच प्रकार के यम मिल के उपासनायोग का प्रथम अंग है।

शौचसन्तोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः।। -योग सू०।।

राग द्वेष छोड़ भीतर और जलादि से बाहर पवित्र रहै। धर्म से पुरुषार्थ करने से लाभ में न प्रसन्नता और हानि में न अप्रसन्नता करे। प्रसन्न होकर आलस्य छोड़ सदा पुरुषार्थ किया करे। सदा दुःख सुखों का सहन और धर्म ही का अनुष्ठान करे, अधर्म का नहीं। सर्वदा सत्य शास्त्रें को पढ़े पढ़ावे। सत्पुरुषों का संग करे और 'ओ३म्' इस एक परमात्मा के नाम का अर्थ विचार करे नित्यप्रति जप किया करे। अपने आत्मा को परमेश्वर की आज्ञानुकूल समर्पित कर देवे। इन पांच प्रकार के नियमों को मिला के उपासनायोग का दूसरा अंग कहाता है। इसके आगे छः अंग योगशास्त्र वा ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका१ में देख लेवें। जब उपासना करना चाहैं तब एकान्त शुद्ध देश में जाकर, आसन लगा, प्राणायाम कर बाह्य विषयों से इन्द्रियों को रोक, मन को नाभिप्रदेश में वा हृदय, कण्ठ, नेत्र, शिखा अथवा पीठ के मध्य हाड़ में किसी स्थान पर स्थिर कर अपने आत्मा और परमात्मा का विवेचन करके परमात्मा में मग्न हो कर संयमी होवें। जब इन साधनों को करता है तब उस का आत्मा और अन्तःकरण पवित्र होकर सत्य से पूर्ण हो जाता है। नित्यप्रति ज्ञान विज्ञान बढ़ाकर मुक्ति तक पहुंच जाता है। जो आठ पहर में एक घड़ी भर भी इस प्रकार ध्यान करता है वह सदा उन्नति को प्राप्त हो जाता है। वहां सर्वज्ञादि गुणों के साथ परमेश्वर की उपासना करनी सगुण और द्वेष, रूप, रस, गन्ध, स्पर्शादि गुणों से पृथक् मान, अतिसूक्ष्म आत्मा के भीतर बाहर व्यापक परमेश्वर में दृढ़ स्थित हो जाना निर्गुणोपासना कहाती है।

१– ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के उपासना विषय में इनका वर्णन है।
इसका फल-जैसे शीत से आतुर पुरुष का अग्नि के पास जाने से शीत निवृत्त हो जाता है वैसे परमेश्वर के समीप प्राप्त होने से सब दोष दुःख छूट कर परमेश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव के सदृश जीवात्मा के गुण, कर्म, स्वभाव पवित्र हो जाते हैं, इसलिये परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना अवश्य करनी चाहिये। इस से इस का फल पृथक् होगा परन्तु आत्मा का बल इतना बढ़ेगा, कि पर्वत के समान दुःख प्राप्त होने पर भी न घबरायेगा और सब को सहन कर सकेगा। क्या यह छोटी बात है? और जो परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना नहीं करता वह कृतघ्न और महामूर्ख भी होता है। क्योंकि जिस परमात्मा ने इस जगत् के सब पदार्थ जीवों को सुख के लिये दे रक्खे हैं, उस का गुण भूल जाना, ईश्वर ही को न मानना, कृतघ्नता और मूर्खता है।

हमें स्वयं पर दया आ रही लेकिन मै कितना वेवस और लाचार हु , जो अपनी स्वयं की किसी प्रकार की सहायता नही कर पा रहा हुं| इस तरह हम सड़-सड़ कर दुःखों को सह सह कर मर जायेगे, और कुछ भी ना जान या ना ही कुछ समझ पाया , जीवन यु ही व्यर्थ में व्यतित कर दिया , अब पछताये क्या होत है जब चिड़या चुग गइ खेत, अब कुछ भी नही हो सकता है सारे रास्ते हमेंसा के

लिये बन्द हो चुके है | सिवाय एक रास्ता खुला है, वह मार्ग मृत्यु का है जो बहूत घुटन और रगणन भरा है इसी मार्ग पर चलो ईश्वर से प्रार्थना करो यह सफर जल्दी पुरा हो जाये यहीं तुम्हारा साधना पथ है| तुम इतने अधिक निकृष्ट हो की तुम्हारी प्रार्थना उस परमेश्वर तक नही पहुच पा रही है , परमेश्वर तुम स्वयं हो तुमसे अतिरिक्त कोइ नहीं अब शान्ति से इस लास को जितना जल्दी हो सके त्याग दो यह अपने वस में नही है इसे अपने वस में करो इस लिये ही यह थोड़ा समय मिल ा है|

मुझे मारने से पहले अन्धा लड़ला बहरा बना कर मारना चाहता है इसिलिये आंख , कान , पैर , दिल , फेफड़ा सभी बिमारियों का उपहार एक साथ दे कर हमें अनुग्रहीत कर रहा है |जिसके लिये मै लाखो धन्यवाद देना चाहता हु| मुझे इस लायक समझा| यह बिमारी हमारे साथ ऐसा मजाक कर रही है| पूरी तरह से हमें बरबाद करने के लिये आयी है| और मेरे आनन्द का कोई परावार नहीं अर्थात वह असिम से असीमित रुपसे लगातार निरन ्तर बढ़ता जा रहा है|

यह बहुत बड़ी खुसखवरी है कि आप एक महा मानव है आप के धैर्य कि परिक्षा लि जा रही है| और आप को संघर्षो के चक्रव्युह में डालकर उबाला जा रहा है, जिससे आप में निखार आ सके अन्यथा आप हमेंसा के लिये कायर और अपाहिज बिमार निर्बल असहाय बने रहेगे, और दूसरों से सहायता कि मांग और दूसरों के आश्रित हो कर जीवन जीते रहेंगें| और अपने जीवन उद्देशय से भी चुक जायेंगे , यह जीवन कि समस्या एक चुनौति है इसे स्विकार करो , इससे डरो मत साहस और हौसला पुर्वक सामना करो , इसका समाधान तल ास करों क्योंकि जितनी समस्या है उससे अधिक समाधान इस जीवन के पास इसके अन्दर धरोहर के रुपमें इसमें सुरक्षित करके इसके श्रष्टा ने रखा है| और निश्चय से विजय आपकी ही होगी जितना डरोगे उतना ही तुम्हे डरायेगी जीतना साहस धैर्य हौसला से हिम्मत से जम कर इसका मुकाबला करोगे, इसका एक समय में इसको तुम बिल्कुल नष्ट कर के ही दम लोगो, यही सत्य भी है| स्वयं पर भरोषा करो यह शरिर आपकी है इस बिमारी को धक्के मार कर बाहर निकालो अपने शरिर से वह कितना ही शक्तिशाली हो आपसे अधिकताकत वर कभी नहीं हो सकती है| आप इसको कर सकते है, आपके अतिरिक्त आपकी बिमारी का इलाज कोई और नही कर सकता है, आप अपनी संपूर्ण भौतिक दैविक आध्यात्मिक शक्तियों को एकत्रित करके अपने दुश्मन पर बार करो, एक शेर कि तरह से जैसे शेर अपने से भि बिशाल अपने शत्रु को अपने एक जोरदार शक्तिशाली वार से धराशाई करदेता है| उसी प्रकार आप भी उसको अपने शत्रु को एक ही बार में धराशाई कर दो, आप को यह शक्ति शेर से सिखनी चाहिये की वह कैसै अपने शत्रु को नस्ट कर देता है आप में इच्छा शक्ति है वह सब कुछ कर सकने की आपने एक महान संक्लप लिया है विश्वविद्यालय बनाने का उसको पूर्ण करना और यह कार्य आप के संकल्प बल पर ही खड़ा है, यह कार्य आप से ही सिद्ध होगा| उस महान अद्वितिय संकल्प के सामने तो यह कुछ भी

नही उसी मार्ग पर यह जीवन समाप्त हो जाये इससे महान दूसरा कोई कार्य आपके लिये क्या हो सकता है| कदापि नहीं आपसे देवताओं का राजा ईन्द्र ईर्श्या करता है क्योंकि आपका कार्य आपको उससे महान बना रहा है|

हमने कसम खाई है कि हम गम की बात नही करेगे यद्यपि आनन्द और मस्ती उल्लास ,उत्साहवर्धन, साहस , पराक्रम धैर्य सहनसिलता के साथ ऐसी बाते करेंगें जो जो मुर्दे के अन्दर भी जीवन संग्राम में खड़ा होने का जुनुन भर दे, जो जीन्दा वह तो संग्रामकेविजेता ही बन जायेगें| विपरित कठीन मुस्किल चुनौतियों में स्वयं को सम्हाल कर एक-एक कदम बढ़कर निराशा को आशा में बदल कर कैसे लोग जीते है| माना जीवन हमें बहुत ऐसे कठिन और दुर्गम चौराहे पर लाकर खड़ा कर देता जहां से निकलना हमें कठिन और अजेय समझ में आता है तो क्या हम हमेसा वही खड़े रहते है वहां से समय आने पर मौका जीन्दगी से छिनकर जरुर हम आगे बढ़ते हैं| यह जीवन कही रुकता नहीं हमेसा चलता रहता है, चाहे इसके सामने मुस्किल कठिनाइयों के कितन विशाल और गहरे अथाह सागर ही क्यों ना आ जाये इसका काम है चलते रहना मृत्यु सागर को पार कर के निरन्तर चलते रहना है| कभी रुकता नहीं भले ही यह शरिर जबाब दे दे , चलने फिरने से, तब भी यह चलता रहेगा और शरीर के बाद लौकिक संसार से परे अलौकिक पार लौकिक संसार अद्भुत अगम्य अदृश्य जगत के पारलौकिक जगत मे निरन्तर चलता रहता है| इसी लिये इसका नाम जीवन अर्थात जो कभी कही किसी भी स्थिती में ठहरता या रुकता यह स्वयं एक सफर है|

जीवन ज्ञान कर्म उपासना का समिश्रण या युं कह सकते है जीवन जान एक दहकती हुई ज्वाला है जो बुझना कभी नहीं जानती है इसका तेल यह ब्रह्माण्ड रुपी शरिर है जो इसके लिये कच्चे इधन के रुप में उपयोग आता है | यह बहुत महान और सर्व शक्तिमान असिम सभी प्रकार के आकार प्रकार रुप से भिन्न और अदृश्य इसमें ही सभी प्रकार की दिव्य और अदृश्य शक्तिया निहित है| यह जीसका दृढ़ संकल्प निश्चय कर लेता है उसे यह प्राप्त कर के ही दम लेता है| कभी हारता नही है हार कर भी यह जीत जाता है| और कभी-कभी जीत कर भी हार जाता है , यह बड़ा दयालु और चमत्कारी है सारी समस्या इसके आश्रय में सदा रहती है | जो इसके साथ रहता है उसमें भी इसकी सभी प्रकार की दिव्य और लौकिक अतुलनिय अजेय शक्तिया स्वतः एकाकार हो जाती है इसके लिये यह सभी की योग्यता की परिक्षा लेता |

माना यह जीवन में अज्ञान कि बिमारी बहुत खतरनाक है, जो लाईलाज समझ में आ रही है| कैन्सर हो चुकी है जिसका इलाज केवल रुपया है , थोडा़ नही बहुत रुपया चाहिये पूर्ण कोइ गारन्टी नहीं है समाधान रुपया मेंसमझ में आ रहा है| यह बहुत दुख दायी है ईसका आपरेसन सरकारी अस्पताल रुपी संसार में हो सकता है| यह बहुत भयानक है परमात्मा तो आप में है वह ना अमिर है ना गरिब

ही है | नही दोनो में समान है वह जीवन का मुख्य श्रोत है| इलाज करवाते-करवाते जब पथिक थक गया है, तब भी यह बिमारी ठीक होने वाली नही है यह इस शरीर को नष्ट कर देगी, धिरे-धिरे रोज हम मर रहे है हम बहुत जल्दी ही मुक्त हो जायेगें इस सड़ती गलती दर्द भरी जीन्दगी से अब तुम्हे ब्रह्मा भी नहीं बचा है, क्योंकि तुम स्वयं ब्रह्म हो, तुम्हारी क्या अवकात है तु किड़े से अधिक नहीं है तुमने बहुत अधिक फंसा दिया है स्वयं को अब इस बिमारी से मुक्त होना मुस्किल ही नहीं असंभव है| लेकिन तुम्हे अभी बहुत तड़पना है क्योंकि तड़पने का भी अपना अद्भुत रहस्यमई आनन्द है जो जीवन की पूर्णता का महत्त्वपूर्ण हिस्सा है| ईससे किसी महां पुरुष ने स्वयं को नहीं बचाया है| यही ईश्वर की इच्छा है, साथ में मेरी भी यही इच्छा है| क्योंकी मेरा मुझमें कुछ नहीं जो कुछ है सो तेरा और तेरा तुझको अर्पण क्या लागे है मेरा |राजी है हम उसी में जिसमें तेरी रजा है|

मेरा कर्म इतना घटिया रहा है जिसका परिणाम हमारें जीवन को मिल रहा है| यह दर्द के रुप में जो इतना भयानक है जिसको बर्दास्त करना हमारे लिये असंभव हो रहा है| यही मृत्यु जैसी पिड़ा हो रही है| ऐसा मेरे साथ क्यो हो रहा है, ऐसा ही सब के साथ हो रहा है| है वो कौन सा ईन्सान जिसने दुःख नहीं झेला, चल अकेला चल अकेला तेरा मेला पिछे छुटा राही चल अकेला, यहां दुखड़े सहने के खातिर तुमको बुलाते है| तुम इनकी मायाबी अन्ध परम्पराओं को सच मान कर यहां आया और यहां कि माया जाल में स्वयं को बुरी तरह से फंसा बींध लिया है जो तुम्हे सुकून से ना ही जीने देती है ना हि मरने देती है| यह तुम्हें हमेशा धिक्कारती है| और चिल्ला -चिल्ला कर उद्घोषणा करती है कि तुम एक झुठा आदमी हो| अपने कर्मों का फल परिणाम तो तुम्हें यही भोगना पड़ेगा | अभी तुम्हारा बुरा समय चल रहा है, अच्छा समय के इन्तजार में अच्छी मृत्यु आती है, वही जीवन का सबसे खुबसुरत समय है | जो जीवन के सभी दर्द, गम, कष्ट क्लेशों से हमेशा के लिये जुदा कर देती है| जो भी अभी हो तुम चिन्ता मत करो मौत ही है , या उससे भी कुछ अधिक जीवन का दुःख दाई ख्वाब है जो कुछ गमगिन दर्द कि सहनाई है| या कुछ और यह असहनिय अथाह दर्द का भयावह भव सागर कि बेदना रुपी लहरों की हल-चल है|

ईश्वर बहुत क्रुर और हिन्सक है , वह हमारी कामीयाबी से जलता है इसलिए वह हमें तड़पा-तड़पा कर मारता है |और वह भी झुठ को बढ़ावा देता सत्य को छुपाता है पर्दे में ढक कर रखता है| इस बिमारी को पूर्णतः समाप्त करना है यह निरन्तर बढ़ ही रही है| अपनी दृढ़ इच्छा इसे समाप्त कर सक्ते है| ऐसा करो कि यह समाप्त हो यह बीमारी अनगिनत सालों से इस मृत्युलोक में ब्याप्त है, आज इसने अपना शिकार मुझे बनाया है, पहले किसी और को बनाया था| आगे और किसी और को बनायेगी| यही इस जगत कि रिती है| लाखों सालों से अधिक समय से ऐसा यहां कल्पना किया जा रहा है कि यह बिमारी इस जगत से बील्कुल ठीक हो चुकी है| ऐसे आदमी को मै जानता हु जो

कहते है सारी बिमारियों का ईलाज यहां होता है| लेकिन यहां मेरी बीमारी क्यों नही ठीक हो रही है , क्योंकि लोग यहां जो बिमार है उनको ऐसा भ्रम कराया जाता है कि वह बिल्कुल ठीक है, लेकिन मुझे यहां अपने बारे में यह भ्रम नहीं कराया जा सका कि मै ठिक हुं इसके बदले मेरे जीवन की मेरी मेहनत की गाढ़ी कमाई को मुझको उल्लु बना कर मुझसे लुट रहे हैं| यहां तो मेरे लिए तकलिफ सिर्फ बढ़ रही है | और यहां सारे हरामी लोग है जिनपर भरोसा करना खतरे से खाली नही है| यहां सब को मार ही डालेगे, यहां यहीं कार्य अनादि काल से चल रहा है| या तुम्हे स्विकारने से पूर्ण रुप से इनकार कर देगे यही यहां पर अब तक किया गया है आगे भी यही होगा| तुम स्वयं को जैसे भि हो स्विकार लो यही ब्रह्माण्डिय सत्य है जिसका अनुभव मैने किया यहां पर रह कर| साधारण कोटि मानव जैसे साधक ईश्वर से कहते है| कि मुझे रास्ता बता , मेरे इश्वर मुझे इस बिमारी का इलाज बता, यह बीमारी सुखेगी कैसे ? मैं इसका सर्व नाश करु अन्यथा यह मेरा सर्वनाश करने में जरा भी संकोच नही करेगी| ना ही किसी प्रकार की लापरवाही कर रही है , सारी लापरवाही मेरी तरफ से ही हो रही है| इस बिमारी का इलाज सिर्फ मनुष्यों के पास हि नहीं है स्वयं ईश्वर भी इसी बिमारी से ग्रस्त है, ऐसा मैने अपने अनुभव से जाना है क्योंकी मै स्वयं ईश्वर जैसा ही हुं|

डा. मार्क एक प्रसिद्ध कैंसर स्पैश्लिस्ट हैं, एक बार किसी सम्मेलन में भाग लेने लिए किसी दूर के शहर जा रहे थे। वहां उनको उनकी नई मैडिकल रिसर्च के महान कार्य के लिए पुरुस्कृत किया जाना था। वे बड़े उत्साहित थे व जल्दी से जल्दी वहां पहुंचना चाहते थे। उन्होंने इस शोध के लिए बहुत मेहनत की थी। बड़ा उतावलापन था, उनका उस पुरुस्कार को पाने के लिए।

उड़ने के लगभग दो घण्टे बाद उनके जहाज़ में तकनीकी खराबी आ गई, जिसके कारण उनके हवाई जहाज को आपातकालीन लैंडिंग करनी पड़ी। डा. मार्क को लगा कि वे अपने सम्मेलन में सही समय पर नहीं पहुंच पाएंगे, इसलिए उन्होंने स्थानीय कर्मचारियों से रास्ता पता किया और एक टैक्सी कर ली, सम्मेलन वाले शहर जाने के लिए। उनको पता था की अगली फ्लाईट 10 घण्टे बाद है। टैक्सी तो मिली लेकिन ड्राइवर के बिना इसलिए उन्होंने खुद ही टैक्सी चलाने का निर्णय लिया।

जैसे ही उन्होंने यात्रा शुरु की कुछ देर बाद बहुत तेज, आंधी-तूफान शुरु हो गया। रास्ता लगभग दिखना बंद सा हो गया। इस आपा-धापी में वे गलत रास्ते की ओर मुड़ गए। लगभग दो घंटे भटकने के बाद उनको समझ आ गया कि वे रास्ता भटक गए हैं। थक तो वे गए ही थे, भूख भी उन्हें बहुत ज़ोर से लग गई थी। उस सुनसान सड़क पर भोजन की तलाश में वे गाड़ी इधर-उधर चलाने लगे। कुछ दूरी पर उनको एक झोंपड़ी दिखी।

झोंपड़ी के बिल्कुल नजदीक उन्होंने अपनी गाड़ी रोकी। परेशान से होकर गाड़ी से उतरे और उस

छोटे से घर का दरवाज़ा खटखटाया। एक स्त्री ने दरवाज़ा खोला। डा. मार्क ने उन्हें अपनी स्थिति बताई और एक फोन करने की इजाजत मांगी। उस स्त्री ने बताया कि उसके यहां फोन नहीं है। फिर भी उसने उनसे कहा कि आप अंदर आइए और चाय पीजिए। मौसम थोड़ा ठीक हो जाने पर, आगे चले जाना।

भूखे, भीगे और थके हुए डाक्टर ने तुरंत हामी भर दी। उस औरत ने उन्हें बिठाया, बड़े सम्मान के साथ चाय दी व कुछ खाने को दिया। साथ ही उसने कहा, "आइए, खाने से पहले भगवान से प्रार्थना करें और उनका धन्यवाद कर दें।"

डाक्टर उस स्त्री की बात सुन कर मुस्कुरा दिए और बोले,"मैं इन बातों पर विश्वास नहीं करता। मैं मेहनत पर विश्वास करता हूं। आप अपनी प्रार्थना कर लें।"

टेबल से चाय की चुस्कियां लेते हुए डाक्टर उस स्त्री को देखने लगे जो अपने छोटे से बच्चे के साथ प्रार्थना कर रही थी। उसने कई प्रकार की प्रार्थनाएं की। डाक्टर मार्क को लगा कि हो न हो, इस स्त्री को कुछ समस्या है। जैसे ही वह औरत अपने पूजा के स्थान से उठी, तो डाक्टर ने पूछा,"आपको भगवान से क्या चाहिए? क्या आपको लगता है कि भगवान आपकी प्रार्थनाएं सुनेंगे?"

उस औरत ने धीमे से उदासी भरी मुस्कुराहट बिखेरते हुए कहा,"ये मेरा लड़का है और इसको एक रोग है जिसका इलाज डाक्टर मार्क नामक व्यक्ति के पास है परंतु मेरे पास इतने पैसे नहीं हैं कि मैं उन तक, उनके शहर जा सकूं क्योंकि वे दूर किसी शहर में रहते हैं। यह सच है की कि भगवान ने अभी तक मेरी किसी प्रार्थना का जवाब नहीं दिया किंतु मुझे विश्वास है कि भगवान एक न एक दिन कोई रास्ता बना ही देंगे। वे मेरा विश्वास टूटने नहीं देंगे। वे अवश्य ही मेरे बच्चे का इलाज डा. मार्क से करवा कर इसे स्वस्थ कर देंगे।"

डाक्टर मार्क तो सन्न रह गए। वे कुछ पल बोल ही नहीं पाए। आंखों में आंसू लिए धीरे से बोले," भगवान बहुत महान हैं।"

(उन्हें सारा घटनाक्रम याद आने लगा। कैसे उन्हें सम्मेलन में जाना था। कैसे उनके जहाज को इस अंजान शहर में आपातकालीन लैंडिंग करनी पड़ी। कैसे टैक्सी के लिए ड्राइवर नहीं मिला और वे तूफान की वजह से रास्ता भटक गए और यहां आ गए।)

वे समझ गए कि यह सब इसलिए नहीं हुआ कि भगवान को केवल इस औरत की प्रार्थना का उत्तर देना था बल्कि भगवान उन्हें भी एक मौका देना चाहते थे कि वे भौतिक जीवन में धन कमाने, प्रतिष्ठा कमाने, इत्यादि से ऊपर उठें और असहाय लोगों की सहायता करें। वे समझ गए की भगवान

चाहते हैं कि मैं उन लोगों का इलाज करूं जिनके पास धन तो नहीं है किंतु जिन्हें भगवान पर विश्वास हैआ।

जीवन क्या है ? एक दु:खद स्वप्न दर्द और पिड़ा का अनकहा यात्रा वृतान्त या उससे कुछ अधिक जैसा कि आर्यन स्वयं कहता है| पहले उसके जीवन के उद्गार को समझते है पुनः उसकी अपनि जीवन कथा जो एक रहस्य कि तरफ ले कर हम सब को बढ़ रही है उसमें गोते लगायेंगे किसी बहुमूल्य मोति की लालसा में|

आर्यन नाम मेरा है | मैने जाना जीवन को बहुत करिब जितना करिब से मैं अपनी आत्मा को जानता हुं, जीवन ने मुझे हमेंशा मृत्यु के खुंखार और निर्दयी बेदर्द जबड़ों के मध्य में फेका | और वह मुझे पिसती रही जैसे चक्कि गेहुं को पिस कर आटा बना देती है | उसी प्रकार से उसने मुझे पिस कर मेरा कचुमर निकालती रही | मै सब कुछ सह कर उसके गुणगान गीत स्वागत और उसके अभिनन्दन में गाता रहा, ईस आशा में कि वह मुझ पर कभी अपनी अनुकम्पा की बारिष अवश्य करेगी, लेकिन उसने मुझपर बारिष ना करके मेरे उपर बादलों को फोड़ दिया, जिससे मै बिल्कुल तर-बतर हो गया, मैने सोचा कि अब वह आ ही जायेगी लेकिन वह नहीं आई, उसने कहा कि वह एक दिन अवश्य आ कर मुझे पूर्ण रुप से मुक्त कर देगी, और अभी तुम मेरे ईन्तजार का क्या मजा है उसको अनुभव करों, तब से मै उसका अपनी पलके बिछाये ईन्तजार कर रहा हुं , कि वह आ कर मुझे आनन्दित करें और मेरे सर पर से मेरे जीवन का सारा भार उतार दे , मगर वह बेरहम मुझे हर बार चकमा देती रही , और रोज आने का वादा करती रही , कि मै आउगी लेकिन वह अभी तक आई नहीं मुझे बार-बार केवल धोखा दिया, और मुझसे हमेंसा छल कपट करती रहीं और इस तरह से मै धिरे-धिरे कमजोर होता गया | मेरी शरिर भी कई भयानक विमारियों का शिकार हो गई जिसमें से कुछ ला ईलाज है , जो हमेशा नये-नये दर्द पिड़ा का निरन्तर सृजन करती रहती है, मै मृत्यु को हाथ पैर जोड़ कर गिड़-गिड़ा कर उसे बुलाता रहा , कि तुम मुझ पर तरस खा कर मुझे अपने आगोस में ले कर हमेंशा हमेंशा के लिये मुझे चिरनिद्रा में सुला दो, मै बहुत थक कर जीवन दु:ख और क्लेश रुपी दर्द के असहनिय पिड़ाओं को सह-सह कर तार-तार हो कर बिल्कुल जर्जर हो चुका हुं अब तो आ जाओ , लेकिन वह केवल अपने बदनाम दुतों को हमें डराने भय भित करने के लिये , वह मृत्यु के सारे दुत मुझे तिल-तिल कर मार रहें है, मुझे हर प्रकार कि बिमारियों ने आ घेरा है, हमेशा कि भांती दुत भेज कर स्वयं हमसे दुर ही खड़ी हो कर हमारा खिल्ली मजाक उड़ाती रही वह हमारा हर बार तिरस्कार करती रही, तब मैने भि दृढ़ निश्चय के साथ संकल्प किया की मै अब तुम्हारे बिना ही जीवन संग्राम को आखिरी सांस तक | यह उसी संग्राम कि व्यथा का बिचित्र वर्णन है, जिसकी अभी कल्पना मात्र यहां होरी है सत्य इससे पार है| जो शब्दातित है उसको शब्दों के माध्यम से केवल उन

कुछ दिव्य और अनछुये कोमल अहसासों की तरफ संकेत मात्र है|

मैने स्वयं का सर्वनाश करदिया है, मै यही सोचता रहा कि आगे चल कर सब ठीक हो जायेगा लेकिन मै ईस महान भुल का शिकार हो चुका था| मै एक ऐसे मार्ग का यात्री बना जो रास्ता बहुत अधिक खतरनाक अथाह और बिहण भयंकर जंगल से होकर जाता है जहां पर जानवरों और नरभक्षी खूंखार आदमखोर जीवों जमावड़ा भरा पड़ा है, यही नही इससे भी अधिक यह मार्ग बहुत दल-दला है जिसमें लोग जितना आगे बढ़ते है और अधिक दल-दल बढ़ता ही जाता है| ईसलिये यह दल-दल लोगों के लिये समाधि स्थल बन गया है| यहां से अब तक कोई बच कर नहीं आया है|

मै सत्य कहता हुं अपने अनुभवों के आधार पर कि यह दुनिया सच्चे और वास्तविक मनुष्यों के रहने योग्य नहीं है | यहां पर सिर्फ कुरुप और जानवर किस्म के लोग ही सुकुन का जीवन जीते है| सही और निर्दोष प्रकृति के लोग यहां ईस जालिम और निर्दई बेरहम दुनिया में सताये जाते है| यहीं नही उनके साथ हर कदम पर धोखा और छल-कपट अपने पराये के साथ उनकी स्वयं कि शरिर भी करती है| लाख मुद्दई चाहे क्या होता है वही होता है जो मन्जुरे खुदा होता है| खुदा कोभी यहां मरना पड़ता है वास्तव में वह खुदा ही होता है जो यहां पर आकर ईस मृत्युलोक में ईतने असहनिय अथाह पिड़ा को सह कर दूसरों के लिये प्रेरणा का श्रोत और चिता रुपी जगत में बैठ कर दुसरों के लिये मखमली ज्ञान विज्ञान ब्रह्मज्ञान का उपदेश करता है| वास्तव में मैने जान लिया है कि मै परमात्मा हुं इसलिये यह जड़ प्रकृति मेरी शत्रु बन गई है| अब मेरी मृत्यु नहीं होगी मै अपनी ईच्छा से अपनी शरीर का त्याग करुगा, अब मैने स्वयं पर अपना पूर्ण अधिकार कर लिया है| मैने संसार के सत्य और अपना साक्षात्कार कर लिया है| जिस मार्ग से मै हो कर यहां तक पहुंचा हुं वह मार्ग बहुत दुर्गम और जटिल कई प्रकार के अंधेरों से आच्छादित है| जिस मार्ग पर कभी कोई सामान्य व्यक्ति भुल कर भी यात्रा नहीं करता है| ईस मार्ग पर तो कोई सुरमा या बिड़ला ही चलने कि हिम्‌मत जुटा पाता है| कुछ लोग हिम्मत किसी प्रकार से जुटा लेते है लेकिन कुछ कदम चलने के बाद जब मार्ग कि दुस्वारियां बढ़ने लगती है, | तब सभी अपना सफर रास्तें मे छोड़ कर रास्ता बदलने लिये विवश हो कर रुक जाते है|

आर्यन जो अपने उम्र से कहीं अधिक व्यक्तियों को अपने जीवन से सम्बन्धित प्रश्नों के बौछार से व्यथित कर देता है| जो स्वयं दुःख को बचपन से अत्यधिक मात्रा में सहते-सहते अपने आप को काफी ताकतवर बना लिया है| और दूसरें सामान्य लोगों से कहीं अधिक दुःखों पिड़ाओ और मानशिक क्लेशों को बड़े आसानी से सह लेता है, जिसको दूसरें उसके उम्र के बालक-बालिकायें दातों तले उंगलिया मात्र सुनकर ही दबा लेते है, जब वह अपनी आप बिती लोगों को सुनाता है, लोग उसपर आश्चर्य करते है| जो एक असाधारण अजिबों गरिब परिस्थिति का शिकार है | फिर भी

वह औरों कितुलना में काफि स्वस्थ और हिष्ट-पुष्ट काफी मेहनती किस्म का होनहार बालक है , जो सभी का मनोरन्जन का बहुत ख्याल रखता है, उसे कितने किस्से कहानी मुहं जबानी याद है| उसके विचार अत्यधिक जोशिले और क्रान्तिकारी बिद्रोही किस्म के है, बृद्ध औरते तो जो उसको सुनती तो कहती तु कहां कलयुग में पैदा हो गया तुझे तो सतयुगमें होना चाहिये था| जो परिचित पुरुष थे, वह कहते कि तु यहां कहा गृहस्तों के बिच में रहता है, तुम्हें तो हिमालय कि कन्दराओं मे रहना चाहियें | वही बर्फ खाओ और बर्फ ही पियो| क्योंकी परिवार बड़ा था गांव में बहुत लोगों में जान पहचान के साथ पुराने समय से काफि सम्मानजनक स्थिति आर्यन पुस्तैनि धरोहर के रुप में मुप्त में मिली थी जिसका वह अपनी सुबिधा अनुसार यशवन्त कि इच्छाओं के विपरित सदुपयोग निरन्त समय-समय पर करता है|

ऋचो अक्षरे परमे व्योमन्यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः ।

यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति य इत्तद्विदुस्त इमे समासते ।।१।।

– ऋ० मं० १। सू० १६४। मं० ३९।।

ईशा वास्य मिदँ् सर्वं यत्किञ्च जगत्याञ्जगत् ।

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ।।२।।

-यजु० अ० ४०। मं० १।।

अ हम्भुवं वसुनः पूर्व्यस्पतिरहं धनानि सं जयामि शश्वतः ।

मां हवन्ते पितरं न जन्तवोऽहं दाशुषे विभजामि भोजनम् ।।३।।

– ऋ० मं० १०। सू० ४८। मं० १।।

अ हमिन्द्रो न परा जिग्य इद्धनं न मृत्यवेऽवतस्थे कदाचन ।

सोममिन्मा सुन्वन्तो याचता वसु न मे पूरवः सख्ये रिषाथन ।।४।।

– ऋ० मं० १०। सू० ४८। मं० ५।।

अ हं दां गृणते पूर्व्यं वस्वहं ब्रह्म कृणवं मह्यं वर्धनम् ।

अ हं भुवं यजमानस्य चोदिताऽयज्वनः साक्षि विश्वस्मिन्भरे ।।५।।

– ऋ० मं० १०। सू० ४९। मं० १।।

(ऋचो अक्षरे) इस मन्त्र का अर्थ ब्रह्मचर्य्याश्रम की शिक्षा में लिख चुके हैं अर्थात् जो सब दिव्य गुण, कर्म, स्वभाव, विद्यायुक्त और जिस में पृथिवी सूर्य्यादि लिोक स्थित हैं और जो आकाश के समान व्यापक सब देवों का देव परमेश्वर है उस को जो मनुष्य न जानते न मानते और उस का ध्यान नहीं करते वे नास्तिक मन्दमति सदा दुःखसागर में डूबे ही रहते हैं। इसलिये सर्वदा उसी को जानकर सब मनुष्य सुखी होते हैं।

(प्रश्न) वेद में ईश्वर अनेक हैं इस बात को तुम मानते हो वा नहीं?

(उत्तर) नहीं मानते क्योंकि चारों वेदों में ऐसा कहीं नहीं लिखा जिस से अनेक ईश्वर सिद्ध हों। किन्तु यह तो लिखा है कि ईश्वर एक है।

(प्रश्न) वेदों में जो अनेक देवता लिखे हैं उस का क्या अभिप्राय है?

(उत्तर) देवता दिव्य गुणों से युक्त होने के कारण कहाते हैं जैसी कि पिृथिवी, परन्तु इस को कहीं ईश्वर वा उपासनीय नहीं माना है। देखो ! इसी मन्त्र में कि 'जिस में सब देवता स्थित हैं, वह जानने और उपासना करने योग्य ईश्वर है।' यह उनकी भूल है जो देवता शब्द से ईश्वर का ग्रहण करते हैं। परमेश्वर देवों का देव होने से महादेव इसीलिये कहाता है कि वही सब जगत् की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलयकर्त्ता, न्यायाधीश, अधिष्ठाता है।

जो 'त्रयसिंत्रशतिंत्रशता०' इत्यादि वेदों में प्रमाण हैं इस की व्याख्या शतपथ में की है कि तेंतीस देव अर्थात् पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, चन्द्रमा, सूर्य्य और नक्षत्र सब सृष्टि के निवास स्थान होने से आठ वसु। प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, नाग, कूर्म्म, क◌ृकल, देवदत्त, धनञ्जय और जीवात्मा ये ग्यारह रुद्र इसलिये कहाते हैं कि जब शरीर को छोड़ते हैं तब रोदन कराने वाले होते हैं। संवत्सर के बारह महीने बारह आदित्य इसलिये हैं कि ये सब की आयु को लेते जाते हैं।

बिजली का नाम इन्द्र इस हेतु से है कि परम ऐश्वर्य का हेतु है। यज्ञ को प्रजापति कहने का कारण यह है कि जिस से वायु वृष्टि जल ओषधी की शुद्धि, विद्वानों का सत्कार और नाना प्रकार की शिल्पविद्या से प्रजा का पालन होता है। ये तेंतीस पूर्वोक्त गुणों के योग से देव कह◌ाते हैं। इन का स्वामी और सब से बड़ा होने से परमात्मा चौंतीसवां उपास्यदेव शतपथ के चौदहवें काण्ड में स्पष्ट लिखा है। इसी प्रकार अन्यत्र भी लिखा है। जो ये इन शास्त्रें को देखते तो वेदों में अनेक ईश्वर माननेरूप भ्रमजाल में गिरकर क्यों बहकते? ।।१।।

हे मनुष्य! जो कुछ इस संसार में जगत् है उस सब में व्याप्त होकर जो नियन्ता है वह ईश्वर कहाता

है। उस से डर कर तू अन्याय से किसी के धन की आकांक्षा मत कर। उस अन्याय के त्याग और न्यायाचरणरूप धर्म से अपने आत्मा से आनन्द को भोग।।२।।

ईश्वर सब को उपदेश करता है कि हे मनुष्यो! मैं ईश्वर सब के पूर्व विद्यमान सब जगत् का पति हूं। मैं सनातन जगत्कारण और सब धनों का विजय करनेवाला और दाता हूं। मुझ ही को सब जीव जैसे पिता को सन्तान पुकारते हैं वैसे पुकारें। मैं सब को सुख देनेहारे जगत् के लिये नाना प्रकार के भोजनों का विभाग पालन के लिये करता हूं।।३।।

मैं परमैश्वर्य्यवान् सूर्य के सदृश सब जगत् का प्रकाशक हूं। कभी पराजय को प्राप्त नहीं होता और न कभी मृत्यु को प्राप्त होता हूं। मैं ही जगत् रूप धन का निर्माता हूं। सब जगत् की उत्पत्ति करने वाले मुझ ही को जानो। हे जीवो ! ऐश्वर्य प्राप्ति के यत्न करते हुए तुम लोग विज्ञानादि धन को मुझ से मांगो और तुम लोग मेरी मित्रता से अलग मत होओ।।४।।

हे मनुष्यो! मैं सत्यभाषणरूप स्तुति करनेवाले मनुष्य को सनातन ज्ञानादि धन को देता हूं। मैं ब्रह्म अर्थात् वेद का प्रकाश करनेहारा और मुझ को वह वेद यथावत् कहता उस से सब के ज्ञान को मैं बढ़ाता; मैं सत्पुरुष का प्रेरक यज्ञ करनेहारे को फलप्रदाता और इस विश्व में जो कुछ है उस सब कार्य्य का बनाने और धारण करनेवाला हूं। इसलिये तुम लोग मुझ को छोड़ किसी दूसरे को मेरे स्थान में मत पूजो, मत मानो और मत जानो।।५।।

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ।

स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ।।

यह यजुर्वेद का मन्त्र है-

हे मनुष्यो! जो सृष्टि के पूर्व सब सूर्य्यादि तेजवाले लोकों का उत्पत्ति स्थान, आधार और जो कुछ उत्पन्न हुआ था, है और होगा उसका स्वामी था, है और होगा। वह पृथिवी से लेके सूर्य्यलोक पर्यन्त सृष्टि को बना के धारण कर रहा है। उस सुखस्वरूप परमात्मा ही की भक्ति जैसे हम करें वैसे तुम लोग भी करो।

जैसा कि हमने जाना कि आर्यन अपने पिता के अतिशय अतिक्रमण पुर्वक जो अत्याचारों से बचने के लिये, अचानक बिना किसी को सुचित किये घर फरार हो जाता है, अब तक यह उसके जिवन का अभिन्न हिस्सा बन चुका है| एक बार फिर आर्यन ने अपना यातना गृह जो किसी कारा गृह से किसी

प्रकार कम नहीं है| उसको छोड़ कर बाहर रहने का निर्णय करता है, और दिसम्बर शर्दि कि एक शाम को अपने घर से निकल पड़ता है| काफि समय तक युंहि अपने धुन में मस्त दिन दुनिया से बिल्कुल बेखबर हो कर शहर कि ईस गली से उस गली में घुमते हुये रेल्वे स्टेशन पर पहुंचता है, और वहां से अपने मामा के घर जाने के लिये उस दिशा कि रेलगाड़ी पर बेदाउट बैठ जाता है| रेलगाड़ी रात के दश बजे के करिब उस स्टेशन पर पहुंचति है, वहां पर एक लुटेरा जो पहले से किसी सवारी को लुटने का इन्तजार कर था, उस समय उस स्टेशन पर बहुत कम सवारियां उतरी थी| जिसमें से एक आर्यन था| उसमय आर्यन की उम्र यही कोई १२ एक साल होगी| उस समय जो लुटेरा रेल्वे स्टेशन पर रेल में चढ़ने वाला था उसने जब आर्यन को बोगी से उतरते देखा जो बिल्कुल अकेला था, तो लुटेरें ने रेलगाड़ी में चढ़ने का विचार बदल कर निचे खड़ा हो कर रेलगाड़ी को जाने दिया, और स्वयं आर्यन को पकड़ कर स्टेशन के बाहर उसको धमकाकर अपने हाथ में रिवाल्बर टार्च कि रोशनी में दिखा कर कहा बिना आवाज के मेरे साथ चलते रहों| आर्यन पहली बार बाहर किसी ऐसे आताताई के सम्पर्क में आया था, वह बहुतभयभित हो गया लेकिन हिम्त नहीं हारी उसने देखा कि सामने कोई एक व्यक्ती कम्बल ओढ़े चला आ रहा है, उसने जोर से उस लुटेरें से अपना हाथ उसके हाथों से दात गड़ा उसके हाथ को झटक कर सामने वाले आदमी कि तरफ भागा और चिल्लाकर कहते हुये कि मुझे इस लुटेरें से बचाओ, इसके साथ वह उसके पास पहुच गया | वह सामने वाला तुरन्त खड़ा हो गया, और जोर से कड़क कर बोला क्या बात है, तुम इस बालक को क्यों परेशान कर रहे , और कहां इसको जबर जस्ती ले जा रहे हो, उसने लुटेंरें ने अपनी रिवाल्बर की नाल उस सामने वाले व्यक्ति की तरफ तान कर और उसकी आंखों पर टार्च की रौशनि मारते हुये बोला, तु इसका कौन है? साले चल निकल अपने रास्ते से नहीं तो तेरे सर का कचुमर के साथ चिथड़े उड़ा दुंगा| आर्यन तब रेल्वे लाईनों के पास से पत्थल कि गिट्टि उठा कर अपनी पुरी ताकत से उस लुटेरें के उस हाथ पर दे मारा जिसमें रिवाल्बर थी, पत्थल के जोर दार अघात से लुटेरें कि आह निकल गई, और रिवाल्बर उसके हाथ से छुट गई, जिसको सामने वाले कम्बल धारी आदमी ने चिते के समान फुर्ती से रिवाल्बर को लपक लिया, और लुटेरें कि तरफ तान कर ठीक उसके घुटने के निचे निसाना साध कर रिवाल्बर का घोड़ा तान दिया| वह लुटेरा कुछ समझ पाता उससे पहले गोली ने उसके पैर को छुती हुई दुर जा पड़ी| जिससे लुटेरा अत्यधिक भयभित हो कर अपना पैर सर पर रख कर बिजली सी फुर्ती के साथ रेल्वे लाइन को पार करके पिछे झाणियों से हो कर अरहर के खेत में भाग गया| अपनि रिवाल्बर छोड़ कर| वह कम्बल वाला आदमी सही समय पर आया और आर्यन कि अपनी सुझ-बुझ से उसकी जान बच गई| वह कम्बल वाला आदमी वास्तव में रेल्वे का टिकट मास्टर था| जो काफी सज्जन और बहादुर किस्म का साहसी और कमज़ोरों कि सहायता करने में अब्बल था| उसने पहले आर्यन से उसका नाम पता वगैरह और यां रात में आने का कारण पुछा,

आर्यन ने सब अपनी आप बिती बता कर उस आदमी के हृदय में अपने लिये सहानभुति प्रकट कर ली, बाद में वह स्टेशन मास्टर आर्यन को अपने साथ ले कर स्टेशन पर वापिस ले गया| और आर्यन को बताय कि यह ईलाका बहुत घटिया लोगों के आतंक से प्रभावित है यहां प्रायः तुम्हारें जैसे बालको का किडनैप कर के उनके अंगो की बिकृ कि जाती है , और उन्हें अपंग अन्धा, लुला, लंगड़ा करके महानगरों मे सड़पर बैठा कर भीख मगवाते है| तुम्हारा भाग्य बहुत अच्छा था कि मै सहि समय पर वहां आ गया , और तुमने बहादुरी का परिचय दे कर उसकी रिवाल्बर उसके हाथ से गिरा कर मेरी भी जान बचाई| नहीं तो तुम्हारे साथ मै भी खतरें में पड़ गया था| उस लुटेरे के चुंगुल में फसते-फसते बाल-बाल बच गया इसके लिये तुम्हारा और ईश्वर का बहुत-बहुत धन्यवाद और इसके लिए शुक्रगुजार रहुंगा| आर्यन रात को कहां जाये, वह बहुत मजबुर और बेसहारा था| उस समय रात्री में कोई कहीं जाने के लिए रेलगाणी भी उस स्टेशन से नहीं थी| वहां स्टेशन मास्टर को इस तरह लावारिस अजनबी लड़के को पाकर उस पर दया आ जाती है| और वह रात में अपने कम्बल के निचे आर्यन को रात बिताने के लिये जगह सोने के लिये दे देता है| शर्दि की वह भयावह रात आराम से कम्बल के सहारे गुजर जाती है| सुबह सुर्य उदय से पहले ही उठ कर अपने सफर पर आगे कि तरफ निकल पड़ता है, बिना स्टेशन मास्टर से मुलाकात किये ही, क्योंकि कुछ खास कहने के लिये उन दोनों के पास नहीं था|

रोज कि तरह आज भी धिरे-धिरे आकाश में लालिमा के साथ सूर्य उदय हुआ, था लेकिन आज आर्यन के जीवन में एक नया अध्याय जुड़ गया जिसने उसे थोड़ा और अधिक प्रौढ़ कर दिया, वह थोड़ा और बड़ा बन गया, समय ने समय से पहले जीवन के कटु अनुभवों के संग्रह में आज एक नया बिरला किस्म कि अनुभूती का नवीन अध्याय जुड़ गया|

आज फिर एक पवित्र मेरी बहुत घनिष्ट आत्मा शरिर छोण कर अनन्त आकाश में बिलिन हो गई, ऐसा क्यों हो रहा है, इस जगत में इसका उत्तर यह हो सकता है कि यह जगत का अपना प्राकृतिक स्वभाव है| यह बिमारी जीवन की बहुत घातक है जो धीरे-धीरे अन्दर ही अन्दर से पुरी शरीर को, दिमक जिस तरह मिट्टी को चाल कर उसको पूर्ण रुपेण रुपान्तरित कर देता है| ठीक इसी प्रकार से इस बिमारी के सुक्ष्म किड़े है जो मनुष्य शरीर को बिल्कुल जर्जर करके हमेंशा-हमेंशा के लिये उसके अस्तित्व का सर्व नाष करके ही दम लेते है| ऐसा ही कुछ हमारे साथ भी हो रहा है| हमारी शरिर भी इसी तरह लड़-लड़ कर एक दिन अपना सारा हथियार डाल देगी और मृत्यु के आगोश में हमेंशा-हमेंशा के बिलिन हो जायेगी| वह दिन एक-एक दिन पास ही आ रहा है यह कितना यथार्थ और कितना नग्न कड़वा सत्य है|

ओ३म् स पर्यागाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरँ्शुद्धमपापविद्धम् ।

कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्य दधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ।।१।। -यजु० अ० ४०। मं० ८।।
ईश्वर की स्तुति-वह परमात्मा सब में व्यापक, शीघ्रकारी और अनन्त बलवान् जो शुद्ध, सर्वज्ञ, सब का अन्तर्यामी, सर्वोपरि विराजमान, सनातन, स्वयंसिद्ध, परमेश्वर अपनी जीवरूप सनातन अनादि प्रजा को अपनी सनातन विद्या से यथावत् अर्थों का बोध वेद द्वारा कराता है। यह सगुण स्तुतिअर्थात् जिस-जिस गुण से सहित परमेश्वर की स्तुति करना वह सगुण; (अकाय) अर्थात् वह कभी शरीर धारण व जन्म नहीं लेता, जिस में छिद्र नहीं होता, नाड़ी आदि के बन्धन में नहीं आता और कभी पापाचरण नहीं करता, जिस में क्लेश, दुःख, अज्ञान कभी नहीं होता, इत्यादि जिस-जिस राग, द्वेषादि गुणों से पृथक् मानकर परमेश्वर की स्तुति करना है वह निर्गुण स्तुति है। इस से फल यह है कि जैसे परमेश्वर के गुण हैं वैसे गुण, कर्म, स्वभाव अपने भी करना। जैसे वह न्यायकारी है तो आप भी न्यायकारी होवे। और जो केवल भांड के समान परमेश्वर के गुणकीर्तन करता जाता और अपने चरित्र नहीं सुधारता उसका स्तुति करना व्यर्थ है|

संसार का बहुत कड़वा अनुभव आर्यन को जब होना प्रारम्भ होता है तो वह अपने हाथ खड़े करके बिल्कुल मौन हो जाता है| आर्यन रेल्वे स्टेशन छोड़ने के बाद जब सड़क पर पहुचता है, तो उसे अपने मामा घर कि तरफ जाने के लिये सर्व प्रथम एक ट्रैक्टर मिलता है, वह उसको हाथ देकर रेल्वे फाटक पर रोकता है, और ट्रैक्टर चालक को अपने साथ ले चलने के लिये अनुरोध करता है वह चालक उस पर अनुग्रह करके अपने बगल वाली सिट पर बैठने का संकेत करता है जहां आर्यन बैठ जाता है| चालक ट्रैक्टर को आगे बढ़ा देता है, उसके साथ एक और पास कि सवारी भी उस चालक के बगल में बैठा रहता है| वह दोनों आर्यन से बात करते है| वह दोनों जब आर्यन से बात किया तो उन्हें ज्ञात हुआ कि आर्यन के पास एक भी पैसा नहीं है| तो उन दोनों ने अपने पास कुछ एक रुपया आर्यन को आगे के लिये किराये के लिये दिया, जिससे वह अपने मामा के घर आसानी से पहुंच जाये| क्योंकि वह दोनों ज्यादा दुर नहीं जाने वाले थे| कुछ दस एक किलोमिटर जाने पर उन दोनों व्यक्तियों ने एक ट्रैक्टर चालक और उसके साथ का दूसरा अजनबी आदमी ने आर्यन को कहा कि तुम यहां उतर कर उधर बस अण्डे पर जाकर खड़े हो जाओ, अभी बस आयेगी तुम उसमें बैठ जाना जिससे तुम अपने मामा के गांव पहुच जाओगे| आर्यन वही किया वह ट्रैक्टर से उतर कर बस अण्डे पर जाकर खड़ा हो गया| वहां पर कुछ एक सवारिया पहले से बस का इन्तजार कर रही थी, थोड़ी समय में बस आगई और उसमें आर्यन समेत सभी सवारी बैठ गये| बस कन्डेक्टर ने आर्यन से किराया मागां तो उसने वही पैसा किराये के रुप में दे दिया, जो उसको पहले दो अजनबियों ने दिया था| इस तरह से आर्यन अपने मामा के यहां पहुच गया, जहां लोग उसको देख कर बहुत प्रशन्न हुये| आर्यन ने वहां जाकर अपने नाना नानी से झुठ बोला कि आप दोनों को मेरे पिता यशवन्त ने बुलाया

कुम्भ मेला लगा है लोग दूर-दूर से आकर स्नान कर रहें है, आप लोग भी आ कर यहां संगम में स्नान कर लिजिये जीवन में ऐसा मौका बहुत कम ही मिलता है| यह सुन कर आर्यन के नाना नानी बहुत खुस हुये और कुछ एक दिन के बाद वह तैयार हो गये आर्यन के साथ चलने के लिये| आर्यन सारा रास्ता पहले जान चुका था वह अपने साथ उन दो बृद्ध स्त्री पुरुष अपने नाना नानी और उनके एक बड़े लड़के गुड्डु को अपने साथ लेकर पुनः उसी रेल्वेस्टेशन पर आया, जहां पर उसका उस लुटेंरे से सामना हुआ था| यह बात उसने अपने नाना नानी को नहीं बताया था| रेल गाड़ि काफी देर से आई, उस समय कुम्भ मेले कि भयंकर भीड़ चल रही थी, जिससे रेलगाड़ी में बहुत अधिक भीड़ थी और उसमें पैर रखने कि भी जगह नहीं थी| लोग उपर निचे सब जगह जानवरों भेड़ बकरियों की तरह भरे पड़े थे| जिसमें बड़ी मुस्किल और मसक्कत के बाद आर्यन और उसके नानी नाना और उससे कुछ एक साल बड़ा उसके मामा का लड़का गुड्डु सवार हो पाये| और कुछ एक दो घन्टों के बाद वह सब संगम नगरी इलाहाबाद पहुत गये और बड़े मुस्किल से रेलगाड़ी में से आपात कालिन खिड़की से कुद कर आर्यन बाहर निकला और बाद में उन लोगों को और उनके सामान को बाहर निकाला, उस समय भयंकर दिल को ठंडा कर देने वाली शर्दी थी किसी तरह रात्री के समय वहीं स्टेशन पर भिड़ भाड़ रात गुजारा, और सुबह रिक्सा कर के आर्यन अपने नाना नानी और उनके नाती को साथ लेकर अपने उस घर पहुंचा जहां यशवन्त किराये के कमरें मे रहता था, अचानक जब आर्यन इन लोगों के साथ पहुचा तो यशवन्त उस समय सुबह के ७ बज रहे थे वह बहुत आश्चर्य चकित हुआ सब को देख कर लेकिन मन मारक रह गया आर्यन से कुछ नहीं बोला| श्यामा ने अपने मां बाप को देख कर बहुत खुस हुई और उसने मां बाप का यथा संभव स्वागत सत्कार किया| यशवन्त कुछ देर में ही वहां से निकल गया क्योंकी उसे सुबह-शाम रेलगाड़ी का सफर करना पड़ता था , वह अपने मेडिकल स्टोर पर जाने के लिये जो वहां से ६० किलोमिटर कि दूरी पर था|

यशवन्त रोज सुबह निकल जात और रात्री के दस बजे के बाद रोज आत यहीं उसकी दिन चर्या बन गई थी, जब तक आर्यन के नानी उसके साथ उसके कमरे पर रहे उसको पुरी छुट मिलती रही, क्योंकी यशवन्त उन लोगों के सामने किसी को कुछ नही बोलता और नशा करके घर परनहीं आता वह अपने शास शसुर के सामने स्वयं बहुत अच्छा प्रस्तुत करता वह तो एक नम्बर का ढोंगी और पाखंडी तो था ही, आर्यन अपने इस समय का खुब अच्छी तरह उपयोग करता और खुब मस्ती धमाल चौकड़ि अपने मामा के लड़के साथ मिल कर करता, और कई दिन खुब अपने नाना नानी को कुम्भ नगरी में भ्रमण करया इसके साथ संगम में स्नान भी कराया, दिन भर सैर- सपाटा मिल कर खुब किया करते तरह की खरीद दारी के साथ खाना पिना मटर गस्ती साधु-संतों अक्खड़ फक्कड़ों के साथ समागम का आनन्द लुटते रहे| आर्यन के नाना श्यामा से आर्यन के बारें में खुब उसकी

बड़ाई और उसके बुद्धमानी के किस्से कहानी सुना कर सब हसीं खुसी से लोट-पोट हो जाते थे| एक बार आर्यन के नाना ने श्यामा से कहा कि आर्यन के पैरों में चक्र है यह दिन भर ईतना घुमता है बिना थके, श्यामा ने कहा यह ऐसा ही यह बहुत घूमता यह बहुत घुमक्कड़ स्वभाव का है, इसके लिये इसको बहुत दण्ड यशवन्त कि तरफ से मिलता है फिर भी यह सुधरता नहीं हम क्या करें| आर्यन के नाना अपनी बेटी श्यामा को समझाते हुये कहा कोई बात नहीं है अभी बालक है बड़ा होते ही सब समझ जायेगा| इसके लिये ज्यादा दण्ड ठिक नहीं है यही बात यशवन्त को भी समझाया गया, यशवन्त न कहा आपठीक कहते है, और उनके सामने आर्यन को न मारने के लिये आश्वासन दिया|

असतो मा सद् गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्माऽमृतं गमयेति।।

-शतपथ ब्रा०।।

हे परमगुरो परमात्मन्! आप हम को असत् मार्ग से पृथक् कर सन्मार्ग में प्राप्त कीजिये। अविद्यान्धकार को छुड़ा के विद्यारूप सूर्य को प्राप्त कीजिये और मृत्यु रोग से पृथक् करके मोक्ष के आनन्दरूप अमृत को प्राप्त कीजिये। अर्थात् जिस-जिस दोष वा दुर्गुण से परमेश्वर और अपने को भी पृथक् मान के परमेश्वर की प्रार्थना की जाती है वह विधि निषेधमुख होने से सगुण, निर्गुण प्रार्थना। जो मनुष्य जिस बात की प्रार्थना करता है उस को वैसा ही वर्त्तमान करना चाहिये अर्थात् जैसे सर्वोत्तम बुद्धि की प्राप्ति के लिये परमेश्वर की प्रार्थना करे उस के लिये जितना अपने से प्रयत्न हो सके उतना किया करे। अर्थात् अपने पुरुषार्थ के उपरान्त प्रार्ॎथना करनी योग्य है।

ऐसी प्रार्थना कभी न करनी चाहिये और न परमेश्वर उस को स्वीकार करता है कि जैसे हे परमेश्वर! आप मेरे शत्रुओं का नाश, मुझ को सब से बड़ा, मेरी ही प्रतिष्ठा और मेरे आधीन सब हो जायँ इत्यादि, क्योंकि जब दोनों शत्रु एक दूसरे के नाश के लिए प्रार्थना करें तो क्या परमेश्ॎवर दोनों का नाश कर दे ? जो कोई कहै कि जिस का प्रेम अधिक उस की प्रार्थना सफल हो जावे । तब हम कह सकते हैं कि जिस का प्रेम न्यून हो उसके शत्रु का भी न्यून नाश होना चाहिये।

ऐसी मूर्खता की प्रार्थना करते-करते कोई ऐसी भी प्रार्थना करेगा-हे

परमेश्वर! आप हम को रोटी बना कर खिलाइये, मकान में झाड़ू लगाइये, वस्त्र धो दीजिये और खेती बाड़ी भी कीजिये। इस प्रकार जो परमेश्वर के भरोसे आलसी होकर बैठे रहते हैं वे महामूर्ख हैं क्योंकि जो परमेश्वर की पुरुषार्थ करने की आज्ञा है उस को जो कोई तोड़ेगा वह सुख कभी न पावेगा। जैसे-

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतँॎसमाः ।।२।। य० अ० ४० । मं० २

परमेश्वर आज्ञा देता है कि मनुष्य सौ वर्ष पर्यन्त अर्थात् जब तक जीवे तब तक कर्म करता हुआ जीने की इच्छा करे, आलसी कभी न हो। देखो! सृष्टि के बीच में जितने प्राणी हैं अथवा अप्राणी हैं, वे सब अपने-अपने कर्म और यत्न करते ही रहते हैं। जैसे पिपीलिका आदि सदा प्रयत्न करते, पृथिवी आदि सदा घूमते और वृक्ष आदि सदा बढ़ते घटते रहते हैं वैसे यह दृष्टान्त मनुष्यों को भी ग्रहण करना योग्य है। जैसे पुरुषार्थ करते हुए पुरुष का सहाय दूसरा भी करता है वैसे धर्म से पुरुषार्थी पुरुष का सहाय ईश्वर भी करता है। जैसे काम करने वाले पुरुष को भृत्य करते हैं और अन्य आलसी को नहीं। देखने की इच्छा करने और नेत्र वाले को दिखलाते हैं अन्धे को नहीं। इसी प्रकार परमेश्वर भी सब के उपकार करने की प्रार्थना में सहायक होता है हानिकारक कर्म में नहीं। जो कोई गुड़ मीठा है ऐसा कहता है उस को गुड़ प्राप्त वा उस को स्वाद प्राप्त कभी नहीं होता और जो यत्न करता है उस को शीघ्र वा विलम्ब से गुड़ मिल ही जाता है।

ओ३म् चौथा अध्याय समाप्त

५ ज्वलन्त आत्मा कि चिन्गारी

समाधिनिर्धूतमलस्य चेतसो निवेशितस्यात्मनि यत्सुखं भवेत्।

न शक्यते वर्णयितुं गिरा तदा स्वयं तदन्तःकरणेन गृह्यते।।१।।

यह उपनिषत् का वचन है।

जिस पुरुष के समाधियोग से अविद्यादि मल नष्ट हो गये हैं, आत्मस्थ होकर परमात्मा में चित्त जिस ने लगाया है उस को जो परमात्मा के योग का सुख होता है वह वाणी से कहा नहीं जा सकता क्योंकि उस आनन्द को जीवात्मा अपने अन्तःकरण से ग्रहण करता है। उपासना शब्द का अर्थ समीपस्थ होना है। अष्टांग योग से परमात्मा के समीपस्थ होने और उस को सर्वव्यापी, सर्वान्तर्यामीरूप से प्रत्यक्ष के लिये जो-जो काम करना होता है वह-वह सब करना चाहिये। अर्थात्-

तत्रऽहिंसासत्याऽस्तेयब्रह्मचर्याऽपरिग्रहा यमाः।।

इत्यादि सूत्र पातञ्जलयोगशास्त्र के हैं।

जो उपासना का आरम्भ करना चाहै उस के लिये यही आरम्भ है कि वह किसी से वैर न रक्खे, सर्वदा सब से प्रीति करे। सत्य बोले। मिथ्या कभी न बोले। चोरी न करे। सत्य व्यवहार करे। जितेन्द्रिय हो। लम्पट न हो और निरभिमानी हो। अभिमान कभी न करे। ये पांच प्रकार के यम मिल के उपासनायोग का प्रथम अंग है।

शौचसन्तोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः।। -योग सू०।।

राग द्वेष छोड़ भीतर और जलादि से बाहर पवित्र रहै। धर्म से पुरुषार्थ करने से लाभ में न प्रसन्नता और हानि में न अप्रसन्नता करे। प्रसन्न होकर आलस्य छोड़ सदा पुरुषार्थ किया करे। सदा दुःख सुखों का सहन और धर्म ही का अनुष्ठान करे, अधर्म का नहीं। सर्वदा सत्य शास्त्रें को पढ़े पढ़ावे। सत्पुरुषों का संग करे और 'ओ३म्' इस एक परमात्मा के नाम का अर्थ विचार करे नित्यप्रति जप किया करे। अपने आत्मा को परमेश्वर की आज्ञानुकूल समर्पित कर देवे। इन पांच प्रकार के नियमों को मिला के उपासनायोग का दूसरा अंग कहाता है। इसके आगे छः अंग योगशास्त्र वा ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका१ में देख लेवें। जब उपासना करना चाहैं तब एकान्त शुद्ध देश में जाकर, आसन लगा, प्राणायाम कर बाह्य विषयों से इन्द्रियों को रोक, मन को नाभिप्रदेश में वा हृदय, कण्ठ, नेत्र, शिखा अथवा पीठ के मध्य हाड़ में किसी स्थान पर स्थिर कर अपने आत्मा और परमात्मा का विवेचन करके परमात्मा में मग्न हो कर संयमी होवें। जब इन साधनों को करता है तब उस का

आत्मा और अन्तःकरण पवित्र होकर सत्य से पूर्ण हो जाता है। नित्यप्रति ज्ञान विज्ञान बढ़ाकर मुक्ति तक पहुंच जाता है। जो आठ पहर में एक घड़ी भर भी इस प्रकार ध्यान करता है वह सदा उन्नति को प्राप्त हो जाता है। वहां सर्वज्ञादि गुणों के साथ परमेश्वर की उपासना करनी सगुण और द्वेष, रूप, रस, गन्ध, स्पर्शादि गुणों से पृथक् मान, अतिसूक्ष्म आत्मा के भीतर बाहर व्यापक परमेश्वर में दृढ़ स्थित हो जाना निर्गुणोपासना कहाती है।

आर्यन के नाना अयोद्धा प्रशाद अपने गृह पर जाने के लिये उद्दत हुये, उसके यहां से यद्यपि वह उसके मेहमान नवाजी से बहुत प्रशन्न हुये| वह काफि बृद्ध हो चुके थे और बहुत अधिक आर्यन को प्रिय थे आर्यन उन्हें और कुछ दिनों तक अपने यहां पर रोकना चाहा, लेकिन उन्होने कहा हमारे घर पर हमारी बहुत जरुरत है मुझे जाना बहुत अधिक आवश्यकता है | इस तरह से आर्यन अपने बृद्ध नाना नानी और अपने मित्र गुड्डु को उनके घर पर पहुचाने के लिये जाता है| तभी रास्ते में एक घटना घटती है, जैसा कि हम आर्यन के बारे में जानते है वह बहुत शरारती और नटखट किस्म का बालक है उसमे एक खुबी और है वह किसी की बात नहीं मानता है, साधारणतः ऐसा ही वह रेल गाणी में करता है, अपने नाना नानी के बहुत कहने पर भी वह उनके साथ नहीं बैठता है, इनको अकेला छोड़ कर स्वयं अपने मामा के लड़के को लेकर उस बोगी से जिसमें उसके नाना नानी बैठे थे| उतर कर दूसरी किसी बोगी में जाकर बैठ गया और उनसे कहा कि जहां उतरना है वहां पर आ कर वह उनको उतारेगा| लेकिन जिस बोगी में वह बैठा उसमें के किसी सवारी से यह ज्ञात हुआ कि जिस स्टेशन पर आर्यन और उसके नाना नानी को उतरना है वहां पर यह रेलगाणी नही रुक्ती है यह सुपर फास्ट एक्सप्रेस है, वहां जाना है तो आगे आने वाले स्टेशन पर उतर कर वहां से किसी पैसेन्जर को पकड़ लो| यह सुन कर आर्यन का सारा दिमाग खराब होगया, उसने मामा के लड़के गुड्डु को कहा हम अगले स्टेशन पर उतर कर वहां नाना नानी को भी उतार लेगें उसने कहा ठीक है| अगला स्टेशन आया तो दोनों निचे प्लेटफार्म पर उतर गये, लेकिन वह बोगी भुल गये थे जिसमें उसके नाना बैठे थे, वह दोनों बोगियों में तलासने लगे और निचे से बुलाने लगे , वह दोनों उन बृद्धों को तलास पाते कि उससे पहले वह रेलगाणी सायरन के साथ वहां से निकल पड़ी और आर्यन गुड्डु दोनों रेलवे स्टेशन पर मुहं लटका कर मन मसोट कर रह गये| आर्यन ने अपने साथी गुड्डु को बहुत समझाया और कहा कि चलों वह किसी तरह घर पर पहुंच जायेंगे|

जब दोनों रेलवे स्टेशन पर अकेले पिछे छुट गये, तब आर्यन और उसका मित्र वह दोनों रेलवे लाईन कि पटरियों को पकड़ कर वहां से आगे कि तरफ पैदल हि चल पड़े , इस आशा में कि वह पैदल ही अगले स्टेशन पर पहुंच जायेंगे, लेकिन यह उन दोनों कि भुल थी, अगला रेलवे स्टेशन वहां से काफी दूर था फिर भी वह बिना रुके डुबे मन के साथ निराश उदाश भाव से निरन्तर आगे ही आगे

चलते रहे| उनकी निराशा निरन्तर बढ़ती जा रही थी उसे वह अपने -अपने शब्दों में व्यक्त करने में पूर्णतया असमर्थ स्वयं को पारहे थे| जैसे-जैसे शाम हो रही थी उनके चिन्ता की अत्यधिक रेखायें खिचती जा रही थी| उनका दिल अन्दर ही अन्दर से घुटता जा रहा था जैसे वह किसी अदृश्य नदी के पानी में डुब रहें है और उनका दम घुट रहा है| क्योंकी उनके पास आगे किराये के लिये पर्याप्त रुपया भी नहीं है यह भी उनके चिन्ता का प्रमुख कारण है| और अभी उनका घर काफी दूर है| आर्यन अपनी आंखे निचे रेलवे लाईनों के मध्य गड़ाये तेजी से कदम बढ़ाता इसी उधेड़-बुन चिन्तन में खोया कि तभी अचानक उसकी निगाह रेलवे लाईन के बिच में पड़े एक पुराने २० कि नोट पर पड़ता है, जिसे आर्यन लपक कप उठा लेता है| रुपया मिलते हि उसका दिमाग बहुत तेज कार्य करता है वह तुरन्त भगवान को धन्यवाद देता है| उस समय उनके लिये २० बिस रुपया बहुत बड़ी रकम थी, जो उन पर आने वाली भयानक किसी जंगली घटना से उनकी जान बच गई, क्योंकी अभी तक पिछली बार मिले उस लुटेरें को नहीं भुल पाया था कि किस प्रकार वह स्वयं को उसके जाल से बचाया था| यह सब विचार आर्यन के दिमाग में गुंज रहे थे, जब रुपया उसके हाथ में आ गया तो उसने अपने पिछे चल रहे अपने मित्र मामा के लड़के को बोला कि चलो यहा से सिधा सड़क पर चलते है वहां से कोई दुसरा साधन पकड़ कर आगे चलते है| जिसकी हालत चलते-चलते थक हार कर खस्ता हो रहा था| यह सुन कर उदाश चेहरें के साथ हल्के से मुस्कुराया, गुड्डु जो दुबला पतला १३-१४ एक साल का लड़का आर्यन से थोड़ा बड़ा था लम्बाई में भी उसने कहा ठीक है| वहां रेलवे लाईन के ठिक बगल में एक किसान अपने खेत में कुछ काम कर रहा था, आर्यन ने उस आदमी से पुछा क्यों भईया यहां से सड़क पर जाने के लिये रास्ता किधर से है उसको बताने का थोड़ा कष्ट करेगें, यह सुन कर वह आदमी जो अपने घुटने पर झुका था वह थोड़ा सिधा अपने फावड़े को टेकते हुये खड़ा औऱ बहुत गम्भिर मुद्रा में हो कर आर्यन को देखा फिर उस अधेड़ उम्र के आदमी ने कहा यहांसे सिधा सामने एक रास्ते कि तरफ संकेत करते हुये कहा इस रास्ते को पकड़ कर सिधा उत्तर कि तरफ चलते जाओं आगे जीटी रोड मिलेगी वहां सभी जगह का साधन मिल जायेगा| आर्योन ने उस किसान को धन्यवाद देकर उसके द्वारा बताये गये रास्ते पर अपने मित्र के साथ आगे बढ़ गया| और निरन्तर लग-भग २०-२५मिनट पर वह जी टी रोड पर पहुंच गये, वहा कुछ मिनट के अन्तराल पर एक साधन मिला जिस पर वह दोनों बैठ कर आगे के लिये प्रस्थान किया|

१– ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के उपासना विषय में इनका वर्णन है।

इसका फल-जैसे शीत से आतुर पुरुष का अग्नि के पास जाने से शीत निवृत्त हो जाता है वैसे परमेश्वर के समीप प्राप्त होने से सब दोष दुःख छूट कर परमेश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव के सदृश

जीवात्मा के गुण, कर्म, स्वभाव पवित्र हो जाते हैं, इसलिये परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना अवश्य करनी चाहिये। इस से इस का फल पृथक् होगा परन्तु आत्मा का बल इतना बढ़ेगा, कि पर्वत के समान दुःख प्राप्त होने पर भी न घबरायेगा और सब को सहन कर सकेगा। क्या यह छोटी बात है? और जो परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना नहीं करता वह कृतघ्न और महामूर्ख भी होता है। क्योंकि जिस परमात्मा ने इस जगत् के सब पदार्थ जीवों को सुख के लिये दे रक्खे हैं, उस का गुण भूल जाना, ईश्वर ही को न मानना, कृतग्धन्ता और मूर्खता है।

(प्रश्न) जब परमेश्वर के श्रोत्र नेत्रदि इन्द्रियां नहीं हैं फिर इन्द्रियों का काम कैसे कर सकता है?

(उत्तर)

अपाणिपादो जवनो ग्रहीता पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः ।

स वेत्ति विश्वं न च तस्यास्ति वेत्ता तमाहुरग्रयं पुरुषं पुराणम्।।१।।

यह उपनिषत् का वचन है।

परमेश्वर के हाथ नहीं परन्तु अपनी शक्तिरूप हाथ से सब का रचन, ग्रहण करता, पग नहीं परन्तु व्यापक होने से सब से अधिक वेगवान्; चक्षु का गोलक नहीं परन्तु सब को यथावत् देखता; श्रोत्र नहीं तथापि सब की बातें सुनता, अन्तःकरण नहीं परन्तु सब जगत् को जानता है और उस को अवधिसहित जाननेवाला कोई भी नहीं। उसी को सनातन, सब से श्रेष्ठ सब में पूर्ण होने से पुरुष कहते हैं। वह इन्द्रियों और अन्तःकरण के विना अपने सब काम अपने सामर्थ्य से करता है।

(प्रश्न) उस को बहुत से मनुष्य निष्क्रिय और निर्गुण कहते हैं?

(उत्तर)

न तस्य कार्यं करणं च विद्यते न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते।

परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च।।१।।

यह उपनिषत् का वचन है।

परमात्मा से कोई तद्रूप कार्य और उस को करण अर्थात् साधकतम दूसरा अपेक्षित नहीं। न कोई उस के तुल्य और न अधिक है। सर्वोत्तमशक्ति अर्थात् जिस में अनन्त ज्ञान, अनन्त बल और अनन्त क्रिया है वह स्वाभाविक अर्थात् सहज उस में सुनी जाती है। जो परमेश्वर निष्क्रिय होता तो जगत् की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय न कर सकता। इसलिये वह विभु तथापि चेतन होने से उस में क्रिया भी

है।

(प्रश्न) जब वह क्रिया करता होगा तब अन्तवाली क्रिया होती होगी वा अनन्त?

(उत्तर) जितने देश काल में क्रिया करनी उचित समझता है उतने ही देश काल में क्रिया करता है। न अधिक न न्यून, क्योंकि वह विद्वान् है।

(प्रश्न) परमेश्वर अपना अन्त जानता है वा नहीं?

(उत्तर) परमात्मा पूर्ण ज्ञानी है। क्योंकि ज्ञान उस को कहते हैं कि जिस से ज्यों का त्यों जाना जाय। अर्थात् जो पदार्थ जिस प्रकार का हो उसको उसी प्रकार जानने का नाम ज्ञान है। जब परमेश्वर अनन्त है तो उस को अनन्त ही जानना ज्ञान, उस के विरुद्ध अज्ञान अर्थात् अनन््त को सान्त और सान्त को अनन्त जानना भ्रम कहाता है। 'यथार्थदर्शनं ज्ञानमिति' जिस का जैसा गुण, कर्म, स्वभाव हो उस पदार्थ को वैसा जानकर मानना ही ज्ञान और विज्ञान कहाता है और उस से उलटा अज््ञान। इसलिये-

क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः।। -योगसू०।।

जो अविद्यादि क्लेश, कुशल, अकुशल, इष्ट, अनिष्ट और मिश्र फलदायक कर्मों की वासना से रहित है वह सब जीवों से विशेष ईश्वर कहाता है।

(प्रश्न) ईश्वरासिद्धेः।।५।।

प्रमाणाभावान्न तत्सिद्धिः।।२।।

सम्बन्धाभावान्नानुमानम्।।३।। -सांख्य सू०।।

प्रत्यक्ष से घट सकते ईश्वर की सिद्धि नहीं होती।।१।।

क्योंकि जब उस की सिद्धि में प्रत्यक्ष ही नहीं तो अनुमानादि प्रमाण नहीं घट सकते।।२।।

और व्याप्ति सम्बन्ध न होने से अनुमान भी नहीं हो सकता। पुनः प्रत्यक्षानुमान के न होने से शब्दप्रमाण आदि भी नहीं घट सकते। इस कारण ईश्वर की सिद्धि नहीं हो सकती।।३।।

(उत्तर) यहां ईश्वर की सिद्धि में प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं है और न ईश्वर जगत् का उपादान कारण है। और पुरुष से विलक्षण अर्थात् सर्वत्र पूर्ण होने से परमात्मा का नाम पुरुष और शरीर में शयन करने से जीव का भी नाम पुरुष है।

क्योंकि इसी प्रकरण में कहा है-

प्रधानशक्तियोगाच्चेत्संगापत्तिः।।१।।

सत्तामात्रच्चेत्सर्वैश्वर्य्यम्।।२।।

श्रुतिरपि प्रधानकार्य्यत्वस्य।।३।। -सांख्य सू०।।

यदि पुरुष को प्रधानशक्ति का योग हो तो पुरुष में संगापत्ति हो जाय।

अर्थात् जैसे प्रकृति सूक्ष्म से मिलकर कार्यरूप में संगत हुई है वैसे परमेश्वर भी स्थूल हो जाये। इसलिये परमेश्वर जगत् का उपादान कारण नहीं किन्तु निमित्त कारण है।।१।।

जो चेतन से जगत् की उत्पत्ति हो तो जैसा परमेश्वर समग्रैश्वर्ययुक्त है वैसा संसार में भी सर्वैश्वर्य का योग होना चाहिये, सो नहीं है। इसलिये परमेश्वर जगत् का उपादान कारण नहीं किन्तु निमित्त कारण है।।२।।

क्योंकि उपनिषद् भी प्रधान ही को जगत् का उपादान कारण कहती है।।३।। जैसे-

अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां बह्वीः प्रजाः सृजमानां स्वरूपाः।।

-यह श्वेताश्वतर उपनिषत् का वचन है ।

जो जन्मरहित सत्त्व, रज, तमोगुणरूप प्रकृति है वही स्वरूपाकार से बहुत प्रजारूप हो जाती है अर्थात् प्रकृति परिणामिनी होने से अवस्थान्तर हो जाती है और पुरुष अपरिणामी होने से वह अवस्थान्तर होकर दूसरे रूप में कभी नहीं प्राप्त होता, सदा कूटस्थ निर्विकार रहता है और प्रकृति सृष्टि में सविकार और प्रलय में निर्विकार रहती है। इसीलिये जो कोई कपिलाचार्य को अनीश्वरवादी कहता है जानो वही अनीश्वरवादी है, कपिलाचार्य नहीं तथा मीमांसा का धर्म धर्मी से ईश्वर। वैशेषिक और न्याय भी 'आत्म' शब्द से अनीश्वरवादी नहीं। क्योंकि सर्वज्ञत्वादि धर्मयुक्त और 'अतति सर्वत्र व्याप्नोतीत्यात्मा' जो सर्वत्र व्यापक और सर्वज्ञादि धर्मयुक्त सब जीवों का आत्मा है उस को मीमांसा वैशेषिक और न्याय ईश्वर मानते हैं।

9467557954, 7084768943